गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, राजस्थान से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

Impact Factor : 4.553

ISSN : 2321-8037
सितम्बर-अक्टूबर 2023
Vol. 11, Issue 9-10

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

संपादक :
डॉ. रेखा सोनी

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed International Refereed Journal

वर्ष : 11 | अंक : 9 – 10 (1) | सितम्बर – अक्तूबर : 2023 | आईएसएसएन : 2321 – 8037

संस्थापक सम्पादिका :

स्मृति शेष डॉ. विश्वकीर्ति

संरक्षक :

हरविन्द्र कमल, पटियाला

मार्गदर्शन :

डॉ. राजेन्द्र गोदारा
परीक्षा नियंत्रक,
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

इन्जीनियर सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड कम्युनिकेशन, सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्रेष्ठ चौधरी
सीनियर मैनेजर, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, साहिबजादा अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब।

प्रधान सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)

सम्पादक :

डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि.,
श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय,
भिवानी (हरियाणा)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर
(राजस्थान)

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

ले. डॉ. एम. गीताश्री
डिप्टी डीन एकेडमिक
विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग,
बीएमएस महिला कॉलेज, स्वायत्त,
बसवनगुडी, बेंगलुरु

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय,
हिसार।

प्रो. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
सहायक आचार्य भूगोल, एस.एन.डी.बी.
राजकीय महाविद्यालय, नोहर, राज.

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
तोशाम (हरियाणा)

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर
(राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुकेश चंद
राजकीय महाविद्यालय, बाडी,
धौलपुर, राजस्थान।

प्रो. कौशल्या कालोहिया,
पॅनसिल्वेनिया, यूएसए

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, टांटिया, वि.वि.

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

कानूनी सलाहकार : **डॉ. रामफल दलाल** एडवोकेट, भिवानी
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट, पटियाला।

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग**, एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज**, पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed International Refereed Journal

(Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी–127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 4.553

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	7–7
2.	महाराजा रणजीत सिंह की शासन व्यवस्था	Dr. Vikram Singh Deol	8-10
3.	विद्यार्थियों के शैक्षिक समायोजन में मूल्य परक शिक्षा की भूमिका	रिंकी सत्संगी, सोनिया सागर	11–15
4.	तकनीकी पाठों का अंग्रेजी-हिंदी अनुवाद (English-Hindi Translation of Technical Texts)	डॉ. रणजीत भारती	16–20
5.	साहित्य और सिने-कला में रचनात्मक द्वन्द! (साहित्य और सिनेमा)	कुमार नीरज	21–25
6.	महात्मा गाँधी, 'नवजीवन' विचार पत्र और महिला सशक्तिकरण	संध्या इन्द्रवदनभाईकार	26-31
7.	भारतीय शिक्षा, धर्म और संस्कृति में स्तूप	डॉ. नितेश चौधरी	32–36
8.	दलित विमर्श : अवधारणा एवं स्वरूप	सुमन कुमारी	37–42
9.	इक्कीसवीं सदी में पर्यावरण चिंतन	डॉ. कुमार अभिषेक	43–46
10.	राजस्थानी फिल्मों के महत्वपूर्ण पहलू	डॉ. अशोक कुमार द्विवेदी "शान बनारस"	47–49
11.	NEP 2020 में स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक दर्शन	डॉ. गंगा सिंह, नंदन सिंह	50–53
12.	NEP 2020 और महिला शिक्षा : महत्व व चुनौतियां	पूजा पांडे	54–57
13.	Smart Cities Mission in India : A Study	RAHUL SAXENA	58-62
14.	विकलांग बच्चों की शिक्षा और नई शिक्षा नीति 2020	डॉ. अंजना बसेड़ा, गंगा सिंह	63–66
15.	विश्वपटल पर सोशल मीडिया में हमारी हिन्दी का बढ़ता प्रचार	प्रीति चौहान	67–70
16.	सतत विकास और प्रकृति	डॉ. मूर्ति मलिक	71–77
17.	राजी सेठ का कथा साहित्य – विकलांग वेदना का दस्तावेज	वनीता रानी, डॉ. सुनीता गुरूङ्ग	78–83

18.	व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं सार्वभौमिक न्याय तथा अद्वैत सिद्धांत एक वैचारिक दृष्टिकोण	सुभाष चंद्र शर्मा	84–88
19.	सिवाना एवं मोकलसर : ऐतिहासिक अध्ययन	दिनेश गहलोत	89–94
21.	पाश्चात्य परिप्रेक्ष्य में स्त्री चिंतन की परंपरा	आरती यादव	95–96
22.	चम्बल परियोजना की दांयी बांयी मुख्य नहरों का हाड़ौती प्रदेश की संस्कृति के विकास पर प्रभाव Impact of Right and left main Canals of Chambal Project on the development of Culture of Hadoti Region	Devendra Meena	97-101
23.	मध्यकालीन हिंदी काव्य में राष्ट्रीयता	छविन्दर कुमार	102–108
24.	पंचायती राज व्यवस्था में महिला सहभागिता	डॉ. विभा शर्मा	109–114
25.	लीलाधर जगूडी की कविता में मानव जीवन और प्रकृति	डॉ. बेबी सुमंगला पी.वी.	115–118
26.	वर्तमान परिवेश में मंत्र योग का महत्त्व	विकास कुमार कासनिया, डॉ. रामदेवा राम आलडिया	119–125

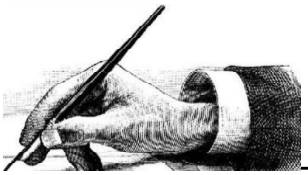

सम्पादक
डॉ. रेखा सोनी की कलम से..

गीना देवी शोघ संस्थान द्वारा प्रकाशित यह शोध पत्रिका आप सुधी पाठकों, शोधार्थियों, प्राध्यापको के सहयोग से पिछले 11 वर्षों से निरन्तर प्रकाशित हो रही है। बीच में कुछ समय प्रकाशन बाधित हुआ इस बारे में आप सभी जानते हैं। प्रकाशन बाधन का कारण आर्थिक, सामाजिक और महामारी रहा। महामारी के दौर में अनेक प्रकाशन बन्द हो गये थे कुछ पुनः प्रारम्भ हुए हैं, कुछ प्रयासरत्त हैं। बहुत सी पत्र–पत्रिकाएं आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण केवल ई/पीडीएफ रूप में प्रकाशित हो रही हैं। आपके सहयोग से संगम पत्रिका पुनः नियमित प्रकाशित हो रही है। पत्रिका ने विभिन्न विषयों पर बहुउपयोगी विशेषांक प्रकाशित कर अनुसंधान के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया है। जिसकी प्रशंसा शोधार्थियों व प्राध्यापकों द्वारा की जा रही है। हमारी प्रयास है कि भविष्य में इसी प्रकार से विशेषांक प्रकाशित कर अनुसंधान को गति प्रदान करते रहेंगे।

इस अंक में इतिहास, साहित्य, सिनेमा, शिक्षा, प्रकृति आदि विभिन्न विषयों पर उच्च कोटि के विद्वानों द्वारा उल्लेखित शोध आलेखों का प्रकाशन हमने किया है। डॉ. विक्रम सिंह दयोल महाराजा रणजीत सिंह की शासन व्यवस्था, डॉ. रणजीत भारती जी ने अपने आलेख के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि तकनीकी पाठों के अनुवाद में हिन्दी–अंग्रेजी के पाठों का उपयोग किस प्रकार से किया जा सकता है। डॉ. कुमार अभिषेक ने अपने लेख के माध्यम से पर्यावरण पर चिन्तन किया है। भारत सरकार द्वारा देश में नई शिक्षा नीति 2020 को लागू किया जा रहा है इस पर भी डॉ. गंगासिंह, नंदन सिंह, पूजा पाण्डे, डॉ. अंजना बसेरा जी ने अपनी लेखनी चलाई है। दिव्यांगजन की वेदना को समझाने का प्रयास वनिता रानी, डॉ. सुनीता गुरूड्.ग ने किया है। स्त्री चिन्तन, भारतीय संस्कृति, राष्ट्रीयता, योग, ग्रामीण जीवन के साथ–साथ कम्प्यूटर शिक्षा और भारत–नेपाल सुरक्षा पर भी रचनाकारों ने अपनी कलम चलाई है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के बारे में कृष्ण कुमार, डॉ. कृष्णकांत जी ने खोजपूर्ण जानकारियों अपने आलेख में प्रस्तुत की हैं। शारीरिक शिक्षा से स्वास्थ्य लाभ, पद लाभ और धन लाभ अर्जित किया जा सकता है यह तथ्य किसी से छुपा नहीं हैं। विभिन्न खेलों में खिलाड़ियों द्वारा स्वर्ण पदक, रजत पदक व कांस्य पदक आदि जीतकर लाये जाते हैं तो केन्द्र व राज्य सरकारें उन खिलाड़ियों को उनकी योग्यता अनुसार रोजगार एवं आर्थिक मदद कर उन्हें प्रोत्साहित करती हैं। इस अंक में अपनी लेखनी के माध्यम ने जिन लेखकों ने हमें सहयोग प्रदान किया है उन सभी का धन्यवाद ज्ञापित करते हुए आशा करती हूं कि भविष्य में आप सभी का सहयोग इसी प्रकार मिलता रहेगा।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 8-10

महाराजा रणजीत सिंह की शासन व्यवस्था

Dr. Vikram Singh Deol
Professor in History, Dr. Bhim Rao Ambedkar Govt. College, Sriganganagar, Rajasthan

महाराजा रणजीत सिंह का जन्म एक ऐसे समय में हुआ था जब पंजाब के अधिकांश हिस्सों में सिखों द्वारा एक कंफ़ेडरेट सरबत खालसा प्रणाली के तहत शासन किया गया था और इस क्षेत्र को गुटों के रूप में जाना जाता था। रणजीत जब 12 साल के थे तब उनके पिता की मृत्यु हो गई, जिसका पालन–पोषण उनकी मां राज कौर और बाद में उनकी सास सदा कौर ने किया। महाराजा रणजीत सिंह 18 वर्ष की आयु में सुकेरचकिया मिसल के अधिपति के रूप में पदभार संभाला. मिसल अरबी शब्द है जिसका भावार्थ "दल" होता हैं। प्रत्येक दल का एक सरदार होता था।

रणजीत सिंह महत्वाकांक्षी शासक और एक साहसी योद्धा थे उन्होंने सभी अन्य गुमराहों पर विजय प्राप्त करना शुरू कर दिया और भंगी मसल से लाहौर के विनाश ने सत्ता में अपने उदय के पहले महत्वपूर्ण कदम को चिह्नित किया। अंततः रणजीत सिंह ने सतलज से झेलम तक मध्य पंजाब के क्षेत्र पर विजय प्राप्त की, अपने क्षेत्र का विस्तार किया और सिख साम्राज्य की स्थापना की। बहादुरी और साहस के कारण उन्होंने "शेर–ए–पंजाब" ("पंजाब का शेर") का खिताब अर्जित किया।

रणजीत सिंह का शासन –

निरंकुश शासन :

उस समय भारत में स्वेच्छाचारी प्रशासन प्रणाली का ही प्रचलन था। रणजीत सिंह में न तो आवश्यक बौद्धिक जागृति थी और न ही इस ओर झुकाव था कि कोई नई परंपरा चला सके। महाराजा में ही सारी शासकीय और राजनीतिक शक्ति केंद्रित थी।

परंतु वह हितकारी स्वेच्छाचारी शासक था। वह अपने आप को खालसा अथवा सिक्ख राष्ट्रमंडल का सेवक मानता था। और सदैव खालसा के नाम पर कार्य करता था उसने अपनी सरकार को भी 'सरकार–ए–खालसा' जी कहा और गुरु नानक और गुरु गोविंद सिंह के नाम के सिक्के चलाए।

यद्यपि महाराजा शासन का सूत्रधार था फिर भी उसकी सहायता के लिए एक मंत्री परिषद होती थी। उसने राज्य को प्रांतों में बांट रखा था और उनमें से प्रत्येक एक नाजिम के अधीन होता था। प्रांत जिलों में बंटे थे जो कि कारदार के अधीन होते थे और गांव में पंचायतें प्रभावशाली ढंग से कार्य करती थी।

भूमि कर और न्याय व्यवस्था :

सरकार की आय का मुख्य स्रोत भूमिकर था जो बड़ी कठोरता से एकत्रित किया जाता था। सरकार

उत्पादन का 33 प्रतिशत से 40 प्रतिशत तक लेती थी जो भूमि की उर्वरता पर निर्भर था। सर लेपेल ग्रिफिन ने ठीक ही कहा है कि महाराज अपने कृषकों से अधिक से अधिक कर प्राप्त करने का प्रयत्न करता था,परंतु वह कृषकों के हितों की रक्षा भी करता था और अभियान पर गई सेना को निर्देश था कि खेती को नष्ट न करें। कृषकों के लिए सेना में भी व्यवसाय के उत्तम अफसर थे।

न्याय व्यवस्था :

न्याय व्यवस्था कठोर थी परंतु तीव्र थी। आजकल जैसे न्यायालयों की श्रंखला नहीं थी। न्याय प्रायः स्थानीय प्रश्न था ना कि देश का। स्थानीय प्रशासन स्थानीय परम्पराओं के के अनुसार न्याय करते थे। लाहौर में एक 'अदालत–ए–आला' (सबसे उच्च न्यायालय) था जो सम्भवतः प्रांतीय तथा जिला अदालतों से अपीलें सुनता था। अपराधियों की देने की क्षमता पर आधारित बड़े–बड़े जुर्माने किए जाते थे। बड़े बड़े अपराधी भी जुर्माना देने पर छोड़ दिए जाते थे। न्याय वास्तव में सरकार की आय का एक साधन माना जाता था।

सैनिक प्रशासन :

रणजीत सिंह ने सबसे अधिक ध्यान सेना की ओर दिया। उसने अणुओं को जोड़–जोड़ कर इतना बड़ा राज्य बनाया था। यह आवश्यक था कि एक सशक्त सेना ही इसको संगठित रख सकती थी। इसके अतिरिक्त चारों ओर शत्रु ही शत्रु थे। वैसे भी रणजीत सिंह की प्रतिभा सैन्य संगठन में ही चमकी।

रणजीत सिंह का मूल्यांकन :

भारतीय इतिहास में रणजीत सिंह एक आकर्षक व्यक्तित्व था। देखने में बेहद ह्यूगल कुरूप व्यक्ति था। बैरन ने तो यहां तक कहा है कि सारे पंजाब में वह सबसे कुरूप और भद्दा व्यक्ति था। परंतु वह एक प्रभावशाली व्यक्ति था।

फकीर अजीजद्दीन जो उसका विदेश मंत्री था से जब एक अंग्रेज अफसर ने पूछा कि रणजीत सिंह कौन सी आंख से काना है तो उसने उत्तर दिया कि "उसकी आकृति इतनी तेजमय है कि मैं तो आज तक उसको ध्यानपूर्वक देखकर पता ही नहीं कर सका।"

रणजीत सिंह हिंदू और मुसलमान दोनों में बहुत ही लोकप्रिय थे यद्यपि वह सिखों को अपना सहयोगी और सहधर्मी मानता था, वह सभी धर्मों के विद्वानों का सम्मान करता था। एक बार उसने मुसलमान संत के चरणों की धूल को अपनी सफेद दाढ़ी से साफ किया था।

लेपल ग्रिफिन के अनुसार रणजीत सिंह एक बांका और आदर्श सैनिक था, जो शक्तिशाली शरीर वाला फुर्तीला, साहसी और धैर्यवान व्यक्ति था। सिंह (शेर) की भांति वीर, अपनी सेना में प्रायः आगे होकर और साधारण सैनिक की तरह लड़ता था। वह अपने अभियानों की पूर्व योजना बनाता था। युद्ध की विभिन्न कलाओं से अच्छी प्रकार से परिचित था।

जब कभी उसने पंजाब और अफगानिस्तान की सीमा पर बसे कबाइलियों से युद्ध किए तो वह प्रायः उन्हें मैदानी प्रदेश में लड़ने पर बाध्य कर देता था और उनसे उनके पहाड़ी प्रदेश में कम ही भिड़ता था। विक्टर जाकमां जो एक फ्रांसीसी पर्यटक था, उसने उसकी तुलना नेपोलियन बोनापार्ट की है।

यह ठीक है कि वह अपना उद्देश्य प्राप्त करने के लिए धोखा और शक्ति का प्रयोग करता था परंतु निर्दयी और रक्त का प्यासा नहीं था। अपितु वह हारे हुए लोगों से कृपा और मानपूर्वक व्यवहार करता था। बैरन फ़ान

ह्यूगल ने भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए हैं और अंत में कहा है "संभवत विस्तृत राज्य में इतने थोड़े अपराधों से व बन सका।"

एक शासक के रूप में रणजीत सिंह ने सदैव जनहित का ध्यान किया। जनसाधारण की अधिकारी वर्ग द्वारा उत्पीड़न से सदैव रक्षा करने का प्रयत्न करता था। उसके राजभवन के बाहर एक बड़ी सी पेटिका रहती थी और उसमें उसकी प्रजा किसी भी अधिकारी को शिकायत कर सकती थी और उसकी चाबी उसके पास रहती थी।

ठीक–ठीक अवस्था जानने के उद्देश्य से वह देश के विभिन्न भागों में स्वयं जाता था। सभी धर्मों के लोग उसके इस दयाशील राज्य का लाभ उठाते थे। एक मुसलमान फकीर अजीजुद्दीन इसका विदेश मंत्री था और इसका विशेष कृपा पात्र था। इसी प्रकार डोगरा बंधु उसके दरबार में विशेष स्थान रखते थे। परंतु सबसे प्रमुख बात यह थी कि रणजीत सिंह ने पंजाब की जनता को शांतिमय राज्य दिया कि पिछले एक सौ वर्षों में भी ऐसा कभी नहीं मिला था।

परंतु रणजीत सिंह को हम एक रचनात्मक और कुशल राजनीतिज्ञ नहीं कह सकते। जो राज्य उसने कठिन परिश्रम से बनाया था उसकी मृत्यु के 10 वर्षों के भीतर समाप्त हो गया और इसके उत्तरदायित्व से महाराजा स्वयं नहीं बच सका। उसने सब शक्तियां अपने में इतनी अधिक केंद्रित कर ली थी कि उसकी मृत्यु से एक स्थान ही रिक्त नहीं हो गया परंतु एक ऐसी सूरत आ गई जिसके कारण समस्त ढांचा टूटने लगा। वह अपनी सेना को सिविल अधिकारियों के अधीन नहीं कर सका।

उसकी मृत्यु के पश्चात उस सेना ने जो उसके पूर्णता नियंत्रण में थी, राजनीति में हस्तक्षेप कर दिया और उसने सिविल प्रशासन समाप्त कर दिया। शिवाजी की भांति रणजीत सिंह भी अपनी जनता के हृदय में वह भावना नहीं भर सका जो उसकी पश्चात उनको एक रख सकती। मृत्यु के संभवतः शिवाजी के उत्तराधिकारी भी उतने ही अयोग्य थे जितने कि रणजीत सिंह के, परन्तु कुछ परिस्थितियों के कारण महाराष्ट्र का इतिहास भिन्न रहा। उसकी सबसे बड़ी असफलता अंग्रेजों के साथ व्यवहार करने में थी। यह जानते हुए भी कि अंग्रेज उसके चरों ओर घेरा डाल रहे हैं और यह जानते हुए भी कि उनके उद्देश्य क्या हैं, वह केवल समय व्यतीत करता चला गया और उसने कुछ नहीं किया। कई बार उसने अंग्रेजों से युद्ध करने की ठानी परंतु ठीक समय पर वह साहस खो बैठता था और अंग्रेजों से लड़ने का अनिवार्य कार्य वह अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गया।

यह सब होते हुए भी रणजीत सिंह भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पंजाब के लोग इस वीर पुरुष को आज भी याद करते हैं। कनिंघम ने निष्कर्ष रूप में यह कहा है कि "उसने छिन्न–भिन्न तत्वों को एकत्रित करके एक राज्य स्थापित किया। मैराथन और पठानों से पंजाब की रक्षा की तथा अंग्रेजों को हस्तक्षेप करने का अवसर न देकर एक सुसंगठित राज्य स्थापित कर लिया। उसने उत्तर–पश्चिम से आक्रमणों के रेले को पुनः वापस धकेल दिया और खैबर दर्रे तक उत्तर–पश्चिम प्रदेश अपने अधीन कर लिए। सबसे बड़ी बात यह थी कि वह बहुत वीर था और यही उसकी भविष्य को देन है।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. A History of the Sikhs by Kushwant Singh, Vol. I
2. Postscript: Maharaja Duleep Singh, Emperor of the five Rivers, I.B. Tauris, 2017

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 11-15

विद्यार्थियों के शैक्षिक समायोजन में मूल्य परक शिक्षा की भूमिका

रिंकी सत्संगी, शोधार्थिनी,
सोनिया सागर, शोधार्थिनी,
शिक्षा संकाय, दयालबाग एजुकेशनल इंस्टिट्यूट, दयालबाग, आगरा।

सारांश :-

शिक्षा का अर्थ केवल एक उपाधि मात्र प्राप्त करना नहीं है बल्कि शिक्षा अपने आप में एक महत्वपूर्ण विषय है जिसकी डोर मुख्य रूप से हर शिक्षक के हाथ में होती है। एक शिक्षक को केवल अपने विद्यार्थी को शिक्षित करने का उद्देश्य नहीं होना चाहिए बल्कि हमें एक मूल्यों से सम्पूर्ण शिक्षा अपने विद्यार्थियों को प्रदान करनी चाहिए, ताकि वह एक बेहतर व्यक्ति बनकर विकास की ओर अग्रसर हो सके, और दूसरों को भी आगे बढने के लिए भी सीख दे सके। वही मूल्य परक शिक्षा है, जब विद्यार्थियों को मूल्य परक शिक्षा दी जाती है तो वह कहीं न कहीं हर परिस्थिति में समायोजन का कौशल सीख लेता है। मूल्य परक शिक्षा हमें विद्यार्थियों को उनकी प्रारंभिक अवस्था से ही देना प्रारंभ कर देना चाहिए, ताकि विद्यार्थी में समायोजन का कौशल विकसित हो और समायोजन का अधिगम विद्यार्थी कक्षा में ही अपनाना प्रारंभ कर दे। जिसे हम शैक्षिक समायोजन का नाम देते हैं। यह समायोजन शैक्षिक क्षेत्रों से बढकर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी भूमिका निभाता है। और विद्यार्थी को एक सम्पूर्ण मानव के रूप में विकसित करता है। मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी के व्यक्तित्व के ज्ञानात्मक, क्रियात्मक, भावात्मक पक्ष का संतुलित विकास करती है। और व्यक्ति को समाज के लिए उपयोगी बनाती है। क्योंकि मूल्य व्यक्ति को एक सम्पूर्ण व्यक्ति बनाने में सहायक होते हैं जिस वजह से व्यक्ति सही गलत का ज्ञान करना, समस्या का समाधान करना और हर परिस्थिति का सामना करना सिखाते हैं। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी को शैक्षिक समायोजन में सहायता करती है, परन्तु इस तथ्य को और अध्ययनरत करने के लिए इस विषय पर प्रस्तुत शोध प्रपत्र आयोजित किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन भविष्य में एक उपयोगी सूचना के रूप में देखा जायेगा जो कि मूल्य परक शिक्षा का विद्यार्थियों के शैक्षिक समायोजन में क्या भूमिका है यह वर्णन करेगा, अथार्त प्रस्तुत अध्ययन एक वर्णनात्मक अध्ययन है।

प्रस्तावना :-

समस्त जगत में सृष्टिकर्ता ने मानव ही ऐसा प्राणी निर्मित किया है जो अपनी बहुमुखी प्रतिभा के द्वारा ज्ञानार्जन, शोध चिंतन, मनन और विश्लेषण के द्वारा निरंतर विकासोन्मुख है। जीवन के प्रयेक क्षेत्र में मानव ऐसे

मूल्यों की खोज करता रहता है, जो उसे पूर्णता की ओर अग्रसर करते हैं। मूल्य व्यक्ति के विचार व व्यवहार को नियंत्रित व निर्देशित करके सत्य मार्ग पर चलने की अभिप्रेरणा देते हैं। मूल्य यह निश्चित करते हैं कि क्या अच्छा है, किसी भी कला में क्या सुन्दर है, सामाजिक व्यवस्था में क्या उचित है। मूल्य परक शिक्षा व शैक्षिक समायोजन मनुष्य के व्यक्तित्व का संतुलित विकास है। यह व्यक्ति को अपने आस–पास के लोगों के साथ सहायता पूर्वक रहने के योग्य बनाता है। समाज की संस्थाओं के प्रति अपना दृष्टिकोण रखता है। और इस बात को निश्चित करता है कि वह कैसे प्रसन्नता स्थापित व सुरक्षा पाता है।

मूल्य परक शिक्षा का अर्थ :–

मूल्य परक शिक्षा एक नवीन प्रत्यय है क्योंकि प्राचीन भारत के लिए इसकी कोई आवश्यकता सामने नहीं आयी थी। जिस वजह से इसे एक विषय के रूप में कक्षा में पढाना और आवश्यक रूप से इसे लागु करना एक चुनौती पूर्ण विषय था, परन्तु जैसे–जैसे समाज आधुनिकता कि ओर परिवर्तित हुआ तो वह कहीं न कहीं अपने मूल्यों, अपनी संस्कृति, अपनी धरोहर और सामाजिक गतिविधियों से दूर होता चला गया। जिसका परिणाम यह हुआ कि विद्यार्थी अपने भारतीय इतिहास से दूर हो गए। जिस वजह से वर्त्तमान समय में मूल्य परक शिक्षा को कक्षा में लाने कि आवश्यकता हुई। और यह आवश्यकता समय के साथ–साथ बढती जा रही है। और शैक्षिक आवश्यकताओं को पूर्ण करना शिक्षक का प्रथम उद्देश्य है। मूल्य परक शिक्षा के अंतर्गत निम्नलिखित मूल्य आते है, सत्यवादिता, परोपकार एवं आदरभाव, सेवा, अहिंसा, आत्मनिर्भरता, सेवा भाव, त्याग आदि। प्रस्तुत विषय को हम कुछ अध्ययनों के माध्यम से निश्चित रूप में देख सकते हैं –

परिभाषा :–

रिचर्ड.एल. मौरिल (1980) के अनुसार, ''मूल्यों को चयन के उन मानदंडों तथा प्रतिमानों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो व्यक्तियों व समूहों को परितोष तथा अर्थ की ओर निर्देशित करें।'' इस परिभाषा के मानवीय विभा निहित हैं।

शैक्षिक समायोजन का अर्थ :–

समायोजन एक अत्यंत महत्वपूर्ण अवस्था है, जिसमें व्यक्ति उन परिस्थितियों के साथ अपना संतुलन बनाता है जो कि उसके अनुसार नहीं होती हैं। अथार्त कई बार व्यक्ति के जीवन में कुछ ऐसी परिस्थितियां आ जाती हैं जो कि उसके लक्ष्य में बाधा की भूमिका निभाती हैं, तो व्यक्ति उन बाधाओं के डर से अपना लक्ष्य नहीं छोड़ता बल्कि वह उन परिस्थितियों के साथ समायोजन बनाकर अपने लक्ष्य की ओर बढता है। इसी को हम समायोजन का नाम देते हैं। परन्तु जब इसी तरह की परिस्थिति एक विद्यार्थी के जीवन में आती है तो वह समायोजन शैक्षिक समायोजन का रूप ले लेता है। कई बार विद्यार्थी को अपने शैक्षणिक जीवन में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है, परन्तु वह उन समस्याओं से डर कर या हारकर पीछे नहीं हटता बल्कि वह नियमित रूप से अपनी समस्याओं का सामना करता रहता है जिसे हम शैक्षिक समायोजन कहते हैं।

शैक्षिक समायोजन की परिभाषा :–

स्किनर (1960), ''समायोजन से हमारा तात्पर्य इन बातों से है, सामूहिक क्रियाकलाप में स्वरुप एवं सामूहिक क्रियाकलाप में स्वस्थ एवं सामूहिक उत्साहमय ढंग से भाग लेना, समय पड़ने पर नेतृत्व का भार उठाने की सीमा तक उत्तरदायित्व वहन करना तथा उससे बढकर समायोजन में अपने को किसी प्रकार के धोखे से

बचाना।

विद्यार्थी के शैक्षिक समायोजन में मूल्य परक शिक्षा की भूमिका :-

वियार्थी के शैक्षिक समायोजन में मूल्य परक शिक्षा की कोई भूमिका है या नहीं यह अत्यंत विचारणीय विषय है जो कि हम निम्नलिखित अध्ययनों के माध्यम से निश्चित कर सकते हैं।

गुप्ता एंड यादव (2011) ''एडजस्टमेंट एंड वैल्यू ऑफ़ अडोल्सेंट मेल एंड फीमेल स्टूडेंट्स'' प्रस्तुत अध्ययन में किशोर बालक–बालिकाओं की विभिन्न समायोजन समस्याओं तथा मूल्य अध्ययन किया गया। अध्ययन के परिणामों से ज्ञात हुआ कि बालिकाओं में सौन्दर्यात्मक तथा पारिवारिक–मान मूल्य बालकों की अपेक्षा अधिक पाए गए। बालकों का मूल्य ज्ञान सभी अध्ययन में शामिल मूल्यों के परिप्रेक्ष्यों में बालिकाओं के अपेक्षा उच्च स्तर का रहा। बालक बालिकाओं का समायोजन स्थिति समस्या के अनुरूप रहा। साहिन (2019), ''प्राथमिक विद्यालय शिक्षक उम्मीदवारों द्वारा अनुमानित मूल्य और मूल्य शिक्षा'' प्रस्तुत शोध अध्ययन में शिक्षकों ने मूल्यों की शिक्षा का प्राथमिक लक्ष्य अच्छे नागरिकों का निर्माण करना माना और अन्य शिक्षक उम्मीदवारों ने व्यक्तिगत मूल्यों पर ध्यान केन्द्रित कर के एक अच्छे चरित्र के महत्व को अवश्य माना। शलूडरमैंन एवं एडवर्ड (2000), ''ए स्टडी ऑफ़ हाई स्कूल स्टूडेंट्स सोशल, ''रिलीजियस वैल्यू एंड एडजस्टमेंट'' प्रस्तुत शोध अध्ययन में कनाडा के हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के सामाजिक एवं धार्मिक मूल्यों व समायोजन का अध्ययन किया गया। परिणामों में विद्यार्थियों के धार्मिक व सामाजिक मूल्यों तथा सामाजिक व व्यक्तिगत सामंजस्य में कोई अंतर नहीं पाया गया। प्रस्तुत अध्ययनों के आधार पर देखा जा सकता है कि मूल्य परक शिक्षा और शैक्षिक समायोजन का सम्बन्ध कहीं न कहीं सकारात्मक रूप में दिखाई देता है। और यह भी सामने आया कि मूल्य परक शिक्षा कहीं न कहीं विद्यार्थी के चरित्र निर्माण में सहयोग होते हैं।

मूल्य परक शिक्षा के उद्देश्य :-

एक विद्यार्थी के लिए उसके जीवन में मूल्य परक शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है, इसलिए इस पर शिक्षक की भूमिका प्राथमिक होती है क्योंकि शिक्षक विद्यार्थी को जो भी देगा वह विद्यार्थी के जीवन में स्थायी रूप में ठहर जाता है। इसलिए एक शिक्षक को निम्नलिखित उद्देश्यों के आधार पर अपनी कक्षा में मूल्य परक शिक्षण करवाना चाहिए।

– छात्रों में सहयोग प्रेम एवं करुणा शांति एवं अहिंसा साहस, समानता बंधुत्व, भ्रम–गरिमा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण विभेदीकरण की शक्ति आदि भौतिक गुणों का विकास करना।
– छात्रों को एक उत्तरदायी नागरिक बनने के लिए प्रशिक्षित करना।
– राष्ट्रिय लक्ष्यों समाजवाद, धर्म निरपेक्षता, राष्ट्रिय एकता लोकतंत्र का सही ढंग से बोध कराना।
– देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के सम्बन्ध में उन्हें जागरूक बनाना साथ ही उन्हें उनमें वांछित सुधार लाने के लिए प्रोत्साहित करना।
– निम्नलिखित के प्रति उनमें समुचित दृष्टिकोण विकसित करना।
  (1) स्वयं एवं अपने साथियों के प्रति। (2) स्वदेश के प्रति।
  (3) मानवता के प्रति। (4) सभी धर्मों एवं संस्कृतियों के प्रति।
  (5) जीवन एवं पर्यावरण के प्रति।

– छात्रों को स्वयं को जानने के लिए प्रोत्साहित करना जिससे वे स्वयं में आस्था रखने में सामर्थ्य हो सके।

विद्यार्थियों के शैक्षिक समायोजन में मूल्य परक शिक्षा की भूमिका :–

मूल्य परक शिक्षा एक विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा है, जिसमें विद्यार्थी के भावी भविष्य हेतु मानक निर्धारित करते हैं और साथ ही उन्हें शिक्षण के द्वारा विद्यार्थियों के व्यव्हार में उतारने की कोशिश की जाती है। मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी को सही व गलत का ज्ञान कराती है। वैल्यूज डिक्शनरी ऑफ़ एजुकेशन (1945), में मूल्यों को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, ''मूल्य एक ऐसी विशेषता है जिसे मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, नैतिक और सौन्दर्यात्मक विचारों के परिप्रेक्ष्य में उत्कृष्ट एवं महत्वपूर्ण समझा जाता है तथा ये उस व्यक्ति में अन्तर्निहित रहते है जो उसके विश्वास के अनुसार सुरक्षा व नैतिक सहायता प्रदान करता हैं।'' वहीँ सी.वी.गुड (1989) के शब्दों में जीवन मूल्य चारित्रिक विशेषता है जो मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सौन्दर्यबोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है, लगभग सभी विचार मूल्यों के अथार्त चरित्र को स्वीकार करते हैं।'' इसमें कहा गया है कि मूल्य शिक्षा द्वारा सहयोग, प्रेम, करुणा, शक्ति एवं अहिंसा, साहस, समानता, बंधुत्व आदि मौलिक गुणों का विकास किया जा सकता है। मूल्य शिक्षा द्वारा शिक्षा विद्यार्थियों को एक उत्तरदायी नागरिक के रूप में प्रशिक्षित किया जा सकता है। देश की सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक परिस्थियों के सम्बन्ध में जागरूक किया जा सकता है। अपने साथियों के प्रति, मानवता के प्रति, धर्म और संस्कृति के प्रति, जीवन और पर्यावरण के प्रति, समुचित दृष्टिकोण का विकास मूल्यों की शिक्षा के द्वारा ही संभव है। इस आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि विद्यार्थी को जब कक्षा में मूल्य परक शिक्षा दी जाती है तो वह उस शिक्षण द्वारा एक सम्पूर्ण मानव के रूप में विकसित होता है जो कि उसके जीवन के विभिन्न पक्षों से सम्बंधित होता है। यही सम्बन्ध कहीं न कहीं उसके शैक्षिक समायोजन से भी संबधित है जो उसके समायोजन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। इस तथ्य को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट कर सकते हैं।

– मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी के व्यक्तिगत जीवन में भूमिका निभाती है।
– मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी को उसके भविष्य के लिए मार्गदर्शन प्रदान करती हैं।
– मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी को उसके जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती है।
– मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी को भावी जीवन के लिए भविष्य उन्मुख बनाने में सहायता करती है।
– मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी को मानसिक, सामाजिक, एवं शैक्षिक रूप से सहायता प्रदान करती है।
– मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी को व्यक्तिगत, व्यवसायिक, शैक्षिक रूप से कुशल बनाने में सहयोगी होती है।
– मूल्य परक शिक्षा शिक्षक को शिक्षण हेतु मार्गदर्शन प्रदान करती है।
– मूल्य परक शिक्षा शिक्षक को अपने शिक्षण को प्रभावी बनाने में सहायक होती है।
– मूल्य परक शिक्षा विद्यार्थी शैक्षिक समायोजन में ही नहीं बल्कि अन्य विभिन्न परिस्थितियों में भी समायोजित होने का कौशल सिखाती है।

निष्कर्ष :–

शैक्षिक समायोजन मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास का संतुलित विकास है। यह व्यक्ति को अपने आस–पास के लोगों के साथ सहायता पूर्वक रहने के योग्य बनाता हैं। समाज व समाज की संस्थाओं के प्रति अपना दृष्टिकोण रखता है और इस बात को निश्चित करता है कि वह कैसे प्रसन्नता स्थायित्व व सुरक्षा पाता

है। मानव मस्तिष्क को स्वस्थ रखने के लिए समायोजन एक औषधि तुल्य है। मूल्य मानव जीवन में ताने–बाने की तरह गुंथा हुआ है यदि इसे मानव जीवन से पृथक कर दिया जाये तो मानव जीवन, निष्प्राण, नीरस व शुष्क मरुस्थली वन जायेगा। मूल्य द्वारा हमारा जीवन रक्षित है, मूल्य एक अलौकिक व आकर्षण कला है जो व्यक्ति के मनोभावों को उदीप्त कर उसके सृजनात्मक क्षमता के मार्ग को प्रशस्त करती है। मानव जीवन चुनौतियों एवं संघर्षों से परिपूर्ण है। कोई भी व्यक्ति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सफलता तभी प्राप्त कर सकता है, जबकि उसमें अपने को समायोजित करने की क्षमता हो। एवं विभिन मूल्यों से परिपूर्ण हो। परन्तु शैक्षिक समायोजन विद्यार्थियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। इस समायोजन का प्रभाव विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ता है। विद्यार्थियों की उन्नति का राष्ट्रिय उन्नति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। और विद्यार्थियों की शैक्षिक उन्नति समायोजन पर आधारित है, और समायोजन विद्यार्थी के मूल्यों पर जो कि उसको मूल्य परक शिक्षा द्वारा दिए जाते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. पी.पी. जौहरी (1986), ''भारतीय शिक्षा का इतिहास'' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
2. प्रो. शर्मा (1988), ''समकालीन भारतीय शिक्षा का स्वरुप तथा उसकी संभावनाएं 4/230 कचहरी घाट आगरा।
3. डॉ. रामशकल पाण्डेय, डॉ. करुणा शंकर मिश्र (1991) ''मूल्य शिक्षण'' अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा–7
4. डॉ. महावीर मल लोढ़ा (1996) ''नैतिक शिक्षा रू विविध आयाम'' राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
5. पी.डी. पाठक (2008) ''भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं'' अग्रवाल पब्लिकेशन. आगरा।
6. जी. एस. त्यागी (2008) ''शिक्षा का सिद्दांत" अग्रवाल पब्लिकेशनस आगरा।
7. मीना कैलाश (2021), ''मूल्य परक शिक्षा की अवधारणा, सिद्दांत, उद्देश्य, आवश्यकता"।
8. https://www.kailasheducation.com/2021/09/mulyaparak%20shiksha.html
9. www.google.com
10. www.wikipedia.com
11. www.shodhganga.com

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 16-20

तकनीकी पाठों का अंग्रेजी-हिंदी अनुवाद
(English-Hindi Translation of Technical Texts)

डॉ. रणजीत भारती
सहायक प्रोफेसर, भाषा विज्ञान विभाग, डॉ. बी. आर. आंबेडकर वि. वि., आगरा, भारत।

सारांश (Abstract) :

प्रस्तुत शोध पत्र में तकनीकी विषयों जैसे– इंजीनियरिंग, कम्प्यूटर विज्ञान आदि के तकनीकी पाठों (टेक्स्ट) का अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद के लिए पैमाने और उनके प्रयोग संबंधी उपयोगिता को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। अंग्रेजी कथ्य (कंटेंट) का हिंदी में अनुवाद करने के लिए भाषिक स्तर का विषय के अनुरूप होना आवश्यक है। जैसे; तकनीकी विषयों की भाषा अविधापरक (प्रत्यक्ष) भाषा होती है। अर्थात इनके सम्प्रेषण में संदिग्धार्थक शब्दों की जगह पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इस पत्र में विश्लेषण का आधार तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्धारित तकनीकी लेखन के गाइडलाइन को बनाया गया है। विश्लेषण के लिए एआईसीटीई द्वारा संचालित एल.एम.एस.के इंजीनियरिंग (अभियांत्रिकी) विषयों के मूक कोर्सों के अंग्रेजी से हिंदी में अनुदित पाठों को लिया गया है। इसमें अंग्रेजी से हिंदी में अनुदित पाठ के कथ्य की स्पष्टता,समतुल्य शब्दों के प्रयोग एवं व्याकरणिक संरचना एवं अकादमिक दृष्टि से उपयोगिता को दर्शाया गया है।

मुख्य शब्द :– तकनीकी पाठ, हिंदी अनुवाद, इंजीनियरिंग, पारिभाषिक शब्द, व्याकरणिक संरचना।

प्रस्तावना (Introduction) :

सरकार द्वारा भातीय भाषाओं में मानविकी विषयों के अलावा तकनीकी पाठ्यक्रमों जैसे– इंजीनियरिंग, कम्प्यूटर विज्ञान आदि को पांच भारतीय भाषाओं (हिंदी, मराठी, बंगाली, तमिल और तेलगु) में पठन–पाठन की अनुमति दी गई है। इस फैसले के बाद देश के 16 इंजीनियरिंग कॉलेजों ने भारतीय भाषाओं में इंजीनियरिंग की पढ़ाई के लिए तैयार हो गए हैं। इनमें से चार कॉलेज उत्तर प्रदेश के हैं जिन्होंने आधिकारिक तौर पर हिंदी माध्यम से इंजीनियरिंग की पढ़ाई कराने की घोषणा कर दिए है। इनकी संख्या आगे और भी बढ़ सकती हैं।जैसा कि हम जानते है कि भारत सरकार द्वारा मातृभाषा में शिक्षण को लेकर विद्यार्थियों में कराए गए सर्वे के अनुसार लगभग 47 प्रतिशत भारतीय छात्रों ने इंजीनियरिंग जैसे तकनीकी विषयों की पढ़ाई के लिए अपनी मातृभाषा को प्रथम विकल्प के रूप में चुना है। जिसे ध्यन में रखकर सरकार ने पांच भारतीय भाषाओं में इंजीनियरिंग की पढ़ाई के लिए मान्यता प्रदान की है। जिसमें से हिंदी एक प्रमुख भाषा है। हालांकि भारत की एन.सी.ई.टी.ई. द्वारा अंग्रेजी में अपलोड इंजीनियरिंग एवं कम्प्यूटर विज्ञान आदि तकनीकी विषयों के अंगेजी पाठ्यक्रमों के हिंदी समेत आठ भारतीय भाषाओ में अनुवाद कार्य किया जा रहा है। भारत के अग्रणी विश्वविद्यालयों में से एक बनारस हिंदू

विश्वविद्यालय ने भी बी.टेक की पढ़ाई हिंदी माध्यम से करने की घोषणा की है। प्रस्तुत पत्र में कुछ कोर्सों (पांच) के अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद के आधार पर चर्चा की गई है।

तकनीकी पाठ :–

वे पाठ जो शिक्षण या पाठक को निर्देशित करने के उद्देश्य से लिखे जाते हैं उन्हें तकनीकी पाठ की श्रेणी में रखा जाता है। इसे व्यवस्थित क्रम में लिखा जाता है ताकि सूचना को समझने में सरल बनाया जा सके। तकनीकी पाठ किसी विषय को सीखने या किसी कार्य को कैसे पूरा किया जाए, के उद्देश्य से पढ़ा जाता है। इसमें अक्सर चार्ट, आरेख, चित्रण और अन्य दृश्यात्मक तत्वों का प्रयोग किया जाता है जो पाठ के लिए सहायक होते हैं और विषय के बारे में अन्य सूचना प्रदान करते हैं। तकनीकी पाठ का प्रमुख उद्देश्य पाठक को किसी विशिष्ट विषय या कौशल की शिक्षा देना होता है। स्कूल पाठ्य–पुस्तक, कार मरम्मत करने की प्रायोगिक नियमावली आदि। दिशानिर्देश नियमावली, पाठ्य–पुस्तक, मल्टीमिडिया प्रस्तुतीकरण, संचालन निर्देश और प्रायोगिक कार्य का क्रम्बद्ध दिशा–निर्देश का लेखन तकनीकी पाठ के उदाहरण हैं। इंजीनियरिंग जैसे तकनीकी विषय के लिए हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में इस तरह के पाठ निर्माण में तेजी आने से इसकी उपयोगिता बढ़ गई है।

तकनीकी पाठ के प्रकार–तकनीकी पाठ को उनकी प्रकृति के आधार पर दो प्रमुख भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

(क) सैद्धांतिक तकनीकी पाठ – वे पाठ जिसमें तकनीकी पक्षों का सैद्धांतिक विवेचन किया जाता है। इस तरह के पाठ में तकनीकी अवधारणाओं के विश्लेषण के लिए लेखन में चार्ट, आरेख, और अविधापरक भाषा का प्रयोग किया जाता है। तकनीकी शब्दों का हिंदीकरण तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

(ख) प्रायोगिक तकनीकी पाठ – वे पाठ जिसमें प्रयोगात्मक क्रमों को क्रम्बद्ध तरीके से दर्शाया जाता है ताकि उन क्रमों को पढकर विद्यार्थी प्रायोगिक क्रिया को संपादित कर सके। विषय क्षेत्र के आधार पर पायोगिक तकनीकी पाठ के दो प्रकार हो सकते हैं–

(1) सॉफ़्टवेयर/टूल्स के ट्यूटोरियल पाठ – आज के कौशल प्रधान पाठ्यक्रमों के लिए ट्यूटोरियल्स का हिंदी में अनुवाद की उपयोगिता बढ़ गई है। किसी सॉफ़्ट्वेयर या टूल्स की संचालित करने के लिए उसकी कार्य–प्रणाली को हिंदी में क्रमबद्ध तरीके से लिखना जिसे हिंदी भाषी पढ़कर सॉफ़्ट्वेयर/टूल्स पर काम कर सके। जैसे; 'प्रात' (PRAAT) एक ऐसा टूल है जिससे भाषिक ध्वनियों के विश्लेषण का कार्य किया जाता है। उसके ट्यूटोरिएल अंग्रेजी में तो उपलब्ध है लेकिन हिंदी में उपलब्ध नहीं है।

(2) लैब/कारखाना के प्रायोगिक पाठ – हालांकि लैब या कारखानों में कार्य प्रयोग आधारित होते हैं लेकिन उस प्रयोग की प्रक्रिया को पाठ में लिखकर समझाया जा सकता है। जैसे; साबून बनाने की प्रक्रिया, खिलौने बनाने की प्रक्रिया आदि।

साहित्यिक सर्वे (Literature Review) :–

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (2018) के दिशा निर्देश के अनुसार–सभी भारतीय भाषाओं में शब्दावली का निर्माण करने के लिए यथासंभव अधिक से

अधिक एकरूपता रखी जाए। अंग्रेजी से हिंदी पर्याय हिंदी के अलावा अन्य क्षेत्रीय भाषा के पर्याय संबंधित भाषा की शब्दावलियों से लिए जाए। विज्ञान विषयों के यौगिको के नाम, स्थिरांक, ऐसे शब्द जो व्यक्तियों के नाम पर हैं, माप तौल की इकाईयां आदि शब्दों के हिंदी अनुवाद न करके उनका हिंदी में लिप्यंतरण किया जाना चाहिए। एनपीटीईएलद्वारा 2020 में अंग्रेजी पाठ्यक्रम के कंटेंट को 8 भारतीय भाषाओं (हिंदी, बंगाली, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल और तेलगू) में अनुवाद के लिए पहल की गई। जिसमें विभिन्न भाषाओं में अनुवाद के लिए 1500 से अधिक आवेदन प्राप्त हुए हैं।

चर्चा (Discussion) :– सरकार के द्वारा हिंदी माध्यम से इंजीनियरिंग की पढ़ाई कराने के फैसले को हिंदी माध्यम माध्यम के समर्थक विद्यार्थी एवं शिक्षकों ने इसे स्वीकारते हुए कुछ प्रश्न भी खड़े किए जैसे; इंजीनियरिंग की छात्रा निधि ने कहा, 'हमें हिंदी कौन पढ़ाएगा? हमारे टीचर्स ने इंग्लिश माध्यम से पढ़ाई की है।' इसके अलावा टीचर्स अब इस बात से परेशान हैं कि ये पढ़ाई होगी कैसे? दरअसल, इंजीनियरिंग में हिंदी माध्यईम में टेक्ट बुक्से हैं ही नहीं। इसके जवाब में तकनीक शिक्षा मंत्री दीपक जोशी ने कहा है कि तकनीकी शब्दों के अनुवाद की आवश्यछकता नहीं है। इसे छात्र अंग्रेजी से हिंदी लिप्यंतरण (ट्रांसलिटरेशन) के जरिए समझ सकते हैं। इसको लेकर भी कुछ व्यवहारिक समस्याएं है। जैसे; क्या हिंदी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थी केवल अंग्रेजी से अनुदित पाठ के सहारे हिंदी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करेंगे या अपनी मूलभाषा (हिंदी) में। अतः हिंदी में अनुदित पाठ को हिंदी की प्रकृति के अनुरूप रखने के लिए निम्नलिखित पैमानों को ध्यान में रखना चाहिए–

तकनीकी पाठ की संरचना – तकनीकी पाठ का प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र में किया जाता है अकादमिक के अंतर्गत आता है। अतः तकनीकी पाठ को अकादमिक विशेषताओं जैसे; इम्पर्सनल, एकार्थी भाषा का प्रयोग, पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग, वाक्य संरचना में अधिकतम 20 शब्दों का प्रयोग आदि का प्रयोग करना उचित होता है। इसके अलावा कंट्रैक्शन, स्लैंग, और अप्रत्यक्ष अभिव्यक्ति का प्रयोग तकनीकी पाठ के अनुवाद में नहीं करना चाहिए।

भाषा-शैली-अनुदित पाठ की भाषा शैली की निम्नलिखित पैमाने होने चाहिए –

– तकनीकी पाठ का अनुवाद करते समय अनुदित पाठ की शैली वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए अर्थात व्यक्तिगत सर्वनामों जैसे; 'मैं', 'मुझे' आदि का प्रयोग कम से कम प्रयोग हो।

– वैज्ञानिक लेखन में वस्तुनिष्ट होना चाहिए जैसे– उसमें व्यक्तिगत सर्वनामों 'मैं', मुझे आदि का कम से कम प्रयोग हो।

– भावनात्मक एवं अलंकारिक अभिव्यक्तियों के प्रयोग से बचना चाहिए। जैसे– 'बड़े ही दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि भारत में बाल मजदूरी दिन ब दिन बढ़ती जा रही है...', 'इस तथ्य के बारे में कुछ कहना सूरज को दिया दिखाने जैसा है' आदि।

– तथ्य संक्षेप, त्रुटिहीन एवं औपचारिक भाषा में प्रस्तुत करना चाहिए।

– स्पष्ट, तार्किक एवं क्रमबद्ध शैली का प्रयोग करना चाहिए। अर्थात लेखन की शैली भाषण जैसा या पत्रकार के लेखन शैली के जैसा न हो। जैसे– 'इन तथ्यों से ऐसा लगता है कि...', 'इससे ऐसा कहा जा सकता है कि...' आदि। इस प्रकार का लेखन विश्लेषण में स्पष्टता के अभाव को दर्शाता है। इसे निम्नलिखित रूप में (इन तथ्यों से इस बात की पुष्टि होती है कि...) होने से विश्लेषण में स्पष्टता स्वतः ही उजागर होती है।

तकनीकी पाठ का अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद करते समय विशिष्ट शब्दावलियों का प्रयोग किया जाता है।

मुहावरे, व्यंग्यात्मक और क्लिष्ट भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसके अलावा अस्पष्ट पद और अलंकारिक भाषा का प्रयोग भी तकनीकी पाठ मेंनहीं करना चाहिए।

तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग :–

प्रत्येक अनुशासन की अपनी विशिष्ट शब्दावलियाँ (terms) होती हैं, और उनके प्रयोग की विशिष्टता भी अलग–अलग होती हैं। मुख्य रूप से समानार्थी शब्दों के चयन को लेकर सतर्क रहना चाहिए क्योंकि वे समानार्थी तो होते हैं लेकिन उनमें सूक्ष्म अंतर होता है जो उनके प्रयोग से पता चलता है अंग्रेजी शब्दों का हिंदीकरण करते समय हमें सर्वप्रथम 'वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग' द्वारा निर्मित शब्दों का अनुकरण करना चाहिए, यदि इसमें किसी शब्द का हिंदी न मिले तो लेखक को अपने तरफ से हिंदीकरण स्थानीय भाषा संरचना के अनुरूप करना चाहिए, और उसे परिशिष्ट के रूप में दर्शना चाहिए।

शब्दों की एकरूपता :–

लेखन करते समय यह भी ध्यान देना चाहिए की यदि किसी शब्द के एक से अधिक रूप प्रचलित हैं तो उनके किसी एक रूप को ही पूरे शोध में लिखें, न कि एकाधिक रूप को। जैसे– हिंदी/हिन्दी आदि में से या तो 'हिन्दी' का प्रयोग पूरे लेख में किया जाना चाहिए या फिर 'हिंदी' का। एनपीटीएल के पाठ्यक्रमों के हिंदी अनुवाद में शब्दों की एरूपता में भिन्नता है जैसे; अलजेब्रा के लिए एक ही पाठ में कभी बीजगणित तो कभी लिप्यंतरण रूप अलजेब्रा ही प्रयोग हुआ है।

कथ्य की संशक्ति :–

किए गए कार्यों को सहज बोध कराने के लिए कथ्यों को व्यवस्थित रूप में संपादित करना जरुरी होता है। ऐसा न करने पर लेखन द्वारा प्रकट विचारों की संशक्ति भंग होती है। तकनीकी पाठ में क्थ्य को समझाने के लिए चार्ट, रेखाचित्र, आरेख आदि की सहायता ली जाती है लेकिन अंग्रेजी से हिंदी में अनुदित बहुत से पाठों में चार्ट, आरेख आदि को दर्शाया ही नहीं गया है। हालांकि कथ्य को सहज बनाने के लिए तकनीकी पाठ के हिंदी अनुवाद में भी इनका समावेश करना चाहिए।

विश्लेषण (Analysis) :

एनपीटीईएल के पाठ्यक्रमों का हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराना भारतीय भाषाओं में कंटेंट उपलब्ध कराने की दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य है। इस अनुवाद में पारिभाषिक शब्दों की अलग से सूचियां भी दी गई है। और अनुदित पाठ का मूल्यांकन और फीडबैक के विकल्प भी दिए गए हैं। हिंदी में अनुदित तकनीकी पाठ के अवलोकन से निमनलिखित बिंदु विचारणीय हैं–

– हिंदी अनुवाद के लिए स्पष्ट दिशा–निर्देश नहीं दिया गया है। क्या अलग–अलग भारतीय भाषाओं में अनुवाद के लिए दिशानिर्देश अलग–अलग होंगे या कोई सर्वमान्य दिशानिर्देश होंगे, इसकी स्पष्ट सूचना नहीं दी गई है।
– तकनीकी पाठ को समझने के लिए चार्ट, आरेख आदि को दर्शाना आवश्यक होता हैं, परंतु ज्यादातर हिंदी अनुदित पाठों में इनको हटा दिया गया है।
– प्रत्येक हिंदी अनुवाद में अलग से पारिभाषिक शब्दावलियां दी गई हैजो हिंदी पाठ को थोड़ा जटिल बना देती है।

– पाठ में शब्दों की एकरूपता का कही–कही ध्यान नहीं दिया गया है।

– हिंदी में तकनीकी पाठ के अनुवाद के लिए हिंदी की सहयोगी भाषाओं की शब्दावलियों की जगह संस्कृतनिष्ठ शब्दावली के अधिक प्रयोग देखने को मिलता है।

निष्कर्ष (Conclusion) :

भारतीय भाषाओं में तकनीकी शिक्षण कराना एक सराहनीय कदम है। परंतु इसे पूरी तरह से लागू करने के लिए तकनीकी पाठ की दृष्टि से हिंदी के अकादमिक स्वरूप को भी विकसित करना होगा। एनपीटीईएलद्वारा कराएं गए अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के दिशानिर्देश और इसके द्वारा विकसित की गई पारिभाषिक शब्दावलियों को शामिल किया जाना चाहिए।इसके अलावा तकनीकी शब्दावली का निर्माण सिर्फ संस्कृतनिष्ठ ही नहीं होना चाहिए बल्कि इसमें हिंदी की सहयोगी भाषाओं के प्रचलित शब्दों का भी समावेश होना चाहिए।

संदर्भ (References) :

1. Arnold, D. 1989- Text Typology And Machine Translation : An Overview, Translating and the Computer 10. 73-79.
2. Biber, D. 1988. Variation Across Space and Writing. University Press, Cambridge.
3. Biber, D. 1989. A typology of English texts, Linguistics 27. 3-43.
4. Laplante, Philip A; 2018. Technical Writing : A practical Guide for Engineers and Scientist, CRC Press
5. Markel, Mike and Selber, Stuart A. 2017, St. Martin's Publication, 12th edition

वेबसाइटें (Websites):

1. https://nptel.ac.in/Translation/
2. https://www.aajtak-in@education@story@engineering&to&be&taught&in&hindi&in&madhya&pradesh &447760&2017&05&19
3. https://www.education.gov.in/hi/language-education-4-hi
4. https://www.indiatv.in/education/pm-modi-says-engineering-courses-will-be-taught-in-5-languages-on-nep-2020-first-anniversary-804939
5. https://penandthepad.com/types-text-narrative-expository-technical-persuasive-12033608.html
6. https://definitionandconcept.blogspot.com/2021/03/meaning-of-technical-text-what-is.html
7. https://www.sciencedirect.com/journal/language-sciences/vol/19/issue/4

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 21-25

साहित्य और सिने-कला में रचनात्मक द्वन्द!
(साहित्य और सिनेमा)

कुमार नीरज
लेखक और फ़िल्म संपादक, स्वतंत्र वृतचित्र निर्माता
सदस्य –IFTDA, GraFTII

विश्व साहित्य के इतिहास पर अगर हम नज़र डाले तो हज़ारों साल पुरानी इस विधा ने विकास और परिवर्तन के अनेक चरण देखे है! साहित्य के विकास का सफ़र जैसे जैसे आगे बढ़ा वैसे वैसे इस वृक्ष में अनेक टहनिया निकलती गई जैसे की कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, जीवनी, संस्मरण, निबंध और धीरे–धीरे इसने एक विशाल वट वृक्ष का रूप धारण कर लिया! यह सर्वविदित है कि किसी चीज़ का प्रादुर्भाव और उसका सर्वांगिंण विकास अचानक से नहीं होता है! विकास एक अनवरत प्रक्रिया है जो निरंतर चलती रहती है! हाँ, यह तथ्य मान्य है कि कहीं पर विकास की प्रक्रिया तीव्र हो सकती है तो किसी क्षेत्र में धीमी! सम्पूर्ण विश्व में सिनेमा का तकनीकी और कलात्मक विकास काफ़ी तीव्र गति से हुआ है, सिनेमा ने लगभग सवा सौ वर्षों के इतिहास में जितनी सफलता और लोकप्रियता हासिल की है, उतनी सफलता शायद और किसी कला ने नहीं की है! 'बर्नार्द शॉ ने सिनेमा के शैशव अवस्था में ही कहा था कि सिनेमा प्रिंटिंग प्रेस से कहीं ज़्यादा महत्वपूर्ण खोज साबित होगा क्योंकि यह शिक्षित और अशिक्षित दोनो को समान रूप से आकर्षित और प्रभावित करेगा! जब बोलती फ़िल्मे आयी तब शॉ ने यह भाँप लिया था कि सिनेमा अभिनय, लेखन और अर्थशास्त्र में भारी परिवर्तन लाने वाला है!'[१]

साहित्य, संगीत, नाट्यकला आदि ने जो स्थान मानव मस्तिष्क में सैकड़ों–हज़ारों साल में बनाई है उससे ज़्यादा प्रभावी रूप से सिनेमा ने मानव जीवन में अपने–आप को स्थापित किया है! हालाँकि जब भी साहित्य और सिनेमा के संबंधो पर चर्चा होती है तो अनेक मीठे–कड़वे अनुभव परिणाम के रूप में सामने आते है! एक तरफ़ साहित्यकार, कहानीकार और नाटककार सिनेमा पर साहित्यिक कृतियों के चिर–हरण का आरोप लगाते है तो वहीं फ़िल्मकार साहित्यकारों पर हठधर्मिता, कलात्मक नासमझी और अव्यवसायिक दृष्टिकोण का आरोप लगाते है!साहित्यकारों की माने तो सिनेमा ने सबसे ज़्यादा नुक़सान साहित्य विधा को पहुँचाया है! सिनेमा के प्रचार–प्रसार ने साहित्य के पाठकों को अपनी तरफ़ आकर्षित कर लिया और साहित्य की महता को लोकजीवन में कमतर कर दिया! लेकिन अगर सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाए तो सिनेमा अपने आरम्भ से ही साहित्य के अत्यधिक क़रीब रहा है! सिनेमा के आरम्भिक चरण यानी की मूक फ़िल्मों के दौड़ की बात करे तो हज़ारों फ़िल्मों

का निर्माण साहित्यिक कृतियों पर आधारित है! मूक युग का सिनेमा शेक्सपियर, गेटे, डिकेन्स, टोलस्टोय, कोनराड आदि की कृतियों से समृद्ध है! सिर्फ़ शेक्सपियर की कृतियों पर ही मूक फ़िल्मों के दौड़ में चार सौ से ज़्यादा फ़िल्मों का निर्माण हो चुका था! भारत में भी सिनेमा के आरंभिक चरण में ज्यादातर फ़िल्मों के कथानक पौराणिक कथा साहित्य पर आधारित ही मिलते है! रामायण, महाभारत, उपनिषद, जातक कथाओं पर अनेक फ़िल्मों का निर्माण देखने को मिलता है! भारत में पूर्णरूप से निर्मित सबसे पहली फ़िल्म 'राजा हरीशचंद्र' भी पौराणिक साहित्य पर ही आधारित थी! भारतीय फ़िल्मकारों ने पौराणिक, एतिहासिक घटनाओं को अपने हिसाब से कहानी में नाटकीयता और रोमांच का तड़का लगाते हुए अनेक सफल फ़िल्मों का निर्माण किया और सिनेमा ने पौराणिक, एतिहासिक साहित्य से आम दर्शक वर्ग को अवगत कराया!

सिनेमा में ध्वनि के आविर्भाव ने सबसे बड़ा परिवर्तन लाया! ध्वनि के आगमन के बाद सिनेमा ने कथा–कहानी के लिए साहित्यकारों की ओर रूख किया! अचानक से आधुनिक साहित्यिक कृतियों जैसे उपन्यास, नाटक, कहानी पर फ़िल्मी पटकथाएँ लिखी जाने लगी और अब पौराणिक और एतिहासिक साहित्य के अलावा आधुनिक साहित्य को भी सिल्वर स्क्रीन पर चित्रित किया जाने लगा! प्रेमचंद, अमृतलाल नागर, भारत व्यास, कवि प्रदीप, रजिंदर सिंह बेदी, राही मासूम रजा आदि का बॉलीवुड में आना इस बात की पुष्टि करता है! इनमे से कुछ लोग पूरी तरह से सिनेमा के हो कर रह गए तो कुछ लोग सिनेमा लेखन छोड़ कर चले गए! जो छोड़ कर गए उनमें से कुछ लेखकों का यह भी मानना था की आनेवाले समय में सिनेमा साहित्य की हत्या कर देगा!'महान साहित्यकार प्रेमचंद ने स्वयं सिनेमा की ताक़त को पहचाना और स्वीकार था! उनका मानना था की साहित्यिक कृतियों पर बनी फ़िल्मे जनता, समाज और राष्ट्रहित में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है!'[२]

फ़िल्मों का प्रभावी संचार गुण और उसकी महता ने ही प्रेमचंद को इस विधा की ओर आकर्षित किया था! ये अलग बात है की प्रेमचंद का सिनेमाई सफ़र लम्बा नहीं चला और उन्होंने जल्दी ही सिनेमा लेखन को अलविदा कह दिया लेकिन उनकी रचनाओं पर आगे चल कर कई क्लासिक फ़िल्मों का निर्माण हुआ! सिनेमा और साहित्य जगत में एक भ्रमित सोच है की साहित्यिक कृतियों पर अच्छा सिनेमा बनाना काफ़ी मुश्किल काम है! साहित्यकारों का मानना है की साहित्यिक कृति पर फ़िल्म बनाते समय फ़िल्मकार रचना के साथ पूर्णरूप से न्याय नहीं कर पाते! ऐसे लोगों को सत्यजीत रॉय, ह्रितिक घटक, विमल रॉय, गुलज़ार, मणि कौल, कुमार साहनी, केदार शर्मा, अडुर गोपालकृष्णन जैसे दिग्गज फ़िल्मकारों की फ़िल्मे एक बार ज़रूर देखनी चाहिए!

सिनेमा और साहित्य के रिश्तों में एक और अहम बात है 'व्यवहारिकता'! साहित्यिक कृति एक विशेष काल खंड का दस्तावेज़ होती है, कहते है साहित्य इतिहास का दर्पण होता है! साहित्य जब सिनेमा के माध्यम से परदे पर उतरता है तब वह एतिहासिक क्षणो के साथ ही वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों को भी बयाँ करता है और दो अलग अलग काल खंडो को अपने मायावी कला और तकनीक से इस प्रकार प्रस्तुत करता है रचना की काल्पनिकता और सच्चाई में अंतर करना अत्यंत ही कठिन हो जाता है! परदे पर घटित हो रही घटना से दर्शक इस प्रकार जुड़ जाता है जैसे वह उसका हिस्सा हो! सिनेमा में गहरे और अमूर्त विचारों को परदे पर जितने प्रभावी और शानदार ढंग से चित्रित करने की क्षमता है उतनी ही क्षमता साहित्य के पास भी है! सिनेमा की सबसे बड़ी ख़ासियत है, उसके माध्यम से कथा कहने की प्रक्रिया! सिनेमा किसी भी साहित्यिक कृति को अनेक तरह से प्रस्तुत कर सकता है! साहित्य और सिनेमा के संबंधों पर मशहूर

फ़िल्मकार गोदार ने कहा है कि 'सिनेमा में भी कहानी की तरह एक प्रारंभ, एक मध्य और एक अंत होना चाहिए पर यहाँ यह ज़रूरी नहीं की यह सब उसी क्रम में हो!' गोदार आगे कहते है कि 'यह महत्वपूर्ण नहीं की आप कोई भी चीज़ कहाँ से उठाते है, महत्वपूर्ण यह है की आप उसे कहाँ पहुँचाते है!'[३]

यहाँ गोदार साहित्यिक कृतियों के फ़िल्मी अडप्टेशन की तरफ़ इशारा कर रहें है! यहाँ हम उदाहरण के लिए मशहूर नाटककार शेक्सपियर की प्रसिद्ध रचना 'मैकबेथ' और शरतचंद्र की कालजयी रचना 'देवदास' को लेते है, दोनो ही रचनायें अलग–अलग देश, भाषा, और समय में लिखी गई है! इन दोनो साहित्यिक कृतियों पर अलग–अलग समय में अलग–अलग फ़िल्मकारों ने अनेकों फ़िल्मे बनाई है! 'मैकबेथ' पर १९५७ में अकिरा कुरोसावा ने 'थ्रोन ऑफ ब्लड' और २००३ में विशाल भारद्वाज ने 'मक़बूल' का निर्माण किया! ग़ौरतलब है कि दोनो फ़िल्मे अलग–अलग कालखंड में अलग भाषा, संस्कृति, स्थान और परिस्थितियों को ध्यान में रख कर बनाई गई है! एक तरफ़ 'थ्रोन ऑफ ब्लड' में कुरोसावा ने जापानी मार्शल आर्ट, जापानी संस्कृति, इतिहास और स्थानीय मुद्दों को समाहित किया है वहीं विशाल भारद्वाज ने 'मक़बूल' में मुंबईया अंडरवर्ल्ड को मुख्य पृष्टभूमि में रख कर, वर्तमान राजनीतिक सामाजिक मुद्दों को इस फ़िल्म में चित्रित किया है! दूसरी साहित्यिक कृति है 'देवदास'! इस उपन्यास पर वैसे तो अनेक भाषाओं में कई बार फ़िल्मों का निर्माण हो चुका है लेकिन हिंदी में मुख्य रूप से चार बार व्यवसायिक रूप से सफल और कलात्मक दृष्टि से बेहतरीन फ़िल्मों का निर्माण हुआ है! प्रथम बार १९३५ में देवदास को परदे पर फ़िल्मकार प्रथमेश बरुआ ने चित्रित किया इसमें देवदास की भूमिका में थे सुप्रसिद्ध अभिनेता और गायक कुंदनलाल सहगल! दूसरी बार बिमल रॉय ने १९५५ में दिलीप कुमार को लेकर देवदास का निर्माण किया! बिमल रॉय प्रमथेस बरुआ निर्मित देवदास के छायाकार थे और वह 'देवदास' की कहानी से इतने प्रभावित थे की जब उन्होंने फ़िल्म निर्देशन शुरू किया तो अपने नज़रिए से एक बार फिर से देवदास का निर्माण किया! सन २००३ में एक बार फिर मशहूर फ़िल्मकार संजय लीला भंसाली ने शाहरुख़ खान को लेकर 'देवदास' बनाई और २००९ में अनुराग कश्यप ने अभय देओल, माही गिल और कल्की को लेकर एक बिलकुल अलग देवदास बनाई जिसका शीर्षक था 'देव डी'! अगर इन चारों फ़िल्मों का ध्यान से अध्ययन किया जाए तो हम पाते है कि हर फ़िल्म में 'देवदास' को बिलकुल अलग–अलग तरीक़े से परदे पर प्रस्तुत किया गया है!

इनमे पहली दोनो फ़िल्मे जहाँ तक अपने बेजोड़ अभिनय, और गीत–संगीत के लिए जानी जाती है वहीं संजय लीला भंसाली की देवदास भव्य सेट, महँगे और राजसी वेश–भूषा तथा रूप–सज्जा के लिए जानी जाती है! अनुराग कश्यप की 'देव डी' बिलकुल अलग अंदाज़ में बनाई गई है! इस फ़िल्म में अनुराग ने देवदास को आधुनिक परिवेश में रूपांतरित कर बिलकुल नएरंग–रूप में प्रस्तुत किया और बेहतरीन सिने–कला का उदाहरण दर्शकों और आलोचकों के समक्ष चित्रित किया! इन चारों फ़िल्मों ने व्यवसायिक रूप से बॉक्स ऑफ़िस पर ज़बरदस्त कमाई भी की है! यहाँ जब हम दोनो ही साहित्यिक कृतियों 'मैकबेथ' और 'देवदास' पर बनी फ़िल्मों को देखते है तो पाते है की फ़िल्मकारों ने फ़िल्म निर्माण के दौरान कहानी की आत्मा को पूरी तरह से बचाए रखते हुए बेहतरीन फ़िल्मो का निर्माण किया है! इन फ़िल्मों ने 'मैकबेथ' और 'देवदास' जैसी साहित्यिक कृतियों को और प्रसिद्धि ही प्रदान किया है! हालाँकि ऐसे भी अनेक उदाहरण है जहाँ एक कालजयी साहित्यिक कृति पर बहुत ही औसत दर्जे की फ़िल्में बनी है जिसे देखकर उस साहित्यिक रचना और रचनाकार दोनो को ही आत्मिक पीड़ा से गुज़रना पड़ा होगा! इसका एक बेहतरीन उदाहरण है सलमान रश्दी की चर्चित रचना

'मिडनाइटस चिल्ड्रेन' पर इसी नाम से फ़िल्मकार दीपा मेहता द्वारा बनाई गई फ़िल्म! इस फ़िल्म को देख कर निराशा ही हाथ लगती है, और ऐसा जब भी किसी साहित्यिक कृति के साथ होता है तो सिनेमा और साहित्य के बीच संबंधों में तल्ख़ी अवश्य देखने को मिलती है!

साहित्यिक कृतियों पर बेहतरीन फ़िल्मे नहीं बन सकती, इस भ्रम को विश्वविख्यात फ़िल्मकार सत्यजीत राय, मृणाल सेन, मणी कौल, कुमार साहनी, केदार शर्मा, गुलज़ार आदि ने अपनी फ़िल्मों के माध्यम से अनेकों बार तोड़ा है! प्रेमचंद की दो कहानियों 'सद्गति' और 'शतरंज के खिलाड़ी' पर दिग्गज निर्देशक सत्यजीत राय ने बहुत ही उम्दा क्लासिक फ़िल्मों का निर्माण किया है वहीं गुलज़ार की दो फ़िल्मे 'आँधी' (१९७५) और 'अंगूर' (१९८२) साहित्यिक रचनाओं पर आधारित है! 'आँधी' साहित्यकार कमलेश्वर की कहानी पर आधारित है तो अंगूर 'कॉमेडी ऑफ़ एर्रर्स' का अडेप्टेसन है! महान फ़िल्मकार डी डब्ल्यू ग्रिफ़िथ उसी तरह से फिल्म बनाना चाहते थे जिस तरह से चार्ल्स डिकेंस ने उपन्यास लिखे थे। यह एक फ़िल्मकार की साहित्य के प्रति भावना को ही दर्शाता है! ग्रिफ़िथ कभी भी साहित्यिक कृतियों की प्रतिष्ठा को खंडित कर फ़िल्म निर्माण नहीं करना चाहते थे!

रामायण से लेकर महाभारत तक और पाथेर पाँचाली, मेघे ढाका तारा से लेकर ट्रेन टू पाकिस्तान और पिंजर, तक, अनेक रचनात्मक मतभेदों और तल्खियों के बाद भी सिनेमा और साहित्य का सफ़र निरंतर चला आ रहा है! हाँ, यह संभव है कि एक फिल्म निर्माता मूल उपन्यास या क्लासिक के प्रति वफादार होने की लालसा तो रखता है और रचना को जस का तस प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, लेकिन यह भी है कि व्यवसायिक पक्षों को देखते हुए कुछ पहलुओं को अतिरंजित रूप में प्रस्तुत करता है। एक फ़िल्म निर्देशक यथार्थवाद के विचार से ग्रस्त हो सकता है ताकि वह समय और स्थान को अपनी रचनात्मक सोच, दृष्टि और अनुभव से तथ्यों को बिम्बो के द्वारा व्याखायित कर सके लेकिन उसे सिनेमा के बाक़ी पहलुओं को भी देखना पड़ता है! सिनेमा टोग्राफिक स्क्रिप्ट अपने आप में सिनेमा और साहित्य के बीच संबंध की एक अभिव्यक्ति है! सिनेमा को व्यक्त करने के लिए शब्दों की आवश्यकता होती है और साहित्य को भौतिक स्थान की आवश्यकता होती है! सिनेमा वह कला है जो इच्छुक लोगों की सबसे बड़ी संख्या को एकजुट करती है। जिस तरह से साहित्य फिल्मों को प्रेरित करता था, उसी तरह साहित्य भी फिल्मों से प्रेरित होता है। सिनेमा के निर्माण ने नई धारणाओं के साथ–साथ नई तकनीकों और साहित्यिक पाठ के दृष्टिकोण को लाया है। आरंभ से ही फिल्में साहित्य से बहुत प्रभावित होती आई हैं।

क्लासिक्स के अनुकूलन इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि उपन्यासों ने फिल्म निर्माताओं को व्यापक रूप से प्रेरित किया है। सिनेमा और उपन्यास दोनों में कथा समान है, भले ही कहानियों को कहने का तरीका अलग है। बीसवीं शताब्दी के अमेरिकी आधुनिक लेखकों पर फिल्मों का बहुत प्रभाव पड़ा। कई उपन्यासकारों ने अपने कथा में सिनेमा के सौंदर्य और तकनीकों को अपनाया। सिनेमा ने भी साहित्य के प्रति पाठकों के बीच रुझान पैदा करने का काम किया है! फ़िल्मकारों और साहित्यकारों के बीच जो सबसे बड़ा टकराव का कारण रहा है वह है साहित्यिक कृतियों को फ़िल्मांकित करने के दौरान उनके चरित्रों और प्लॉट में फ़िल्मकारों द्वारा अनेक बदलाव करना! शब्दों को पटकथा में परिवर्तित करते समय फ़िल्मकार फ़िल्मांकन की सीमा को ध्यान में रखते हुए और दर्शकों की माँग के अनुसार अनेक तत्वों को जोड़ता–घटाता है ताकि एक रोचक और मनोरंजक फ़िल्म का निर्माण किया जा सके! साथ ही साथ उसे निर्माता और बाज़ार का भी ध्यान रखना पड़ता है क्योंकि फ़िल्म

निर्माण में भारी पूँजी लगती और ऐसे में नुकसान का ज़ोख़िम कोई नहीं लेना चाहता है! दूसरी चीज़ है कि अगर कोई कहानी संग्रह या उपन्यास नहीं पसंद किया जाता है तो उससे सबसे ज्यादा क्षति लेखक को होती है लेकिन अगर एक फ़िल्म असफल होती ही तो धन के साथ ही सैकड़ों लोगों की मेहनत और उनका भविष्य ख़तरे में पर जाता है!

रॉबर्ट स्टैम के अनुसार– 'सिनेमा को साहित्य से अक्सर कमतर समझा गया है, इसके पिछे कई कारण रहे है! जैसे मुद्रित साहित्य का इतिहास लगभग ५०० वर्ष पुराना है और पांडुलिपियों का इतिहास तो हज़ारों वर्ष पुराना है जबकि सिनेमा का इतिहास महज़ सवा सौ वर्ष पुराना है! साहित्यिक कृतियों को लम्बे समय तक सिनेमा में पुनरावृति के रूप में ही प्रस्तुत किया गया है!'[४] यह ज़रूरी नहीं की जो चीज़ बहुत पुरानी है वह श्रेष्ट है और जो नई है वह महत्वहीन है! दोनो ही विधाएँ अपने–आप में महतवपूर्ण और उपयोगी है!

साहित्य और फिल्म के बीच घनिष्ठ संबंध सिनेमा के आगमन के साथ से ही मौजूद है, जो दोनों माध्यमों की मजबूत बिम्ब विशेषताओं के कारण है। आजकल प्रत्येक कला के लिए आवंटित माध्यम की सीमाओं का धुंधलापन है, क्योंकि फिल्में साहित्यिक हो जाती हैं और उपन्यास अधिक से अधिक सिनेमाई हो जाते हैं। हमें इनमे संतुलन बनाए रखना बहुत ज़रूरी है तभी दोनो समांतर रूप से अपनी पहचान और प्रभाव बनाए रखेंगे! वर्तमान समय में दोनो में वैसा द्वन्द देखने को नहीं मिलता जैसा कभी हुआ करता था! धीरे–धीरे सिनेमा का साहित्य में प्रभाव बढ़ा है और सिनेमा ने भी साहित्य को गंभीरता से लेना शुरू कर दिया है! वर्तमान समय में जब प्रत्येक क्षेत्र में बदलाव तेज़ी से हो रहा है ऐसे युग में सिनेमा के परिप्रेक्ष्य से साहित्य की मौखिकता और साहित्य के दृष्टिकोण से सिनेमा की प्रतिष्ठितता को समझने की आवश्यकता है! जहाँ तक रचनात्मक द्वन्द का प्रश्न है तो वह भी सदा चलता रहेगा और समांतर रूप से साहित्यिक कृतियों पर फ़िल्मों का निर्माण भी होता रहेगा!

संदर्भ सूची :–

१. सिनेमा के सौ बरस, सं– मृत्युंजय पृ–०३

२. वसुधा (अंक–८१) पृ–३६५

३. गोदार ऑन गोदार : लेखक– जाँ ल्युएक गोदार

४. नया ज्ञानोदय वार्षिकी (२०१७) पृ–१४

संदर्भ ग्रंथ :–

१. सिनेमा का इतिहास – मनमोहन चड्ढा।

२. द ऑक्स्फ़र्ड हिस्ट्री आफ़ वर्ल्ड सिनेमा, संपादक – जेफ़्री नोअल – स्मिथ।

३. नया ज्ञानोदय वार्षिकी (२०१७)

४. वसुधा (अंक–८१)

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 26-31

महात्मा गाँधी, 'नवजीवन' विचार पत्र और महिला सशक्तिकरण

संध्या इन्द्रवदनभाईकार
Ph.D. Research Scholar, Department of Journalism and Mass Communication,
Gujarat Vidyapith, Ahmedabad.

प्रस्तावना :-

गांधी जी के जीवन और कार्य के बारे में बहुत कुछ लिखा, शोध और अध्ययन किया गया है। आज के संदर्भ में गांधी जी के विचारों की प्रासंगिकता के बारे में काफी चर्चा हुई है, लेकिन गांधी जी के एक महत्वपूर्ण पहलू, अर्थात् गांधी जी के एक अत्यधिक प्रभावी संचारक के रूप के बारे में अपेक्षाकृत कम लिखा गया है।

गांधी जी भाषा और शब्दों के माध्यम से संवाद करने में माहिर थे। उनकी भाषा अत्यंत सरल, सटीक एवं संक्षिप्त थी। गांधी जी के विचार पत्र 'नवजीवन', 'हरिजन बंधु', 'हरिजन सेवक' और 'इंडियन ओपिनियन' और उनके लेखों के संग्रह 'सम्पूर्ण गाँधी वांग्मय' को प्रभावी संदर्भ के रूप में गांधी जी के विभिन्न भागों के अध्ययन के माध्यम से स्पष्ट रूप से यह समझा जा सकता है। उनके मुँह या कलम से कोई भी शब्द बिना अर्थ के नहीं निकलता था। अपनी बात रखने के लिए वह जितने आवश्यक हो उतने शब्दों का ही प्रयोग करते थे, न अधिक और न कम। जरूरत के मुताबिक। अपनी लेखन शैली के बारे में उन्होंने लिखा है कि 'सत्याग्रह में मेरी अतूट आस्था के कारण में क्रोध या किसी के प्रति दुर्भावना रख के नहीं लिख सकता। मैं सिर्फ लिखने के लिए या लोगों की भावनाओं को उकसाने के लिए नहीं लिख सकता। पाठकों को शायद यह एहसास न हो कि विषयों और शब्दावली के चयन में मुझे कितना संयम बरतना पड़ता है।'

काक साहेब कालेलकर ने अपनी पुस्तक 'आश्रम की बहनों के नाम पत्र' में कहा है कि 'बापूजी ने महिलाओं की सेवा के रूप में क्या किया और उसके क्या परिणाम आए, यह विस्तार से किसी महिला प्रतिनिधि द्वारा लिखा जाना चाहिए।' गांधी युग से महिला जागरूकता के एक विशेष युग का आरंभ होता है।" (कालेलकर, १९६८)

गांधी जी की पत्रकारिता और 'नवजीवन' विचार पत्र :-

गांधी जी के विदेश में पढाई करने जाने के बाद उन्होंने नियमित रूप से समाचार पत्र पढ़ना शुरू कर दिया। उस समय उनकी उम्र उन्नीस वर्ष की थी। हिन्दुस्तान में विद्यार्थी अवस्था में उनको समाचार पत्र पढ़ने की आदत नहीं थी। वह स्वभाव से शर्मीले थे और जहाँ कई लोग मौजूद हो वहाँ वे बोल भी नहीं पाते थे।

इक्कीस साल की उम्र में उन्होंने 'द वेजिटेरियन' नामक अंग्रेजी साप्ताहिक के लिए शाकाहार, भारतीय खान–पान की आदतों और कुछ हिंदी त्योहारों पर नौ लेख लिखे थे। इसके बाद, दो साल के अंतराल के बाद, गांधी जी ने पत्रकारिता फिर से शुरू की और उनकी कलम को उनकी मृत्यु तक कभी आराम नहीं मिला। उन्होंने केवल प्रभाव डालने के लिए कभी कुछ नहीं लिखा और सावधानी से अतिशयोक्ति से परहेज किया। उनका ध्येय सत्य की सेवा करना, लोगों को शिक्षित करना और अपने देश के लिए उपयोगी होना था।

पैंतीस वर्ष की उम्र में उन्होंने 'इंडियन ओपिनियन' का कार्यभार स्वयं संभाला। इस पत्र के माध्यम से उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में रहने वाले भारतीयों को एकजुट किया और उनका मार्गदर्शन किया। अंग्रेजी के साथ–साथ इस पत्र का गुजराती संस्करण भी फीनिक्स प्रेस द्वारा प्रकाशित किया जाता था। इन साप्ताहिक पत्रों के प्रत्येक अंक में गांधी जी के लेख छपते थे, उन पत्रों के अन्य संपादक भी थे, लेकिन उनके काम का सारा भार गांधी जी ने उठाया। उनकी इच्छा इन पत्रों की सहायता से जनमत जागरूक करना, गोरों और भारतीयों के बीच व्याप्त गलतफहमियों के कारणों को दूर करने और अपने देशवासियों के दोषों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करने की थी। 'यंग इंडिया' का संपादन स्वीकार करने के बाद उनको गुजराती भाषा की पत्रिका की कमी महसूस हूए। वह उस अंतर को भरने के लिए एक गुजराती पत्रिका शुरू करने के लिए उत्सुक थे। उन्होंने 'यंग इंडिया' के गुजराती और हिंदी संस्करण के रूप में 'नवजीवन' को गुजराती और हिंदी में प्रकाशित करना शुरू किया। इन पत्रों में वे नियमित रूप से अनेक लेख लिखते थे। किसान और मजदूर ही भारत के सच्चे सेनानी हैं। गांधी जी को इस बात पर गर्व था कि 'नवजीवन' के कई पाठक ऐसे किसान और मजदूर थे। (बंदोपाध्याय, १९९२)

'नवजीवन' गांधी जी ने किसानों और बुनकरों की भाषा में लिखने की इच्छा व्यक्त की, वे लिखते हैं "हिन्दुस्तान किसानों की झोपड़ियों में बसता है। बुनकरों की कला हमें हिंदुस्तान की भव्यता की याद दिलाती है। इसलिए मुझे खुद को किसान और बुनकर कहने पर गर्व है। मैं 'नवजीवन' किसानों की झोपड़ियों और बुनकरों के घरों तक पहुंचाना चाहता हूँ। मैं इसे उनकी भाषा में लिखना चाहता हूँ। इसलिए 'नवजीवन' हमेशा किसानों की खुशहाली आदि की बात उनकी भाषा में करेगा।'' उन्होंने 'नवजीवन' के माध्यम से महिलाओं को जागृत करने और पुरुषों को महिलाओं के प्रति अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक करने की इच्छा भी मन में रखी। (मोदी, १९७१)

जुगतराम दवे अपने लेख में 'नवजीवन' में कहते हैं, 'ये दिन १९१९–२० के थे। गांधी जी की ओर से सविनय अवज्ञा, हड़ताल और उपवास का आह्वान किया गया। अतः नवजीवन प्रेस में उनके हस्तलिखित लेखों की प्रतिदिन बाढ़ आती रहती थी। 'नवजीवन' का प्रत्येक अंक ८ पृष्ठों के स्थान पर १२ और १६ पृष्ठों का होने लगा।" (मेघाणी, २०१३)

महिला सशक्तिकरण :–

संस्कृत में स्त्री के लिए अनेक शब्द हैं। इनमें से एक है अबला और दूसरा है महिला। अबला का अर्थ है कमजोर, दूसरों द्वारा संरक्षित, सुरक्षात्मक और महिला का मतलब है महान, बहुत मजबूत। ऐसे श्रेष्ठ शब्द को एक ओर अबला तो दूसरी ओर महिला भी कहा जाता था। भारत में कहीं भी कोई अशक्त समिति नहीं है, महिलाओं की समितियाँ हैं। बहनों ने अपने लिए 'महिला' शब्द चुना दूसरे शब्दों में महिलाओं ने निर्णय लिया कि

उनके पास बड़ी शक्ति है, छोटी शक्ति नहीं। 'स्त्री' शब्द 'स्तु' धातु से बना है। स्त्र का अर्थ है विस्तार करना, फैलना। एक महिला पूरे विश्व में फैलाने का, प्रेम फैलाने का काम करती है। स्त्री शब्द से ही स्त्री के कार्य का बोध होता है। प्रेम की सीमा, प्रेम की व्यापकता स्त्री के माध्यम से होगी। नारी समाज की तारक है, तारिका–शक्ति है।

एक समय था जब महिलाओं को कमजोर समझा जाता था, लेकिन आजकल महिलाऐं सशक्त हो रही हैं। स्वामी विवेकानन्द ने महिला सशक्तिकरण के सन्दर्भ में कहा है कि 'जब तक विश्व के कल्याण के लिए महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होगा, तब तक विकास की कोई संभावना नहीं होगी।' हमारे समाज में कुछ ऐसा ही हुआ है और इसलिए महिलाओं को अधिकार देने की बातने पूरी दुनिया का ध्यानाकर्षित किया है।

Empowerment का मतलब है सशक्तिकरण। १९७० के दशक में इस शब्द की उत्पत्ति लैटिन अमेरिका में शिक्षा और शिक्षा की चर्चा के दौरान हुई थी। नारीवादी विचारकों और कार्यकर्ताओं ने इस अवधारणा को आगे बढ़ाया। १९८० के बाद इस अवधारणा का अधिकाधिक प्रयोग किया जाने लगा। सरल शब्दों में, महिला सशक्तिकरण का अर्थ है महिलाओं को अपनी इच्छाओं के अनुसार अपना जीवन जीने में सक्षम और स्वतंत्र होने का सशक्तीकरण। (सोलंकी, २०१९)

गांधी जी अपने शब्दों में कहते हैं कि "मेरा मानना है कि महिलाओं को उचित शिक्षा मिलनी चाहिए। लेकिन मैं यह जरूर मानता हूं कि एक महिला किसी पुरुष की नकल करके या उससे प्रतिस्पर्धा करके दुनिया में योगदान नहीं दे सकती। वह एक आदमी के साथ दौड़ सकती है, लेकिन अगर वह एक आदमी की नकल करने जाएगी, तो वह उस ऊंचाई तक नहीं पहुंच पाएंगी जिस पर चढ़ने की उसमें ताकत है। एक महिला को एक पुरुष की आदर्श छवि बनना होगा। उसे वह करना होगा जो एक आदमी नहीं कर सकता।" (प्रभु और राव, २०११)

अभ्यास का हेतू :–

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य 'नवजीवन' विचार पत्र में गांधी जी की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष देख रेख में प्रकाशित लेखो में महिला सशक्तिकरण से संबंधित मुद्दों का अध्ययन करना है।

'नवजीवन' के चूने हुए अंक : ७ सितम्बर, १९१९ से २५ दिसंबर, १९२१, कुल ११२ अंक

शोध पद्धति :–

शोध पत्र में 'नवजीवन' विचार पत्र में प्रकाशित लेखों में महिला सशक्तिकरण से संबंधित मुद्दों का अध्ययन करने के लिए "सामग्री विश्लेषण विधि" को शोध पद्धति के रूप में चुना गया है।

शोध की विभिन्न विधियों में से यह विधि अत्यंत महत्वपूर्ण है। कभी–कभी समस्या की प्रकृति ऐसी होती है कि जानकारी जीवित व्यक्तियों के बजाय दस्तावेजों या साहित्य से खोजनी पड़ती है। जिसमें जानकारी को इस तरह से व्यवस्थित नहीं किया जाता है कि शोधकर्ता सीधे इसका उपयोग कर सके। शोधकर्ता को पहले विश्लेषण के माध्यम से माहिती को जमा करना होता है और फिर उसका गुणात्मक विश्लेषण करना होता है। इसलिए, ऐसे अध्ययनों में सामग्री विश्लेषण की विधि का विशेष महत्व है। वर्णनात्मक अनुसंधान विधियों के समूह में सामग्री विश्लेषण विधि एक महत्वपूर्ण अनुसंधान विधि है। इस शोध पद्धति से दस्तावेजी सामग्री जैसे किताबें, पत्रिकाएँ, समाचार पत्र, टीवी कार्यक्रम, रेडियो कार्यक्रम, उपन्यास, नाटक, फिल्में और अन्य सभी मौखिक या

लिखित साहित्य का विश्लेषण किया जाता है। (उचाट, २००६)

'नवजीवन' विचार पत्र में प्रकाशित महिला सशक्तिकरण से संबंधित मुद्दों का अध्ययन :-

'नवजीवन' विचार पत्र के चुने हुए अंकों में प्रकाशित लेखो में महिला सशक्तिकरण से संबंधित मुद्दों के अध्ययन के दौरान प्राप्त हुई जानकारी निम्नलिखित अनुच्छेद में देखने को मिलती है।

नवजीवन के प्रथम अंक में हमारा उद्देश्य शीर्षक लेख में गांधी जी लिखते हैं, ''मैं ईश्वर से हमेशा प्रार्थना करूंगा कि महिलाएं घर पर 'नवजीवन' पढ़ें। नारी के बिना धर्म की रक्षा कौन करेगा? यदि स्त्रियाँ अज्ञानी और मूर्ख रहेंगी, यदि स्त्रियाँ हिंदुस्तान की स्थिति जान नहीं पाएंगी, तो भविष्य के लोगों का क्या होगा? इसलिए 'नवजीवन' महिलाओं को जागृत करेगा और पुरुषों को महिलाओं के प्रति उनके कर्तव्यों के प्रति जागरूक करने का प्रयास करेगा।" इस प्रकार नवजीवन के प्रकाशन के उद्देश्य में ही महिलाओं के मुद्दों को प्राथमिकता दी गई है।

स्वदेशी आंदोलन के दौरान दाहोद में आयोजित महिलाओं की सामूहिक बैठक के बारे में गांधी जी लिखते हैं 'मेरा हमेशा से मानना रहा है कि भारत की मुक्ति महिलाओं के उत्थान में निहित है'। गांधी जी ने स्वदेशी आंदोलन का व्यापक प्रचार करते हुए गरीब बहनों को अपने खाली समय में कताई करके कुछ धन अर्जित करने के साथ–साथ देश के आवश्यक बड़े व्यवसाय को प्रोत्साहित करने का गरीब बहनों को आह्वान किया।

बहनों पर विषयक अपने संपादकीय लेख में गांधी जी अमीर बहनों से गरीब बहनों की इज्जत की रक्षा करने को कहते हैं। उपयुक्त व्यवसाय की कमी के कारण बहनों की इज्जत को खतरे में डालने के बजाये, बहनों को हाथ से कताई और हाथ से बुनाई की प्रक्रिया में बढ–चढ कर भाग लेने के लिए कहा जाता है। यह महिलाओं को सार्वजनिक जीवन का पोषण करने, गरीबों की मदद करने, हजारों महिलाओं की जान बचाने, भारत को आर्थिक आजादी दिलाने जैसे महान कार्य में अपना योगदान देने के लिए भी कहता है। विचाररत्नो शीर्षक के तहत, श्रीमती जाईजा जहांगीर पेटिट खुबसूरती नामक परी कथा में महिलाओं को आंतरिक सुंदरता के महत्व के बारे में बताती हैं।

अपने संपादकीय लेख 'विधवाओं की घबराहट' में हिंदू समाज को संबोधित करते हुए गांधी लिखते हैं, ''विधवा धर्म का पालन करना एक पुण्य कर्म है, लेकिन विधवा से विवाह करना बिल्कुल भी पाप कर्म नहीं है।'' गांधी जी ने बाल विधवाओं के विकास को प्रोत्साहित किया और जब बाल विधवाएं पुनर्विवाह करना चाहती हों तो ज्ञातिओं से कहा कि वे उनका समर्थन करें।

विद्या रमणभाई नीलकंठ ने कामकाजी महिलाओं पर अपने लेख में कामकाजी महिलाओं के साथ पुरुषों द्वारा किए जाने वाले अशिष्ट व्यवहार और उनके साथ बातचीत में इस्तेमाल की जाने वाली अभद्र भाषा की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया है और पुरुषों से कामकाजी महिलाओं की इज्जत की रक्षा करने और उनके प्रति इस तरह के व्यवहार को सुधारने की विनती की है।

डॉ. चिमनलाल मगनलाल की पत्नी 'देशोन्नति में महिलाओं का स्थान' लेख में कहा है कि लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने का समान अधिकार और कर्तव्य दोनों है। चूँकि देश की प्रगति शिक्षित लोगों पर आधारित है, यदि देश की माताएँ अशिक्षित हैं, तो बच्चों पर घर की शिक्षा का गलत प्रभाव होगा। क्योंकि वे अपना अधिकांश समय उनके साथ बिताते हैं। कुछ समुदायों में महिलाओं को पर्दे में रखने की प्रथा को हटाने की बात कही जाती

है क्योंकि इससे महिलाओं के स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचता है। इसके अलावा, वे महिलाओं को परिवार चलाने के लिए आर्थिक रूप से सक्रिय होने और उन महिलाओं को जो आर्थिक रूप से समृद्ध परिवारों में हैं उन्हें समाज सेवा और जन कल्याण की भावना से नए कौशल सीखकर मदद करने के लिए कहते हैं।

एक तरफ अनसूया बहन साराभाई मिलों में काम करने वाली महिला मजदूरों के अधिकार, उनके काम के घंटे, गर्भवती महिलाओं को मिलने वाली रियायतें और सुविधाओं की बात करती हैं। तो दूसरी तरफ गुलाबबाई फिरोजशाह को तब श्रमिक महिलाओं के बच्चों के स्वास्थ्य की चिंता होती है।

'विधवाओं का अभिशाप लेख' में गांधी जी ने हिंदू समाज में विधवाओं की स्थिति को देखते हुए कुछ सुधारों का सुझाव दिया है। बाल विवाह रुकना चाहिए। पन्द्रह वर्ष से कम आयु की विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति दी जानी चाहिए। विधवाओं की शिक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण के लिए समर्थन होना चाहिए। विधवापन हिंदू धर्म का आभूषण है। गांधी जी रमाबाई रानडे को इसका एक सुंदर उदाहरण बताते हैं।

सन १९२० के दौरान चल रहे असहयोग आंदोलन में महिलाएं कैसे योगदान दे सकती हैं, यह बताते हुए गांधी जी लिखते हैं, 'सबसे बड़ा काम हमेंशा स्वदेशी है।" स्वतंत्रता के इस महामंत्र को नारी जाने और उसे ही अपना धर्म समझे।

बहनों पर लिखे लेख में गांधी कहते हैं कि महिलाओं ने हमेशा धर्म की रक्षा की है। महिलाओं ने अपनी जिन्दगी तक धर्म को सौंप दी है। उन्होंने उस समय चल रहे स्वदेशी आन्दोलन में आभूषणों के रूप में अपना उचित योगदान देने को कहा। इसके अलावा, जब गांधी जी तिलक स्वराज आंदोलन के लिए चंदा इकट्ठा करने के लिए एक परिवार से मिलने जाते हैं, तो माधुरी और पुष्पा नाम की दो लड़कियां भी अपने गहने दान कर देती हैं। गांधी जी स्त्रियों को स्वदेशी आन्दोलन में अपने सहकार के लिए उनकी उम्र को न देखते हुए बचपन से ही उनमें सशक्तिकरण का गुण विकसित करने को कहते हे जिसके लिए माधुरी और पुष्पा उत्कृष्ट उदाहरण हैं। बारिसल में उनके साथ एक व्यक्तिगत बातचीत के माध्यम से गांधी जी ने 'पतित बहनो' लेख में कहा है कि 'स्वराज का अर्थ है पिछड़े हुए लोगों का उद्धार।' गांधी अपनी पतित बहनों से संवाद के माध्यम से हिंदुस्तान की हर बहन का आह्वान करते हैं।

उपसंहार :–

गांधीजी के 'नवजीवन' विचार पत्र के सन १९१९ से १९२१ तक के पत्रों का अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि गांधी जी ने 'नवजीवन' विचार पत्र के लेखों के माध्यम से स्त्री शिक्षा को प्राथमिकता के रूप में स्वीकार किया था।

गांधी जी ने अपनी सरल लेखन शैली, अपने संपादकीय लेख, महिलाओं के साथ अपनी बैठकों के संवाद, पत्रों, श्रीमती जाईजा जहांगीर पिटिट, सरोजिनी नायडू, अनसूया बहन साराभाई, गुलाबबाई फिरोजशाह, विद्या रमणभाई नीलकंठ, सरूप रानी नेहरू आदि लेखिकाओं द्वारा लिखे गए लेखों के माध्यम से लिए गए नोंध में, गांधीजी ने महिलाओं की शिक्षा की हिमायत की, महिलाओं की शिक्षा, महिलाओं को अपने परिवार की मदद करने के लिए पैसा कमाना चाहिए, बाल विवाह को समाप्त किया जाना चाहिए, पन्द्रह वर्ष से कम उम्र की बाल विधवाएं पुनर्विवाह कर सकती हैं और उनके विकास में सुधार किया जाना चाहिए, समृद्ध वर्ग की महिलाएं भारत को कताई के माध्यम से समाज सेवा करने और गरीब वर्ग की बहनों के लिए एक उदाहरण बनने के लिए प्रेरित

किया जाना चाहिए। गांधी जी अपने लेखों में ऐसे कई बिंदुओं को दर्शाते हैं।

गांधीजी के 'नवजीवन' विचार पत्र में गांधीजी कहते हैं कि 'नवजीवन' के लेख महिलाओं को जागृत करेंगे। और मुख्य रूप से महिलाओं के लिए लिखे गए 'नवजीवन' के सभी लेखों और 'नवजीवन' के पहले दो वर्षों में लिखे हुए लेखों का अध्ययन करने के बाद जिसमें अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं का भी उल्लेख है, एक प्रमुख परिणाम यह उभरकर सामने आया है कि महिलाओं के बारे में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से लिखे गए लेखों ने महिलाओं को मानसिक, शारीरिक, आर्थिक और व्यावहारिक रूप से सशक्त बनाने का संदेश देने की कोशिश की है।

संदर्भ सूचि :-

1. अनुबंदोपाध्याय, (१९९२), गांधी जी लेखक, पत्रकार, मुद्रक और प्रकाशक, अहमदाबाद : नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद।
2. आरके प्रभु और यू. आर. राव. (२०११), महात्मा गाँधी के विचार, नई दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट, इन्डिया।
3. काका साहेब कालेलकर, (१९६८), आश्रम की बहेनोको पत्र, अहमदाबाद, नवजीवन मुद्रणालय।
4. डॉ. दिनेशचंद्र उचाट, (२००९), शिक्षण और सामाजिक विज्ञान में शोधना पद्धति शास्त्र, राजकोट।
5. भाग्यवान सोलंकी, (दिसम्बर, २०१९), आदिवासी महिलाओं का विकास यानी आदिवासी समाज का विकास, नोलेज कोनसोर्दियम ऑफ गुजरात, १–२
6. महेंद्र मेघाणी, (२०१३), गाँधी–गंगा भाग–१, अहमदाबाद, संस्कार साहित्य मंदिर।
7. रमण मोदी, (१९७१), गांधी जी का साहित्य, अहमदाबाद, नवजीवन मुद्रणालय।
8. https://www.zigya.com/assets/book_store/GSO121_4.pdf
9. https://www.gandhiheritageportal.org/journals&by&gandhiji/navjivan

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 32-36

भारतीय शिक्षा, धर्म और संस्कृति में स्तूप

डॉ. नितेश चौधरी
शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, म. प्र.

मनुष्य जीवन में शिक्षा एक विशद संकल्पना हैं जिसकी प्रक्रिया मानव जीवन के आरंभ से होकर उसके आखिरी साँस तक चलता रहता हैं। इसकी सहायता से मानव का केवल चरित्र, स्वभाव ही नहीं अपितु मानव के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में व्याप्त तमस {अंधकार} से भी मुक्ति पाई जा सकती हैं। हमारे देश में पुरातन काल से ही औपचारिक शिक्षा के संग अनौपचारिक एवं प्रभावशाली शिक्षा की सहायता से सामाजिक तथा धर्मवर्ती शिक्षा का प्रबंध किया जाता रहा हैं। पूर्वकालीन भारत में शिक्षा की प्रथा को स्थाई बनाए रखने में वास्तुकला तथा प्रतिमा कौशल के योगदान को अस्वीकार नहीं किया जा सकता हैं। भवन धाम स्थापत्य निर्माण के साथ ही प्रतिमा एवं दस्तकारी, हस्तकला की भी उन्नति हुई जिनके सर्वोत्कृष्ट निदर्शन {उदाहरण} मंदिरों, विहारों और कंदराओं के रूप में आज भी मौजूद हैं, जो अपनी बाहरी व भीतरी सज्जा और अलंकरण के रूप में प्रस्तुत की गई हैं। कई प्राचीन कहानियाँ अकस्मात ही जन शिक्षा का एक प्रबल माध्यम बन जाती हैं। समस्त भारत में छितराएं {बिखरे} हुए प्राचीन स्तूपों व देवालयों में जो मनोहारी उत्कीर्ण आकृतियाँ मिलते हैं उनसे स्पष्ट हो जाता हैं कि तत्कालीन भारतीय शिक्षक दृश्य साधनों को कितनी अहमियत देते थे।[1]

भारतीय धर्म की सीमा अत्यंत विस्तीर्ण रही हैं। धर्म के आदर्श भाव से सामाजिक चीजें भी सहसंबंद्ध रही हैं। भारतीय कला की उन्नति में धार्मिक प्रवृत्तियाँ बहुत मजबूत साबित हुई हैं। प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति का विकास विदेशों में भी रहा हैं जिसकी पुष्टि विश्व के विभिन्न देशों के स्मारक, मठ, स्तूप, अभिलेख व कई अनेक ग्रंथों से होती हैं।[2] ऋग्वेद काल से ही मनुष्य के नैतिक आचरण को धर्म के आवश्यक अंग के रूप में स्वीकार किया गया हैं। मानव का चरित्र स्वयं मनुष्यों के कारण उन्हीं के द्वारा निश्चित किया गया हैं। धर्म शब्द की उत्पत्ति धृ धातु से हुई हैं जिसका अर्थ हैं धारण या पालन करना होता हैं।[3] धर्म की माने तो मनुष्य के जीवन नैया का अंतिम किनारा निर्वाण प्राप्ति हैं। मानव का चरित्र स्वयं मनुष्यों के कारण उन्हीं के द्वारा निश्चित किया गया हैं।[4] भारतीय दार्शनिकों के अनुसार सभी धर्मों का मूल उद्देश्य एक ही हैं। धर्म मनुष्य को उसके लक्ष्य व कार्यों के प्रति उदीयमान होने के लिए प्रेरणा देता हैं। मनुष्य के जीवन को प्रेरणा देने के लिए प्राचीन काल से वर्तमान तक विभिन्न धार्मिक मंदिर, मठ, बिहार जैसे अनेक धार्मिक स्थलों का निर्माण कराया गया हैं जिससे समाज को सही दिशा–निर्देश मिल सके। ऐसी मान्यता हैं कि धार्मिक कार्यों से समाज में नैतिक आचरणों का अभ्युदय होता हैं। इसलिए भारतीय कला का परिरूप {प्रतिरूप} धार्मिक धारणाओं से ओत–प्रोत होते हैं। मनुष्य अपने नैतिक मूल्यों के कारण भी धार्मिक कार्यों में रुचि दिखाता हैं जो उनके मनोवृत्ति का सूचक होता

हैं। इससे मानव अपने आत्मीय आनंद एवं आत्मसम्मान का अनुभव कर अपने स्थूल जीवन को भी श्रेष्ठ बनाता हैं। मौर्य सम्राट अशोक ने भी अपने धार्मिक लेखों में नैतिक गुणों का पालन करने का संदेश दिया हैं।[5] भारतीय कला के इतिहास से यह ज्ञात होता हैं कि आध्यात्मिक तथा भौतिक ऐश्वर्य को प्रकट करने वाले उन्हीं कार्यों से मानव के सत्कृतियों और भावनाओं का अभिव्यजन होता हैं। मनुष्य ही वह प्राणी हैं जिसने प्रकृति द्वारा प्रदत्त सभी वास्तुकला को अपनाने के साथ ही निरंतर विकास की ओर कदम बढ़ाने में अग्रसर हैं।

संस्कृति के प्रारंभिक काल से मनुष्य ने शिल्पों का श्रजन किया हैं। उनमे से आज कुछ नष्ट हो चुके हैं एवं कुछ पुरातत्ववेत्ताओं के द्वारा अन्वेषण कार्य हेतु खनन के माध्यम से खोजे भी गए हैं। इन खोज की वस्तुओं में जहाँ शैवधर्म, वैष्णवधर्म, शक्ति उपासना, कलचुरि, वंश, गुप्त वंश आदि से संबंधित मूर्तियाँ और शिल्प मिले हैं वही जैन और बौद्ध धर्म के भी अवशेष प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए हैं। इन पुरा अवशेषों में प्राचीन काल की जानकारी उपलब्ध करने में स्तूपों का स्थान भी प्रमुख माना गया हैं। ये स्तूप बौद्ध काल के प्रमुख स्मृति, धरोहर, निशानी कहलाते थे। धार्मिक मनोवृत्ति के सामर्थ्य धारा प्रवाह के चलते स्तूपों का निर्माण विविध रूप में होने लगा था। उस काल में इससे संबंधित सामाजिक कार्यों का भी विशिष्ट महत्व रहा हैं।

स्तूप व चैत्य :-

प्राचीन भारतीय इतिहास का अध्ययन करने पर यह अनुभव किया जा सकता हैं कि हिन्दू, बौद्ध अथवा जैन धर्म का कोई भी वास्तु–स्मारक आदि हो उन सभी में धर्माश्रयता ही शक्तिशाली साबित हुई हैं।[6] भारत के प्राचीन धरोहरों में स्तूपों का स्थान भी प्रमुख कहलाता हैं। स्तूप संस्कृत के स्तुपः तथा प्राकृत के थूप से बना हैं जिसका अर्थ एकत्रित करना या ढेर लगाना होता हैं।[7] अतः मिट्टी के ऊँचे टीलेनुमा स्वरूप को स्तूप के नाम से जाना जाने लगा। तक्षशिला से प्राप्त एक शिलालेख से स्तूप की जानकारी प्राप्त होती हैं।

इतिहास के जानकार स्तूप शब्द को यूरोपियन के टुम्ब से निकला मानते हैं। इसमें भिन्नता यह हैं कि जमीन में मृत शरीर को दफना दिया जाता हैं परंतु स्तूप को पवित्र स्थल माना जाता हैं इसलिए स्तूप को अंग्रेजी भाषा के शब्द से संबंधित माना जाना तर्कपूर्ण प्रतीत होता हैं। प्रायः स्तूप के पास की भूमि से पवित्रता का भाव एवं दूषित, मलिनता से सुरक्षा करने की अभिलाषा अंतर्निहित होती हैं।

साहित्यों में स्तूप के लिए चैत्य शब्द भी प्रयोग में लाया गया हैं। चैत्य शब्द चि चयन से निकला हैं क्योंकि इसमें ईटों का चुनाव करके भवन को बनाया जाता हैं। इसके साथ ही पवित्र पदार्थों को एकत्रित करना भी चयन कहलाता हैं। इस तरह चुनाव या चयन क्रिया के कार्य को चैत्य माना जाता हैं। रामायण काल में महापुरुषों की समाधि स्थल को चैत्य ही माना गया हैं। समाधि से संबंधित स्मारक स्पष्ट रूप से स्तूप कहलाता हैं। उन मनोभावों की आकृति को चैत्य भी माना जा सकता हैं परन्तु चैत्य में अवशेष का भाव होता हैं एवं स्तूप में स्पष्ट दिख जाता हैं। अमरावती से प्राप्त लेखों में चेतिय या महाचेतिय लिखा हुआ हैं :–

भगवतो महाचेतिय पदमले अपनों।
धम्मथान दिव खम्भों पतिथावितो।।

अर्थात् – महाचेतिय या स्तूप के आधारशिला में दीप–स्तंभ को स्थापित किया गया हैं। चैत्य के समीप लगाए गए स्तंभों को प्रसाद नाम दिया गया था। पहाड़ी गुफाओं के सामने खड़े इन स्तंभ को कीर्ति स्तंभ भी कहा गया। भगवान बुद्ध के स्तूपों में भी स्तंभों को लगाया गया हैं। सारनाथ व साँची के स्तूपों से इसकी पुष्टि

की जा सकती हैं।[8] धर्म चक्र का निर्माण ईश्वर के चैत्य के पास दान के परिणामस्वरूप किया गया हैं।[9] इस तरह अवशेष का संबंध सीधा चैत्य से हैं इसलिए स्तूप को चैत्य का पर्यायवाची माना जा सकता हैं। चैत्य और स्तूप में फर्क इतना हैं कि चैत्य पर्वत और कंदराओं में बनाया गया था एवं स्तूप का स्वरूप मौजूदा रहता था इसलिए उसमे अवशेष रखने का सवाल ही नहीं उठता। चैत्य शब्द का उपयोग बौद्ध सम्प्रदायों के लोगों ने किया था क्योंकि चैत्य को बौद्ध धर्म का प्रतीक चिन्ह माना जाता हैं। चैत्य शब्द का सर्वप्रथम उपयोग बौद्ध धर्म के लोगों ने ही किया था लेकिन स्तूप के अंदर के भाग में पात्र में अवशेष संस्थापित करके आलय {भवन} निर्माण किया जाता था। इसे पर्वत–पहाड़ों से अलग सपाट धरातल में ईटों से निर्मित किया जाता था। इस तरह गुहा का आकार स्तूप की भांति दिखने के कारण ही उसे चैत्य नाम से संबोधित किया जाने लगा था।

स्तूप की वैदिक प्रथा :–

बौद्ध युग से पहले भी स्तूप का निर्माण किया जाता था जिसका इतिहास वैदिक काल तक देखा जाता हैं। ऋग्वेद में अग्निदग्ध {अग्नि से जलना} अथवा मृत शरीर को जमीन में दफनाने का भी वर्णन मिलता हैं यह क्रिया पूर्ण रीती–रिवाज से संपन्न किया जाता था। संभवतः पार्थिव–शरीर को धरती के अंदर दफन करने को भूमिगृह से संबोधित किया गया होगा। धरती के भीतर शव के साथ उसकी प्रिय वस्तुओं को भी रखा जाने का ववरण मिलता हैं। वैदिक युग में मानव शरीर को जमीन में गड़ाकर उसमे एक समाधि का निर्माण कर उस मनुष्य का संक्षिप्त विवरण लिखवा दिया जाता था। यजुर्वेद से प्राप्त विवरण के अनुसार जिस स्थान में मनुष्य की समाधि बनाई जाती थी उस स्थान के चारों तरफ एक निश्चित घेरे का निर्माण कर दिया जाता था। इसके पीछे उनकी मान्यत यह थी कि समाधि के पवित्र स्थान को संसार के अपवित्र वातावरण से दूर रखा जा सकता हैं। बाद में परिधि को वेदिका के नाम से भी संबोधित किया जाने लगा था। शतपथ ब्राम्हण के अनुसार सभी वर्णों के लिए अलग–अलग स्वरूप आकार के टीले का निर्माण किया जाना चाहिए। तैंतरीय ब्राम्हण में भी भूमिगृह की चर्चा की गई हैं। अतः वैदिक परंपरा की माने तो उस समय मृत शरीर को जलाने व दफनाने दोनों ही क्रिया का प्रचलन था। सूत्रकाल में शव को जलाने की विशेष चर्चा की गई हैं। शव की जली हुई अस्थियों व उनके राख को एक कुम्भ में रखकर उसे धरती के भीतर प्रतिष्ठित करके उसके ऊपर एक टीला बना दिया जाता था। इसका अर्थ यह हुआ कि मृत शरीर को अग्नि में समर्पित करने के पश्चात् प्राप्त अवशेष को धरती के गर्भ में स्थापित करने की प्रथा प्रचलित थी और साथ ही उस पर स्तूप का भी निर्माण किए जाने की परंपरा विद्यमान थी। रामायण के अनुसार महापुरुषों के देह त्यागने के पश्चात् उनकी स्मृति स्वरूप चैत्य या स्तूप का निर्माण कराया जाता था। दीर्घनिकाय में सभी बौद्ध भिक्षुओं एवं चक्रवर्ती सम्राटों के स्तूप का विवरण मिलता हैं। जातकों में स्मारकों के लिए थूप शब्द का उपयोग किया गया हैं। मध्यकाल में वैदिक टीले की उद्भावना संभव नहीं था। अतः इसका प्रकृति {स्वरूप} स्तूप ने ले लिया था। स्तूप के इतिहास से भी यह ज्ञात होता हैं कि बौद्ध काल से पहले भी महापुरुषों के स्मारक या स्तूपों का निर्माण किया जाता था।

डॉ. काणे के अनुसार मृत्यु के पश्चात् मनुष्य के शरीर का दाह संस्कार चार तरह की विधियों से संपन्न कराया जाता था।

1. मृत देह को अग्नि में समर्पित करना।
2. प्राप्त भस्म {राख} को संगृहित करना।

3. संगृहित भस्म को एक कुंभ में एकत्रित करना।
4. भस्म कुम्भ को धरती के भीतर रखकर उस पर स्मारक बनाना।

इस तरह स्तूप या स्मारक का निर्माण कार्य उस वैदिक सिद्धांत का बौद्ध युगीन स्वरूप था।[10]

बौद्ध काल से पूर्व स्मारक और स्तूप :–

प्राचीन काल में वैदिक स्तूपों का प्रचलन रहा हैं भले ही आज वे खंडहरों के रूप में बहुत अधिक प्राप्त नहीं हुए हो तब भी उनकी रीति, शैली को अधम {महत्वहीन} नहीं समझा जा सकता हैं। नीलकंठ शास्त्री का विचार यह रहा हैं कि प्राचीनकाल में पवित्र वृक्ष के बाद धार्मिक दृष्टी में स्तूप के प्रति आस्था का शुभारंभ हुआ। वैशाली में भी महापुरुषों के चैत्य का निर्माण किया गया था जिसके प्रति संघ के सदस्य सम्मान प्रकट करते थे। चक्रवर्ती राजाओं की समाधि के ऊपर स्तूप बनाने की बात महात्मा बुद्ध ने अपने शिष्य आनंद को बताया था। इसी तरह महात्मा बुद्ध की समाधि पर भी अनेक स्तूपों का निर्माण करवाया गया जो कि जनसामान्य के लिए आस्था का केन्द्र बना। प्राचीन अभिलेखों में इसे धातुगर्भ बताया गया हैं।

धातुगर्भ या स्तूप :–

प्राचीन भारतीय अभिलेखों के अध्ययन व अवलोकन से धातुगर्भ से संबंधित कई तथ्यों का पता चलता हैं कि किस शासक ने बुद्ध के स्थूल शरीर के अवशेष पर स्मारक का निर्माण करवाया था। उत्तर प्रदेश की बस्ती जिले से पीपरावा नाम के एक स्थान से एक स्तूप का पता चला हैं जिसे ईसापूर्व चौथी शताब्दी का बताया गया हैं। जब पुरातत्व शास्त्रियों द्वारा उसकी खुदाई का कार्य करवाया गया तब उसमे से एक धातु कुम्भ निकला था जिसमे प्राकृत भाषा का एक लेख अंकित था :–

इवं शरीरं निमानं बुद्धस्य भगवतः शाक्यानाम्।

पश्चिमोत्तर प्रांत के पास विजौर रियासत के शिनकोट क्षेत्र में भी एक प्राचीन संपुट {पिटारी} का पता चला हैं जिसे यूनानी शासक मिलिंद के काल का माना गया हैं। इस पिटारी के अग्रभाग के अंदर एक लेख खुदा हुआ पाया गया हैं :–

भगवतु सकि मुणिस सम सबुधस शरीर।

प्रस्तुत लेख में भगवान बुद्ध के अवशिष्ट {अवशेष} को प्राणमहित कहा गया हैं। ऐसी मान्यता थी कि बुद्ध के इस स्तूप की पूजा करने से चमत्कारिक फल की प्राप्ति होती हैं।

स्तूप लेख :–

स्तूपों के तोरण द्वारों में संबंधित लेख को उकेरा जाता था। उदाहरण स्वरूप साँची, अमरावती तथा भरहुत के स्तूपों का अवलोकन किया जा सकता हैं। साँची में बने स्तूप के दक्षिण द्वार पर सातवाहन वंश के राजा सात्कार्ण और स्तूप के निर्माण में दान देने वाले धनि व्यापारियों का नाम उत्कीर्ण हैं। इसी तरह भरहुत के वेष्ठानी {प्रकार} पर भी जातक कहानियों के ऐतिहासिक घटनाओं का विवरण मौजूद हैं। इसके पूर्वी तोरण में उत्कीर्ण लेख के अनुसार यह ईसापूर्व द्वितीय सदी में शुंग काल में बनाया गया था। इस तरह के स्तूपों का अवशेष अमरावती और मथुरा से भी प्राप्त हुए हैं।[11]

इस तरह ऐतिहासिक प्रलेखों के अध्ययन से विदित होता हैं कि भगवान बुद्ध के अवशेषों को स्तूप के रूप में विस्थापित करने का क्रम विद्यमान था। धार्मिक दृष्टिकोण से स्तूप की रचना की गई थी इसके साथ ही

लोगों में यह भी मान्यता हैं कि स्तूप में श्रद्धा रखने से मनुष्य को पुन्य की प्राप्ति होती हैं।

संदर्भ सूची :–

1. श्रोत्रिय आलोक एवं चढ़ार मोहन लाल, भारतीय कला संस्कृति के नवीन आयाम, एस. के. बुक एजेंसी नई दिल्ली, वर्ष 2018, पृष्ठ संख्या 120
2. ऐतिहासिक निबंध, नागोरी एस. एल. एवं नागोरी जीतेश, इना श्री पब्लिशर्स जयपुर, वर्ष 1997, पृष्ठ संख्या 44
3. धर्मशास्त्र का इतिहास भाग–1, काणे डॉ. पाण्डूरंग वामन, अनुवादक चौबे कश्यप अर्जुन, हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ, पृष्ट संख्या 3
4. कला और संस्कृति, वासुदेवशरण, साहित्य भवन लिमिटेड इलाहाबाद, वर्ष 1952, पृष्ठ संख्या 4
5. शास्त्री के. ए. नीलकंठ, नन्द–मौर्य–युगीन भारत, अनुवादक – सिंह मंगलनाथ, पुनरीक्षक पाण्डेय डॉ. राजबली, मोतीलाल बनारसीदास पटना, प्रथम संस्करण 1969, पृष्ठ संख्या 266
6. भारतीय वास्तुशास्त्र–ग्रंथ चतुर्थ प्रतिमा–विज्ञान, शुक्ल डॉ. विद्जेन्द्रनाथ, वातु–वाड्मय प्रकाशन शाला, वर्ष 1956, पृष्ठ संख्या 19
7. प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एवं मंदिर, उपाध्याय प्रो. डॉ. वासुदेव बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना–3, वर्ष 1972, पृष्ठ संख्या 4
8. भारतीय कला, अग्रवाल वाशुदेवशरण, पृथिवी प्रकाशन, वर्ष 1966, पृष्ठ संख्या 134
9. प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एवं मंदिर, उपाध्याय प्रो. डॉ. वासुदेव बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना–3, वर्ष 1972, पृष्ठ संख्या 5
10. वही, पृष्ठ संख्या 7
11. भारतीय संस्कृति और कला, गैरोला वाचस्पति, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी लखनऊ, वर्ष 1973 पृष्ठ संख्या 43

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 37-42

दलित विमर्श : अवधारणा एवं स्वरूप

सुमन कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार।

भारतीय साहित्य में जाति व्यवस्था पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलती आ रही है। समाज में सामाजिक व्यवस्था अव्यवस्थित होते ही उसको व्यवस्थित रूप देना साहित्यकारों का मूल लक्ष्य होता है। साहित्यकारों का समाज के साथ संबंध होने के कारण वह अपने साहित्य में सामाजिक कुरीतियों को यानि सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि सभी पहलुओं को कृतिबद्ध करना, प्रस्तुत करना प्रारम्भ कर देते हैं।

समकालीन साहित्यिक विमर्श सिर्फ तीन आधार स्तम्भों पर टिका हुआ नजर आता है– दलित विमर्श, नारी विमर्श तथा विस्थापित विमर्श। आज के समय में दलित विमर्श अपनी कलम की बेबाकी दिखा रहा है। अलग–अलग भाषाओं तथा साहित्यिक विधाओं में दलितों की स्थिति का चित्रण हमें देखने को मिलता है।

'दलित' शब्द का अर्थ है– जिसका दलन और दमन हुआ है। जिसे दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषीत, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, साहित्य वंचित आदि। बृहत हिन्दी कोश के अनुसार– ''रौंदा, कुचला हुआ, पादाक्रांत वर्ग, हिन्दुओं में वे शूद्र जिन्हें अन्य जातियों के समान अधिकार प्राप्त नहीं है।''(1) दलित शब्द को ईसाई धर्म ग्रंथ बाईबल में दुःखी, पीड़ित, असहाय, दीन–दरिद्र, पापी आदि शब्दों के आधार पर अभिव्यक्ति दी गई है। डॉ0 श्यौराज सिंह 'बेचैन' दलित शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं–''दलित वह है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया गया है।''(2)

1965 ई0 के आस–पास मराठी भाषा से आरम्भ होने वाला दलित विमर्श 1985 ई0 तक हिन्दी एवं साहित्य जगत की अन्य अनेक भाषाओं में इस प्रकार प्रवेश कर गया कि इन विमर्शों के बिना आधुनिक आलोचना साहित्य अधूरा–सा लगता है तथा आज के समय में यह इतना विस्तृत होता जा रहा है कि वह विमर्श न रहकर चेतना के रूप में दिखाई देता है।

व्यापक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि जिन्हें दलित माना गया है उनकी विशेष जाति नहीं है। यह शब्द मनुष्य की पतितावस्था, दुरावस्था तथा लाचारी और शोषण का द्योतक है। एक मान्यता यह भी हो सकता है कि सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से जिसका शोषण होता है, स्वतंत्रता, समता और प्रगति से अपरिचित रहकर, अपने मालिक की गुलामी करता है और जिसके जीवन में ज्ञान या प्रकाश के अभाव में अज्ञान या अंधेरा ही अंधेरा, छाया हुआ रहता है, ऐसा व्यक्ति दलित है। इस व्यापक अर्थ में केवल गरीब और अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ ही दलित नहीं है।

दलित साहित्य डॉ0 अंबेडकर जी की विचारधारा को अपना मूल स्रोत मानता है। इसलिए उसकी परिभाषा या सीमाओं पर विचार करते समय उस मूल विचारधारा की विवेचना भी आवश्यक हो जाती है। डॉ0 बाबा साहेब अंबेडकर के विचारों से दलितों को अपनी गुलामी का एहसास हुआ। उनकी वेदना को वाणी मिली क्योंकि उस मूल समाज को बाबा साहेब के रूप में अपना नायक मिला, दलितों की यही वेदना साहित्य की जन्मदात्री है। दलित साहित्य की वेदना में 'मैं' की वेदना नहीं वह बहिष्कृत समाज की वेदना है। इस बहिस्कृत समाज को बाकी समाज के समकक्ष लाए बिना मनुष्यता अधूरा रह जाएगा। दलित साहित्य के बारे में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने कहा है–''दलित साहित्य जन साहित्य है, यानी मास लिट्रेचर (Mass Literature) सिर्फ इतना ही नहीं, लिट्रेचर ऑफ एक्शन (Literature of action) भी है जो मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिकता के विरूद्ध आक्रोश जनित संघर्ष है। इसी संघर्ष और विद्रोह से उपजा है दलित साहित्य।''(3)

माताप्रसादजी के अनुसार दलित साहित्य किसी वर्ण विशेष का लेखन न होकर उन सभी लोगों का है जिन्होंने भी उस पीड़ा का अनुभव करके उस पर साहित्य सृजन किया है वह साहित्य ही दलित साहित्य कहलायेगा। दलित साहित्य में रचनाकार वर्णवादी व्यवस्था में भोगे हुए सच के आधार पर यथार्थ की कलम से जिन्दगी की कड़वाहट की रचना सदियों से दबे आक्रोश के साथ उड़ेलता है।

हिन्दी में दलित चेतना के उदय को अभिव्यक्त करने वाली रचना, सबसे पहले 'सरस्वती' पत्रिका में छपी थी। जिसका शीर्षक था 'अछूत की शिकायत' और कवि थे हीरा डोम। इसमें केवल दलितों की शिकायत या व्यथा ही दर्ज नहीं की गई बल्कि आक्रोश और विरोध भी जताया गया है। इस कविता में पहली बार भगवान की उस शास्त्र सम्मत संरचना पर भी प्रश्न उठाया गया है जो दलितों को मनुष्यता के दायरे से बाहर रखती है। इस कविता में कवि सवर्णों की दी गई सुविधाओं और अपनी दीनता और दुःख पर मलाल और गुस्सा भी प्रकट करता है।

स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी हिन्दी में दलितों की दशा सुधारने के लिए अपना योगदान दिया था। वे वर्ण व्यवस्था को सुरक्षित रखते हुए भेद–भाव मिटानें की बात नहीं करते थें। इस प्रकार उनकी सोच सुधारवादी विचारधारा के साथ–साथ धर्म पर आधारित थी। ''जबकि डॉ0 अम्बेडकर पूरी तरह वैज्ञानिक सोच पर परिवर्तनकारी आंदोलन चला रहे थे जिसके हथियार शिक्षा, संघर्ष और संघटन थे न कि धर्म।''(4) 1914 में हीरा डोम की 'अछूत का शिकायत' नामक कविता 'सरस्वती' पत्रिका में छपने के बाद हिन्दी दलित साहित्य में विकास की रेखा देखने को मिली।

डॉ0 बाबा साहब अम्बेदकर के पहले उत्तर प्रदेश में 19वीं सदी में ही स्वामी अछूतानंद ने 'आदि हिन्दू आंदोलन' चलाया। जिसके फलस्वरूप जाति प्रथा पर प्रहार करने वाला प्रचार और साहित्य लिखा जाने लगा था।''(5) दलित साहित्यिक संस्थानों ने दलित साहित्यकारों की पहचान बनाने के कार्यक्रम शुरू किए। इस प्रकार दलित संगठनों ने भारत सरकार पर दबाव डालकर डॉ0 अम्बेडकर का संपूर्ण वाग्डम्य छापने को मजबूर किये। ऐसे संस्थानों द्वारा हिन्दी पत्रिकाएँ भी निकाली जाने लगी। इसी दशक में दलित संस्थानों की सक्रियता बढ़ी।

'सेंटर फॉर अल्टरनेटिव दलित मीडिया (कदम)' 1990 (दिल्ली), 'दलित राइटर्स फोरम', 'फुले''अम्बेडकरवादी लेखक संघ' (नागपुर), 'दलित लेखिका संघ (नागपुर)', 'अम्बेडकर मिशन (बिहार)', आदि संस्थाएँ दलित साहित्य और साहित्यकारों के विकास के लिए काम कर रही है।''[6] दलित साहित्य के विकास के लिए पत्रिकाएँ भी निकाली गई। दलित साहित्यकारों को बहुत पैमाने पर छापने की शुरूआत पहले–पहले 'युद्धरत आम आदमी' और 'हंस' जैसे पत्रिकाओं ने की। 'युद्धरत आम आदमी' में 1987 में ही हिन्दी की पहली दलित कहानी 'लटकी हुई शर्त' (प्रहलाद दास) छपी। इसके बाद 'युद्धरत आम आदमी' के चार विशेषांक दलित चेतना कहानी, कविता, साहित्य और सोच पर आए। 'भीम', 'अम्बेडकर मिशन', 'शंबुक', 'हम दलित', 'अभिमूक नायक', 'सजग प्रहरी', 'समय सरोकार', 'लोकसूचक', 'प्रज्ञा', 'धम्म दर्पण', 'हिमायती', 'दलित प्रक्रिया', 'अश्वघोष', 'निर्णायक भीम', 'परिषद संदेश' आदि पत्रिकाएँ दलित के विकास के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहीं है।''[7] हिन्दी में दलित लेखकों ने शोध कार्य भी शुरू किए और विचारात्मक धरातल पर भी गंभीरता से लेखन कार्य शुरू हुआ।

''ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी आत्मकथा 'जूठन' में हिन्दी पट्टी में दलित पीड़ा के आयाम को दर्ज करने के साथ–साथ सवर्ण अभिजात के नासूंर को उकेरा जो शिक्षा के क्षेत्र में भी अबोध बालकों के स्तर तक दोहरे मापदंड का इस्तेमाल कर भारतीय मानस के सुराव, छल, कपट के जहर में मारता है। कौशल्या बैशंत्री ने 'दोहरा अभिशाप' नाम से अपनी आत्मकथा लिखकर दलित लेखन को समृद्ध किया।''[8] इसके अतिरिक्त कुसुम वियोगी, टी0पी0 सिन्हा, सूरजपाल चौहान, सी0बी0 भारती, प्रहलाद चंददास, जयप्रकाश कर्दम, मलखान सिंह, बील. एल. नैय्यर, रामकृष्ण राजपूत, शत्रुघन्न कुमार, कावेरी, दयाचंद बैटाही, लालचंद राही, विपिन बिहारी, जियालाल आर्य, रमाशंकर आर्य, एस. के विश्वास, रजनी तिलक, कर्मशील भारती, अ0मा0 उके तथा अजय सतीश जैसे अनेक हिन्दी के दलित लेखक रचनात्मक क्षेत्र में कहानी, कविता, उपन्यास, नाटक एवं निबंध की विधाओं को समृद्ध कर रहे हैं। इस प्रकार दलित साहित्य समय–समय पर अपनी दशा और दिशा में सुधार, परिवर्तन तथा प्रगति प्राप्त करते हुए एक नई आवाज के रूप में प्रस्तुत हो रहा है जिसके वजह से दलितों की पीड़ा, वेदना, आक्रोश और रूदन के यथार्थ को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है।

'सिद्ध एवं नाथ साहित्य को दलित के विकास के रूप में देखा जा सकता है। सिद्ध सरहपा, कृष्णपाद, शतिंपा, चिंतामणि नाथ तथा भरत जी आदि नाथों ने अपने रचनाओं के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों का विरोध अनवरत किया। गोरखनाथ शुद्रों को भी शिक्षा देने के पक्षपाती थे। गोरखनाथ और कई सिद्ध निम्न जाति के थे। इससे यह मालूम होता है कि नाथ पंथी में जाति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं था।कँवल भारती का कहना है कि–''हमें सिद्ध साहित्य से ही संस्कृति के रूप को देखना होगा। सिद्ध साहित्य में ब्राह्मणों के सक्रिय हस्तक्षेप के बावजूद हमें दो चीजें नहीं भूलनी चाहिए। पहली यह कि सिद्ध साहित्य में संस्कृति के मूल बुद्ध की परम्परा से आते हैं, जिन्होंने मूल निवासियों या शुद्रों को सर्वाधिक प्रभावित किया था। दूसरी, यह है कि सिद्धों में तीन दर्जन से भी ज्यादा सिद्ध शूद्र और निम्न जातियों से आये हैं। सिद्धों के साहित्य में हम श्रम को संस्कृति के मूल तत्व के रूप में देखते हैं। अधिकांश सिद्ध किसी न किसी श्रम से जुड़े हैं। धर्म की स्वीकृति का मुख्य कारण भी यह सांस्कृतिक समानता ही प्रतीत होती है।''[9]

संत कवियों में कबीरदास, मलूकदास, रैदास आदि संत कवियों ने दासता, अस्पृश्यता, शोषण तथा सार्वजनिक स्थानों पर दलितों के प्रवेश जातियता मूर्ति पूजा, कर्मकाण्ड, ज्ञान की महत्ता आदि पर व्यापक प्रकाश डाला है–''का करो जाति का करो पांति, राम भजन करे दिन राति।।''(10)

संतों की दृष्टि में जाति–पाँति मानव–मानव के बीच विषमता पैदाकर समाज से समाज को तोड़ने का काम करती है। शोषण के विरूद्ध संतों का काव्य एक तीखा अस्त्र है। समाज में जब–जब असमानता का प्रकोप बढ़ा है, उसे मिटाने के लिए किसी–न–किसी व्यक्ति या उनके समूह के प्रयत्न से सामाजिक सुधार का कार्य चलता आया है। दक्षिण के दलित संतों की तुलना में हिन्दी क्षेत्र के दलित संतों की वाणी में कुछ पुष्टि नजर आती है। उत्तर भारत में संत कबीर धर्म वर्णवाद के विरोध में अपनी आवाज बुलंद किये। कबीर की शेर गर्जना से ब्राह्मणवाद की नींव हिल गई। समस्त भारत में यह एकमात्र संत है जो सामंतों, राजाओं से न डरते हुए उनके बुराइयों का पोल खोला है। संतों की वाणी संबंधी चिंतन से पता चलता है कि समस्त भारत में यह धारा कम–ज्यादा एक ही समय नजर आती है। देश के कई राज्यों के संतों ने जातिवाद, छुआ–छूत, ऊँचता–नीचता का खुलकर विरोध किया है।

बुद्ध का दर्शन, ज्योतिबाफुले और डॉ0 अम्बेडकर के जीवन संघर्ष में दलित साहित्य का वैचारिक आधार छिपा है। सभी दलित रचनाकार इस बिन्दु पर एकमत हैं कि ज्योतिबा फुले ने स्वयं क्रियाशील रहकर सामंती मूल्यों और सामाजिक गुलामी के विरोध का स्वर तेज किया था। ब्राह्मणवादी सोच और वर्चस्व या प्रमुख के विरोध में उन्होंने आंदोलन खड़ा किया था। भारतीय दलित साहित्य के ''सौंदर्यशास्त्र के आमुख–आमुख तत्व अर्थात दलित चेतना की वैचारिक अभिव्यक्ति का सीधा संबंध डॉ0 अम्बेडकर के दर्शन एवं चिंतन से है।''(11)

साहित्य के क्षेत्र में भी बाबा साहब अम्बेडकर ने जीवनवादी और यथार्थवादी भूमिका निभाई। साहित्य के प्रति उनका दृष्टिकोण मानवतावादी था। बाबा साहब के अनुसार जो संस्कृति, समाज या साहित्य मनुष्य को लघु बनाए उसके विरूद्ध विद्रोह होना ही चाहिए। डॉ0 बाबा साहब ने जो नारा दिया ''दास को आभास करा दो कि वह दास है, तभी वह विद्रोह करेगा''। उनके अनुसार सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्रों में दलितों के विद्रोह की चिंगारियाँ उत्पन्न हुई, जो धीरे–धीरे लपटें बन गयी।''(12) सामाजिक समता, दलितोद्वार के लिए महात्मा ज्योतिबा फुले ने सामाजिक समता के विरूद्ध आंदोलन शुरू करके दीन–दलितों को जाग्रत किया। महात्मा गाँधी ने दलितोद्वार कार्य के लिए स्वयं को समर्पित किया।

महात्मा गाँधी ने भारतीय समाज की इस विराट सच्चाई को अच्छी तरह समझ लिया था कि जब तक नीच और अस्पृश्य समझी जानेवाली बहुसंख्य जनता को सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार नहीं प्रदान किया जाता तब तक किसी भी प्रकार की सामाजिक और राजनैतिक क्रांति सफल नहीं हो सकती। इसलिए उन्होंने अस्पृश्यता निवारण या अछूतोद्वार का आंदोलन चलाया और अपने ग्यारह सूत्री रचनात्मक कार्यक्रम के अंतर्गत रखकर राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के एक हिस्से के रूप में ही प्रचारित प्रसारित किया। दलित साहित्य का नायक भी दलित ही होता है, पर बीती तथा सत्य घटनाओं के अनुभवों को ही दलित साहित्य में ढाला जाता है। इसलिए दलित साहित्य का स्वरूप पारंपरिक भारतीय साहित्य से हटकर दिखाई देता है और साहित्यिक क्षेत्र में इसकी अलग ही पहचान होती है। यह साहित्य उभरकर आँखों में खटकने लगा है। जिस

प्रकार एक अच्छी वस्तु पर सभी की निगाहें टिकी होती हैं, उसी प्रकार दलित साहित्य पर भी अन्य साहित्यकारों की निगाहें रूकी हुई हैं। समस्त भारत में दलित साहित्य उभरकर आ रहा है।

दलित साहित्य के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि दलित साहित्य आम दलित जनता की भाषा में कही गयी है। दलित साहित्य के ज्यादातर पात्र अशिक्षित मजदूर और दबे–कुचले वर्ग के प्रतिनिधि होने के कारण इनकी भाषा में औपचारिकता कम है। दलित साहित्य की भाषा में सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग प्रचुरता से किया गया है। दलित साहित्य के पात्र घोषित रूप से दलित हैं, इसीलिए उनकी भाषा में तदभवता की प्रवृति का होना दलित तत्व के सर्वथा अनुरूप है। कुछ उदाहरण देखे जा सकेते हैं– कबुतरी, किसना, ददुआ, बऊ, रामकिसुन, मुनुआ, हरखु, परबतिया, रामेसरिया, मंगली, सुगिया, सिपाईंया, जमना, गानसू आदि।

दलित साहित्य में आमतौर पर सरल भाषा का प्रयोग किया गया है। भाषिक अभिव्यंजना को अधिक मार्मिक बनानेके लिए इनमें तुलना की सहायता से यथार्थ को अधिक प्रभावशाली रूप में चित्रित किया गया है। ''अरे परबतिया। कहीं राख में फूल खिलते है भला। वह हरिजन कैसे पढ़ सकता है? हमारे वेदों में हरिजनों को वेद, पुराण सुनने की भी मनाही है पढ़ने की बात तो दूर रही ....।''[13]

दलित साहित्य में नये अनुभव, अलग जनभाषा, विद्रोही विचार, आक्रामक स्वरूप की अभिव्यक्ति, विषमता का निषेध आदि को व्यक्त किया गया है। पवित्रता और अपवित्रता भी भ्रामक कल्पनाओं को इस प्रकार बुनकर साहित्य में प्रस्तुत किया है जो दिल को दहला देती है। दलितों की गाथा किसी एक व्यक्ति की न होकर प्रायः पूरे समाज की कथा बन जाती है। लेखक तो व्यक्ति को बस अपने सन्दर्भ, अपने अंदाज, अपनी शैली, अपनी भाषा में पूरे समाज के सामने रूबरू खड़ा कर देता है, जिसमें पूरी व्यवस्था और उसका इतिहास भी झाँकता है और आज के परिवेश में भविष्य की आकांक्षाएँ जन्म लेती है।

निष्कर्षतः यह कह सकते हैं कि भारतीय सहित्य में सामाजिक परिवर्तन, न्याय, समता, यथार्थ, लौकिक और वैज्ञानिक प्रतिमानों को आधार मानकर तथा मनुवादि विचारधारा के विरूद्ध आक्रोश, दलित व्यवस्था, भोगे हुए यथार्थ, सामंती आंतक और अत्याचार का विरोध करता हुआ दलित साहित्य महत्वपूर्ण है। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर, ज्योतिबा फूले, महात्मा गाँधी से लेकर सभी संतों ने अपनी लेखनी द्वारा दलित साहित्य को एक मजबूत आधार देने की कोशिश करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. बृहत हिन्दी कोश, पृ0 सं0–510
2. युद्धरत आम आदमी,डॉ0 श्यौराज सिंह 'बेचैन', 1998– पृ0 सं0–14
3. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र,ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ0 सं0–15
4. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, डॉ0 शरण कुमार लिंबाले, पृ0 सं0–13,14
5. वही पृ0 सं0–13
6. वही पृ0 सं0–20
7. वही पृ0 सं0–20

8. वही पृ0 सं0–23
9. साहित्य और सामाजिक क्रांति, डॉ0 दयानंद बटोही, पृ0 सं0–18
10. दलित साहित्य सृजन के संदर्भ, डॉ0 पुरूषोतम सत्यप्रेमी, पृ0 सं0–24
11. प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना, डॉ0 बलवंत साधू जाधव, पृ0 सं0–41
12. वही पृ0 सं0–42
13. हरिजन, दलित कहानी संचयन, प्रेम कपाडिया, पृ0 सं0–89

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 43-46

इक्कीसवीं सदी में पर्यावरण चिंतन

डॉ. कुमार अभिषेक
सहायक प्राध्यापक, द्वारका दास गोवेर्धन दास वैष्णव कॉलेज, अरुम्बाक्कम, चेन्नई, तमिलनाडू–600106

'पर्यावरण' मनुष्य के लिए ईश्वर द्वारा प्रदान की गयी सर्वोत्तम देन है, जिसका उपयोग वह वर्षों से करता चला आ रहा है, किन्तु वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप उत्पन्न प्राकृतिक असंतुलन आधुनिक मानव सभ्यता के समक्ष एक विकट समस्या है। विश्लेषकों एवं पर्यावरणविदों के अनुसार पर्यावरण के विघटन या पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन दो प्रकार के होते हैं– पहला, जिसे प्रकृति स्वयं करती है, किन्तु यह प्रक्रिया धीमी होती है और दूसरा हम मनुष्यों के हस्तक्षेप द्वारा। वास्तव में पर्यावरण की वर्तमान विभीषिका के लिए मनुष्य एवं उसके द्वारा किए गए क्रिया–कलाप सर्वाधिक जिम्मेवार है। भूमंडलीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तवाद, और उपभोक्तावादी संस्कृतियों के परिणाम स्वरूप मनुष्य की बढ़ती हुई अनियंत्रित भोग–लिप्सा ने केवल मानवीयों सम्बन्धों को ही नहीं, बल्कि प्रकृति व पर्यावरण से जुड़े तमाम संवेदनशील सूत्रों व घटकों को भी तहस–नहस किया है। ऋतुचक्र में परिवर्तन, पृथ्वी का बढ़ता हुआ तापमान, ग्रासलैंड के आकार का सिमटना, अतिवृष्टि, चक्रवात, सूखा, ध्रूवीय क्षेत्रों की बर्फ का पिघलना एवं पशु–पक्षियों व वनस्पतियों की संख्या में कमी आदि अनेक प्रकार की पर्यावरण संबंधी उत्पन्न समस्याएँ, आधुनिक मानवीय सभ्यता द्वारा प्रकृति के नियमों के उल्लंघन का ही परिणाम है।

21वीं सदी की हिन्दी कहानियाँ केवल स्त्री, दलित, आदिवासी, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, विषयों पर ही केन्द्रित नहीं है, बल्कि वर्तमान दशक के कहानीकार अपनी कहानियों के माध्यम से पर्यावरण संबंधी समस्याओं को भी हमारे समक्ष पेश किया है। पैनी नजर से देखें तो पर्यावरण आरंभ से ही मनुष्य का जीवन सहचर रहा है। पर्यावरण का रक्षण एवं संवर्धन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है, किन्तु वैश्वीकरण के आगमन से पर्यावरण संबंधी मानवीय संवेदनाएँ धीरे–धीरे क्षीण होती गई। वास्तव में वैश्वीकरण और औधौगीकरण ने इक्कीसवीं सदी में चरम उपभोक्तावाद का रूप धारण कर लिया, उसी का परिणाम है कि आज प्राकृतिक संसाधनों का बड़े ही तीव्र गति से दोहन किया जा रहा है।

जल, जंगल और जमीन का अंधाधुंध शोषण व दोहन वर्तमान सदी के विकास का आधार बन चुका है, जिससे पर्यावरण असंतुलन बड़ी तीव्र गति से बढ़ता ही जा रहा है। 21वीं सदी का कहानीकार अपनी कहानियों

के माध्यम से प्रकृति के प्रति मानवीय संवेदनाओं में आ रही गिरावट व मनुष्य के द्वारा प्रकृति को संपत्ति के रूप में देख रहा है। प्रकृति के दोहन व शोषण से उत्पन्न होने वाली समस्याओं को पेश करने के साथ–साथ प्रकृति व अन्य जीवन के प्रति निर्मम मानवीयों संबंधों के फलस्वरूप भीषण प्रकृतिक आपदाओं का सामना, आगामी पीढ़ी को करनी है, इस पर भी अपनी चिंता अभिव्यक्त कर रहे हैं।

वर्तमान कहानीकार, केवल मनुष्य के अस्तित्व के लिए ही नहीं सोचता, बल्कि जीव–जंतुओं के अस्तित्व के प्रति भी चिंतित है। कहानीकार मुरलीधर वैष्णव की कहानी 'मांद से ड्राइंगरूम तक' पशु–पक्षियों के प्रति मनुष्य की संवेदनहीनता को अभिव्यक्त करती है। कहानी में जंगल का राजा शेर कहता है, "अब जंगल कहाँ है, जंगलों को दिन–रात काटने वाले बेरहम ठेकेदार पेड़ों के साथ–साथ जंगली जानवरों को भी काटते रहते हैं। हमारा भोजन खरगोश, हिरण वगैरह तो आप लोगों की दावतों में तरह–तरह के व्यंजनों के रूप में सजते हैं, फिर हम क्या घास खाएं या आपके राजनेताओं की तरह आदमखोर हो जाएं।"[1] उक्त पंक्तियाँ सोचने पर विवश करती हैं। आज मनुष्य की स्वार्थता इस कदर बेकाबू हो चुकी है कि जल, जंगल, जमीन के भक्षण के साथ–साथ पशु–पक्षी आदि भी अब उसके लिए स्वादिष्ट व्यंजन मात्र है।

वास्तव में आज मनुष्य अपनी भौतिक सुख–सुविधाओं में वृद्धि करने हेतु न केवल प्रकृतिक सम्पदा के विवेकहीन प्रयोग कर रहा है, बल्कि उसे बड़ी तीव्रता से प्रदूषित भी कर रहा है। आज भारत की लगभग सभी नदियों का जल दूषित होता जा रहा है। कहीं धार्मिक वजह से तो कहीं हमारे ऐशो–आराम का निर्माण करने वाली कारखानों के कचरों की वजह से। यदि गौर किया जाए तो स्पष्ट होता है कि जीव जंतुओं के साहचर्य से नदियों का जल उतना विकृत नहीं होता, जितना कल–कारखानों व मनुष्य द्वारा फेकें गए मल आदि से, उसकी शुचिता (पवित्रता) को संकट होता है। निरंतर नदियों में डाले जा रहे औद्योगिक अपशिष्टों ने नदियों को इतना दूषित कर दिया है कि आज इनके अस्तित्व पर ही खतरा मंडरा रहा है। यमुना का गंदे नाले में परिवर्तित होना, मनुष्य की विवेकहीनता और उसकी असीम लालसा का ही परिणाम है, जिसने बड़े–बड़े कारखानों, उद्योगधंधों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों आदि को जन्म दिया है। वरिष्ठ कथाकार अमरीक सिंह दीपन ने अपने कहानी संग्रह 'एक कोई और' में प्रदूषित होती नदियों पर चिंता व्यक्त करते हुए नदियों के प्रदूषण का जो चित्रण किया है, वह विचारणीय है, "गंदे नाले से भी ज्यादा स्याह हो चुकी गोमती के ठहरे हुए से पानी में सूरज नाक बंद कर डुबकी लगाने जा रहा है। उसकी जर्द किरणें सड़े अंडे की जर्दी की तरह गोमती की जल–सतह पर छितराई हुई है। यूं लग रहा है, जैसे अंधेरा आसमान में नहीं, गोमती के स्याह जल से निकलकर शहर पर छाने वाला है।"[2]

पर्यावरण असंतुलन के कारण आज जल, वायु, मातृभूमि, आकाश, सभी प्रदूषण की गिरफ्त में हैं। कभी जल प्रदूषण, तो कभी ध्वनि प्रदूषण, तो कभी वायु प्रदूषण ने हमारे जीवन को इस तरह प्रभावित किया है कि हमें कृत्रिम चीजों का सहारा लेना पड़ रहा है। पीने के लिए केन वॉटर और श्वास लेने के लिए शहरों में ऑक्सीजन की व्यवस्था इसके अच्छे उदाहरण हैं। कथाकार नरेंद्र कोहली 'हम सबका घर तथा अन्य कहानियाँ' में एक ओर जहां वायुमंडल के प्रदूषित होने के कारणों पर प्रकाश डालते हैं, वहीं दूसरी ओर पर्यावरण का विनाश

कर, आज मानव जाति विकास रूपी बारूद के जिस ढेर पर खड़ी होकर स्वयं को बहुत ऊँचा अनुभव कर रही है, उसकी उस दलदली नीव और भविष्य में आनेवाले असीम संकटों के प्रति चिंता को भी व्यक्त करते हैं।

वे लिखते हैं, "हम लोग घरों में आग जलाकर धुआँ उत्पन्न करते हैं। सड़कों पर करोड़ों की संख्या में वाहन चल रहे हैं, जो अनेक प्रकार की विषैली गैस उत्पन्न कर रहे हैं। मिलों और कारखानों की चिमनियाँ लगातार धुआँ उगलकर वायुमंडल को प्रदूषित कर रही हैं। विभिन्न युद्धों और युद्धों की तैयारी मे जो बारूदी धुआँ उत्पन्न होता है, वह और भी भयंकर है। फिर तो बेचारे वृक्ष भी कितना काम करेंगे? मनुष्य एक ओर वृक्षों की क्षमता से अधिक प्रदूषण उत्पन्न कर रहा है और दूसरी ओर वृक्षों की संख्या कम करता जा रहा है।"[3]

वर्तमान सदी में जहां एक ओर बाजारवादी व उपभोक्तावादी संस्कृति ने मानवीय मूल्यों व संवेदनाओं को तहस–नहस कर प्रदूषित वातावरण, हवा–पानी आदि की समस्या उत्पन्न की है, वहीं दूसरी ओर हमारे ग्राम्य जीवन को भी उजाड़ती जा रही। हमारे भोगपूर्ण व उपभोगपूर्ण रवैये और बढ़ते शहरीकरण ने ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक प्रकार की प्राकृतिक आपदाओं को जन्म दिया है। पंखुरी सिन्हा की कहानी 'तालाब कहा या पोखर 'प्राकृतिक संसाधनों के अनुचित दोहन के कारण गाँव में आने वाली प्राकृतिक आपदा 'बाढ़' के दृश्य को बड़े ही सरल एवं साधारण ढंग से प्रस्तुत करती हैं, "ये घर तालाब को भर कर बने हैं। जो पानी पहले तालाब में लुढ़क जाता था, वह अब घरों के अंदर फैल रहा है। जमीन आखिर कितना पानी सोख सकती है और खाली जमीन भी कितना बची है? नाली तो पहले से ही इतनी भरी हुई है की इस बाढ़ के साथ कुछ बाहर निकाल सकती है, पानी जब्ज नहीं कर सकती, तो आखिर इस भारी बरसात का बेचारा पानी जाए तो कहाँ जाएं, पानी को भी तो जाने और ठहरने के लिए कोई जगह होनी चाहिए।"[4]

वर्तमान समय की यह सबसे बड़ी सच्चाई है कि विकास की अंधी दौड़ और बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आज बड़ी–बड़ी नदियों व तालाबों को पाटकर, समतल मैदानों में तब्दील कर, उन पर बड़े–बड़े शॉपिंग मॉल, मल्टीप्लैक्स, घर आदि खड़े किए जा रहे हैं। अर्थ केन्द्रित इस भारतीय समाज में मनुष्य का जमीन से केवल लाभ–हानि का संबंध रह गया है।

वास्तव में समकालीन रचनाकर्म स्त्री, दलित, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, सूखते नदी स्त्रोतों, प्रदूषित होते वायुमंडल व जलधाराओं, पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, जीव–जन्तु व जल आदि तमाम विषयों पर विमर्शरत व चिंतित हैं। इसीलिए इक्कीसवीं सदी का कथाकार न केवल पर्यावरण संरक्षण के सभी पहलुओं को रेखांकित करते हुए मानव जाति की स्वार्थता को जाहिर करता है, बल्कि वह राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय स्तर पर हो रहे सरकारी लचर प्रयासों को भी नंगा करता है। मनुष्य ने अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु पृथ्वी को, इसके सम्पूर्ण आवरण को संकट मे डाला है और यहाँ विभिन्न प्रकार के होने वाले पृथ्वी सम्मेलन, पर्यावरण सम्मेलन आदि मात्र एक तमाशा है और कुछ नहीं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि तमाम मुद्दों के साथ–साथ इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी 'पर्यावरण' संतुलन के मुद्दे को एक ज्वलंत समस्या के रूप मे परिभाषित करते हुए उसके प्रति अपनी चिंता व्यक्त करती

है। साथ ही साथ यह भी कहा जा सकता है कि जीवन को आधारभूत तत्व के रूप में प्रकृति या पर्यावरण को समझने व उसको संतुलन स्थापित करने का उत्तरदायित्व मानव पर है। इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को अपनी पर्यावरण से संबंधित दृष्टि को 'लक्ष्य केन्द्रित' तथा परिणाम केन्द्रित करना होगा। पर्यावरण से संबंधित मनुष्य का सुंदर भविष्य उसके उत्तरदायित्व पर ही निर्भर करता है। तभी भावी पीढ़ी के लिए सुखद एवं खुशहाल भविष्य के साथ अच्छा पर्यावरण का सपना साकार हो सकेगा।

संदर्भ :-

1. वैष्णव मुरली, पीड़ा के स्वर (कहानी संग्रह), वर्ष 2002, श्री करणी प्रकाशन, राजस्थान।
2. दीप सिंह अमरीक, एक कोई और (कहानी संग्रह) 2011, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली।
3. नरेंद्र कोहली, हम सबका घर तथा अन्य कहानियाँ, वर्ष 2009, हिन्दी पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली।
4. पंखुरी सिन्हा, कोई भी दिन (कहानी संग्रह) वर्ष 2006, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 47-49

राजस्थानी फिल्मों के महत्वपूर्ण पहलू

डॉ. अशोक कुमार द्विवेदी "शान बनारस"
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, हिन्दी, द्वारका दास गोवर्धन दास वैष्णव कालेज, चेन्नई।

दुनिया की सभी भाषाओं में फिल्म बनना कोई आश्चर्य की बात नहीं है, बनानी भी चाहिए। भारत में अनेक भाषाएँ बोली लिखि जाती है जिसमें राजस्थानी एक विशेष भाषा है जिसमें अनेक गौरवपूर्ण इतिहार लिखा गया है। जाहीर है इस पर फिल्में भी बनी है। जैसे ही हम राजस्थान के बारे में सोचते हैं, सबसे पहली बात जो हमारे दिमाग में आती है, वह है इसकी समृद्ध संस्कृति, इसके शाही महल, भव्य किले, पारंपरिक नृत्य और लोक संगीत। बहरहाल, जिस चीज पर सबसे ज्यादा ध्यान नहीं जाता है, वह है इसका सिनेमा, राजस्थानी फिल्म उद्योग। जितना विकास इस भाषा के फिल्मों का होना चाहिए था उतना हुआ नहीं। इसलिए, हमने राजस्थानी फिल्मों और सिनेमा के इस संदर्भ में आप सभी को कुछ बताने का प्रयास करता हूँ।

1. राजस्थानी सिनेमा :-

भारत के शाही शहर राजस्थान में निर्मित और निर्मित सभी फिल्में राजस्थान के सिनेमा का निर्माण करती हैं। इन फिल्मों की भाषाएँ ज्यादातर आदिवासी और राजस्थान की क्षेत्रीय भाषाएँ हैं जैसे मारवाड़ी, मेवाड़ी, ब्रजभाषा, बागरी जो प्रायः वहाँ के जनसमुदाय में बोली तो जरूर जाती है, भले ही लिखी न जाती हो। गर्व के साथ कह सकता हूँ कि मारवाड़ी बंधुओ का अपना भाषा प्रेम देखने लायक होता है।

2. राजस्थानी फिल्म की शुरूआत :-

1942 में रिलीज हुई पहली राजस्थानी फिल्म नजराना थी। यह मारवाड़ी भाषा में निर्मित और जीपी कपूर द्वारा निर्देशित थी। जिसममें देशीय संस्कृति की झलक मिलती है।

3. प्रसिद्ध राजस्थानी फिल्म :-

सबसे ज्यादा प्रसिद्धि और नाम बटोरने वाली पहली राजस्थानी फिल्म बाबासा री लाड़ली थी। 1961 में रिलीज हुई इस फिल्म के निर्माता बीके आदर्श थे। पारिवारिक इमोशन से भरी यह फिल्म तत्कालीन जनता को खूब भायी। तहे दिल से राजस्थानी जनमानस इसको स्वीकार किया और राजस्थानी भाषा की फिल्में भी उपयोगी है इसको स्वीकार किया गया।

4. बाद की कुछ प्रसिद्ध राजस्थानी फिल्में :-

बाबासा री लाड़ली के अलावा, जो पहली फिल्म थी जो प्रसिद्ध हुई, कुछ अन्य सदाबहार फिल्में जो लोगों के दिलों में बनी रहीं, वे थीं धनक (2015) – नागेश कुकुनूर द्वारा निर्देशित, तावड़ों द सनलाइट (2017) – विजय सुथार द्वारा निर्देशित, मैं अम कलाम (2010) – नीला माधव पांडा द्वारा निर्देशित, रूदाली (1993) – कल्पना

लाजमी द्वारा निर्देशित, मनोरमा सिक्स फिट अंडर (2007) – नवदीप सिंह, बिरानी सरदार द्वारा निर्देशित (2015) – गांधी ब्रदर्स द्वारा निर्देशित, मेरो बदलू (2015) – कई और फिल्मों के बीच महेंद्र गौर द्वारा निर्देशित। क्रम चलना चाहिए था पर आशातीत नहीं चला। मुझे जहां तक लगता है की अभी भी राजस्थान की भाषा में इतना कुछ है जिस पर उच्च कोटी की फिल्में बनाई जा सकती है

5. राजस्थान के सिनेमा का डिजिटलीकरण और विकास :–

एक समय था जब सिंगल स्क्रीन सिनेमा में प्रोजेक्टर और रील के जरिए फिल्में चलती थीं। हालाँकि, अब सभी सिनेमाघर और सिंगल–स्क्रीन थिएटर फिल्मों को चलाने के लिए सैटेलाइट प्रोजेक्टर का उपयोग करते हैं। इसके परिणामस्वरूप बड़े पर्दे पर प्रदर्शित होने वाली फिल्मों की गुणवत्ता में वृद्धि हुई है। इसके अलावा, ई–टिकट की शुरूआत ने राजस्थानी फिल्म उद्योग के विकास में भी योगदान दिया है। अब लोगों को टिकट खरीदने के लिए लंबी कतारों में नहीं लगना पड़ेगा क्योंकि वे ऑनलाइन आसानी से उपलब्ध हैं। इससे न केवल समय की बचत होती है बल्कि टिकट खरीदने में होने वाले प्रयास की भी बचत होती है। साथ ही इससे टिकटों की कालाबाजारी में भी जबरदस्त कमी आई है। इन सभी ने राजस्थानी फिल्म उद्योग के विकास में योगदान दिया है।

6. मनोरंजन कर :–

मनोरंजन कर–जो कि 100 प्रतिशत तक था, एक अन्य कारक था जो राजस्थानी फिल्म उद्योग को प्रभावित करता था। यह सिनेमा को केवल अमीरों के लिए उपलब्ध कराता था, और अधिक से अधिक लोगों को फिल्में देखने के लिए हतोत्साहित करता था। हालांकि, जीएसटी (गुड्स एंड सर्विसेज टैक्स) की शुरूआत के कारण, कर की दर 28 प्रतिशत हो गई है। इसके अलावा, सरकार उन सभी सिंगल स्क्रीन को भी प्रोत्साहित करती है जो अपनी कीमतों को 100 रुपये पर सीमित करते हैं और केवल 18 प्रतिशत का कर लगाते हैं। इससे दर्शक–आधार में उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

7. वित्त और गुणवत्ता की कमी :–

राजस्थानी फिल्म उद्योग के उत्थान में योगदान देने वाले सभी कारकों के बावजूद, यह अभी भी खतरों का सामना कर रहा है और मर रहा है। राजस्थानी फिल्म उद्योग में प्रतिभा, वित्त और गुणवत्ता की कमी प्रमुख कारकों में से एक है। इसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय राजस्थानी फिल्मों को रिलीज करने वाली स्क्रीनों की संख्या में कमी आई है। पंजाबी, तमिल और तेलुगु फिल्म उद्योग आसमान छू रहे हैं और बाजारों में 200 करोड़ रुपये तक कमा रहे हैं। हालाँकि, दुर्भाग्य से, राजस्थानी फिल्म उद्योग के लिए ऐसा कहना मुश्किल है। इसका एक प्रमुख कारण मारवाड़ी बंधुओं का प्रवासी होना है। राजस्थान के अलावा अन्य प्रदेशों में उनको राजस्थानी भाषा की फिल्में देखने को नहीं मिलती। पर आधुनिक संसाधनो के हो जाने से इस समस्या का समाधान धीरे धीरे हो रहा है।

8. राजस्थानी फिल्म उद्योग और हॉलीवुड :–

जैसा कि हम अमेरिकी शो और फिल्में देखते रहते हैं, बीटीएस, बिली इलिश और इतने अधिक पॉप हॉलीवुड सितारों और मशहूर हस्तियों के प्रति जुनूनी हैं, राजस्थानी सिनेमा गंभीर खतरे में है। कई नवीनतम फिल्में और शो जैसे एवंजर्स–एंड गेम, द ऑफिस, गे आफ थ्रोन्स और कई अन्य ने रिकॉर्ड बनाए हैं – वे भारतीय

बाजार में चमत्कार कर रहे हैं। नतीजतन, हॉलीवुड फिल्म निर्माताओं और निर्माताओं ने भारत को दुनिया के सबसे संभावित बाजारों में से एक के रूप में पहचानना शुरू कर दिया है। अतः इससे राजस्थान की क्षेत्रीय फिल्मों को गंभीर खतरा उत्पन्न हो रहा है।

9. ओटीटी प्लेटफॉर्म का उदय :–

वे दिन गए जब लोग उस दिन का इंतजार करते थे जब वे थिएटर हॉल में जाकर अपनी पसंदीदा फिल्में देखेंगे। सस्ते इंटरनेट प्लान और ओटीटी प्लेटफॉर्म में वृद्धि के साथ, सामग्री हर जगह आसानी से उपलब्ध है। अब, भले ही यह अधिक लोगों के लिए सामग्री उपलब्ध कराती है, इसके परिणामस्वरूप फिल्म देखने के लिए टिकट खरीदने की इच्छा रखने वाले लोगों की संख्या में भी महत्वपूर्ण गिरावट आई है। नतीजतन, यह समग्र राजस्थानी फिल्म उद्योग को प्रभावित करता है।

10. प्रचार का अभाव और खराब उत्पादन :–

2000 के दशक के बाद से राजस्थानी फिल्म उद्योग में निर्मित फिल्मों की संख्या में भारी गिरावट देखी गई है। गिरावट के पीछे कुछ प्रमुख कारण पदौन्नति की कमी और खराब उत्पादन गुणवत्ता हैं। आजकल, फिल्म निर्माता और निर्माता फिल्म के प्रचार पर अच्छा खासा समय और पैसा खर्च करते हैं। इसलिए, जब किसी फिल्म को प्रचार की कमी के कारण उतना ध्यान नहीं मिलता है, जो कभी–कभी वित्त की कमी से भी उत्पन्न होता है, तो फिल्म थिएटर में उतना अच्छा प्रदर्शन नहीं कर सकती है। एक अन्य कारक खराब स्क्रिप्ट है जिसके कारण मुख्यधारा के फिल्म निर्माता और अभिनेता 7 दशक पुराने राजस्थानी फिल्म उद्योग से दूरी बना रहे हैं। कई प्रसिद्ध और मुख्यधारा के अभिनेता और फिल्म निर्माता, जो राजस्थानी फिल्म उद्योग में सक्रिय रूप से योगदान करते थे, अब बॉलीवुड के लिए लक्ष्य बना रहे हैं।

गौर से देखा जाये तो राजस्थानी फिल्मों को और भी गंभीरता से लेने की जरूरत है और इस विरासत को किसी भी कीमत पर बचाने की आवश्यकता है। सवाल सिर्फ भाषा का ही नहीं है बल्कि उस इतिहास का भी है जो उसमें लिखा गया है।

जय राजस्थान।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 50-53

NEP 2020 में स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक दर्शन

डॉ. गंगा सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, स्वामी विवेकानंद कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, हल्द्वानी, उत्तराखंड।
नंदन सिंह
रिसर्च स्कॉलर, कुमाऊं यूनिवर्सिटी, नैनीताल।

अमूर्त (Abstract)

विवेकानंद के दृष्टिकोण और एनईपी 2020 के बीच समानता के कई आधार मौजूद हैं जो दर्शाता है कि हम कैसे उनके दृष्टिकोण द्वारा निर्धारित मार्ग पर चलने की कोशिश कर रहे हैं। उनकी शिक्षा योजना व्यापक और पूर्ण है क्योंकि इसका उद्देश्य युवा शिक्षार्थियों में सभी आवश्यक गुण विकसित करना है ताकि उन्हें अपने जीवन को उत्साहपूर्वक आगे बढ़ाने और राष्ट्र के लिए एक संपत्ति बनने में मदद मिल सके। उनका अभूतपूर्व शैक्षिक दर्शन राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों में प्रतिनिधित्व होता है, इस प्रकार वर्तमान पेपर एनईपी 2020 के आलोक में स्वामी विवेकानंद के दूरदर्शी आदर्शों पर प्रकाश डालता है।

की-वर्ड (Key word) : एनईपी 2020, स्वामी विवेकानंद, शिक्षा, मातृभाषा, नैतिक मूल्य, शैक्षिक दर्शन आदि।

परिचय (Introduction)

स्वामी विवेकानन्द समझ गये थे कि मानव जाति संकट से गुजर रही है। जीवन के वैज्ञानिक और यांत्रिक तरीकों पर अत्यधिक जोर तेजी से मनुष्य को एक मशीन की स्थिति में ला रहा है। नैतिक एवं धार्मिक मूल्यों को कमजोर किया जा रहा है। सभ्यता के मूलभूत सिद्धांतों की अनदेखी की जा रही है। आज मनुष्य, जो समाज का प्रमुख घटक है, स्वभावतः मानव नहीं रह गया है। इसलिए, स्वामी विवेकानन्द ने ऐसे मनुष्य के निर्माण की परिकल्पना की जो दयालु होने के साथ–साथ बुद्धिमान भी हो, "दिल से महान और दिमाग से महान" हो, और जो गतिशीलता से समाज में सकारात्मक बदलाव ला सके। स्वामी विवेकानन्द ने समझा कि मन के ऐसे गुण संभव हैं केवल एक मजबूत शरीर में,लोहे की मांसपेशियों और स्टील की नसों के साथ, जैसा कि उन्होंने कहा था,वह चाहते थे कि छात्र सबसे पहले शारीरिक रूप से मजबूत और सक्रिय बनें। वे ऐसी शिक्षा चाहते थे जो शक्ति और पुरुषार्थ को बढ़ावा दे। शिक्षा प्रत्येक छात्र के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करती है। यह मनुष्य निर्माण करने वाली शिक्षा है। स्वामी विवेकानन्द एक क्रांतिकारी विचारक थे जिन्होंने अपने समय की शिक्षा प्रणाली को त्यागने का साहस किया और इसके स्थान पर एक सर्वव्यापी छात्र–केंद्रित शिक्षा प्रणाली लागू करने का प्रस्ताव रखा।

अध्ययन का उद्देश्य (Objectives of Research)

1. NEP 2020 के संबंध में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों, आदर्शों का अध्ययन करना।
2. स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों (19वीं शताब्दी में) की समानताओं पर चर्चा करना और 21वीं सदी में एनईपी 2020 का शैक्षिक दृष्टिकोण।
3. एनईपी–2020 के लक्ष्यों और उद्देश्यों और शिक्षा पर स्वामी विवेकानन्द के विचारों, टिप्पणियों पर चर्चा करने के लिए।

अध्ययन की पद्धति (Research method)

यह अध्ययन सैद्धांतिक एवं गुणात्मक आधारित प्रकृति का है, शोधकर्ता उद्देश्यों का विश्लेषण प्राथमिक के साथ–साथ विभिन्न माध्यमिक स्रोतों पर भी निर्भर करता है। यहां द्वितीयक स्रोत पुस्तकें, जर्नल और लेख हैं और प्राथमिक स्रोत एनईपी रिपोर्ट और किताबें हैं।

NEP 2020 में स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक दर्शन (Educational philosophy of Swami Vivekananda in NEP 2020) – वास्तव में, यह अध्ययन गुणात्मक प्रकृति का है और परिणामों का विश्लेषण रिपोर्टों/पत्रों/लेखों के आधार पर किया गया है पिछली कुछ पत्रिकाएँ। चर्चा के बाद लगातार निष्कर्ष निकलते रहे –

मातृभाषा के आदर्श :–

स्वामी जी ने जब मातृभाषा के महत्व पर बल दिया। युवा शिक्षार्थियों को शिक्षा प्रदान करना और सर्वांगीण रूप से अंग्रेजी और संस्कृत की शिक्षा निर्धारित करना जबकि पश्चिमी विज्ञान और प्रौद्योगिकी में महारत हासिल करने के लिए अंग्रेजी आवश्यक है, इसी भावना के साथ, एनईपी प्राथमिक स्तर पर छात्रों के लिए मातृभाषा में शिक्षा अनिवार्य बनाना चाहता है। इसके अलावा, उन्हें आधिकारिक भाषाओं की सूची में उल्लिखित किसी अन्य भाषा का अध्ययन करना आवश्यक होगा।

आत्मनिर्भर भारत के आदर्श :–

विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर स्वामी के जोर का उल्लेख एनईपी में एनआरएफ, एनईटीएफ की स्थापना जैसी प्रमुख पहलों के साथ किया गया है। उनका दृष्टिकोण ऐसे व्यक्तियों को विकसित करने का था जो अवसर के बजाय अवसर प्रदाता बनें यह आत्मनिर्भर भारत के लिए एक निश्चित प्रारूप होना चाहिए।

सच्ची शिक्षा के आदर्श :–

एनईपी 2020 प्रत्येक की विशिष्टता को समृद्ध और सशक्त बनाने का वादा करता है। छात्र क्योंकि शिक्षा किसी की क्षमता को सीमित करने के बारे में नहीं है, बल्कि इसे विस्तारित करने और इसे चरम पर ले जाने के बारे में है जैसा कि स्वामी जी ने कहा था "सच्ची शिक्षा मानव स्थिति में सुधार करने के लिए सत्य की निरंतर खोज और निरंतर प्रयास है"।

विश्वगुरू का आदर्श :–

एनईपी 2020 स्टडी इन इंडिया जैसी पहल के माध्यम से भारत को विश्वगुरु की पूर्व स्थिति में बहाल

करने का एक उच्च उद्देश्य रखता है। जैसाकि स्वामी जी ने राष्ट्रीय परिवर्तन और चरित्र परिवर्तन के बीच घनिष्ठ संबंध पर टिप्पणी की थी, एनईपी 2020 किसी व्यक्ति के चरित्र का निर्माण, उसकी बौद्धिक क्षमता के माध्यम से करने और उसे देश और दुनिया में योगदान करते हुए अपने पैरों पर खड़े होने के लिए तैयार करने की इच्छा जताई थी।

छात्रों को पूर्ण मनुष्य बनाने का आदर्श :–

स्वामी जी ने उपदेश दिया, "यह मत मानो कि तुम कमजोर या छोटे हो, तुम कुछ भी और सब कुछ कर सकते हो।" उनकी दृष्टि का एक महत्वपूर्ण घटक आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को बढ़ावा देने पर जोर देना था क्योंकि उनके अनुसार "शिक्षा केवल दिमाग को बहुत सारे तथ्यों से भरना नहीं है", इसे एक सार्थक और उद्देश्यपूर्ण अभ्यास होना चाहिए एनईपी 2020 का उद्देश्य भी छात्र को पूर्ण मानव नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों, चरित्र, ज्ञान, कौशल, रचनात्मक प्रतिभा, नवाचार और नेतृत्व कौशल से युक्त जो अनुकरणीय प्रायोजन भावना और टीम वर्क का दावा कर सकता है। स्वामी जी हमेशा मानसिक और शारीरिक शक्ति दोनों के विकास के लिए प्रतिबद्ध रहते हैं। उन्होंने कहा कि व्यक्ति में "मांसपेशियां लोहे जैसी और नसें स्टील जैसी" होनी चाहिए। सरकार का फिट इंडिया मूवमेंट और एनईपी 2020 उनके दर्शन से प्रेरित और निर्देशित हैं।

आशावादी भविष्य की शिक्षा :–

नई नीति 2021–22 से शुरू होने वाले इस दशक में धीरे–धीरे लागू होने की उम्मीद है। प्रत्येक छात्र, शिक्षक, अभिभावक और अन्य हितधारकों की भूमिका सर्वोपरि है। सभी हितधारकों की सक्रिय भागीदारी के बिना, नई नीति का प्रभावी कार्यान्वयन एक दूर का सपना होगा। शिक्षा मंत्रालय स्वामी जी के शब्दों "उठो, जागो और रुको नहीं" का पालन करने का संकल्प लेता है जब तक लक्ष्य प्राप्त नहीं हो जाता" एनईपी 2020 के कार्यान्वयन के संबंध में, एक कट्टर आशावादी के रूप में इसका प्रयास करते रहेंगे।

निष्कर्ष (Conclusion)

एनईपी 2020 राष्ट्र और युवाओं के लिए स्वामी विवेकानन्द की यात्रा का अनुसरण करता है। इसी क्रम में भारत सरकार पूर्णता सुनिश्चित करने के लिए कक्षा I से V तक के छात्रों के लिए रामकृष्ण मिशन का जागृति कार्यक्रम शुरू किया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) के दर्शन के अनुरूप बच्चे का व्यक्तित्व विकास 2020। इस मिशन के तहत, 'जागृति' कार्यक्रम बच्चों की क्षमता की पहचान करेगा। यह मिशन जुड़ा हुआ है।

एनईपी को जो एनईपी 2020 को गहराई से सही और सुचारू रूप से लागू करने के लिए नींव के रूप में काम करेगा। स्वामी विवेकानन्द से लेकर श्री अरविन्द तक महात्मा गांधी, हमारे कई महान लोगों ने एक ऐसी शिक्षा प्रणाली की कल्पना की थी जो प्रगतिशील हो और आर में निहित हो देश को आगे ले जाने के लिए सभ्यतागत मूल्य। हमें 21वीं सदी के ऐसे नागरिक तैयार करने होंगे जो ले सकें वैश्विक जिम्मेदारियाँ. इसलिए हमारी शिक्षा प्रणाली राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुरूप होनी चाहिए।

एनईपी 2020 छात्रों के लिए शिक्षक–आधारित समग्र शिक्षा प्रणाली पर ध्यान देने के साथ उस दिशा में एक कदम है।

सन्दर्भ :–

1. Aggarwal JC, Gupta S. Great Philosophers and Thinkers on Education. New Delhi : Shipra Publication, 2006.
2. Bharathi SV. Educational philosophy of swami Vivekananda, New Delhi : Discovering Publishing House; 2011.
3. Bharatbhai JR. Views of Swami Vivekananda for a Better Parameter of Human Life. Indian Journal Of Research-Paripex: c2013, 2(8). ISSN-2250-1991.
4. Bhupendranath Datta, Swami Vivekanananda. Patriot Prophet, Nababharat Publishers, Kolkata : C1993.
5. Chaube SP. Recent Educational Philosophies in India, Ram Prasad & Sons. Agra; 1967.
6. Chaturvedi Badrinath Swami Vivekananda. The Living Vedanta, Penguin : 2006.
7. Dash BN. Educational Philosophy and Teaching Practice. New Delhi: Kalyani Publishers; 1986
8. Marie Louise Burke, Swami Vivekananda, Prophet of the Modern Age. The Ramakrishna Mission Institute of Culture, Kolkata; c1974.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 54-57

NEP 2020 और महिला शिक्षा : महत्व व चुनौतियां

पूजा पांडे
रिसर्च स्कॉलर, मदरहुड विश्वविद्यालय, रुड़की, उत्तराखंड।

शोध सारांश :–

मानव के सर्वांगीण विकास का मूल शिक्षा है एक न्यायसंगत और समावेशी समाज के निर्माण और राष्ट्र के विकास के लिए भी शिक्षा आवश्यक है। इसी को ध्यान में रखते हुए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बालिकाओं और महिलाओं की शिक्षा में भागेदारी बढ़ाने के लिए कुछ प्रावधान किये गए हैं जिसमें जेन्डर–समावेशी कोष (पैरा 6.8 एन ई पी 2020) की स्थापना एक नया और क्रांतिकारी कदम है। इसमें कोई संदेह नहीं कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने पूरी ईमानदारी से उन समस्याओं और बाधाओं को पहचाना है जो लड़कियों की शिक्षा के रास्ते में आती हैं। यह सकारात्मक संकेत है कि राष्ट्रीय शिक्षा के नीतिगत प्रावधान महिलाओं की शिक्षा में भागेदारी को बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध हैं। शिक्षा नीति की प्रस्तावना में ही भारत की विदुषी नारियों गार्गी और मैत्रेयी का उल्लेख प्राचीन काल में शिक्षा के क्षेत्र में नारियों की सशक्त उपस्थिति को तो दर्शाता ही है साथ ही भविष्य में उनकी बढ़ती हुई सहभागिता की ओर सुखद संकेत देता है।

कूट शब्द :– शिक्षा नीति, एनईपी 2020, महिला शिक्षा, बालिका शिक्षा, समावेशी शिक्षा, सहभागिता आदि।

प्रस्तावना :–

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 शिक्षा के सभी स्तरों प्री–स्कूल से लेकर माध्यमिक और उच्च शिक्षा तक सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से वंचित समूहों (एसईडीजी) की एक समान सहभागिता सुनिश्चित करने पर जोर देती है। सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समूहों की व्याख्या करते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उन्हें अनेक श्रेणियों में बांटा गया है (पैरा 6.2)। इन श्रेणियों को लिंग (महिला व ट्रांस जेन्डर व्यक्ति), सामाजिक–सांस्कृतिक पहचान (अनुसूचित जाति, जनजाति, ओ बी सी, अल्पसंख्यक वर्ग), भौगोलिक पहचान (जैसे गांव, कस्बे आदि के विद्यार्थी), विशेष आवश्यकता (जैसे सीखने की अक्षमता सहित), सामाजिक– आर्थिक परिस्थिति (जैसे प्रवासी समुदाय, निम्न आय वाले परिवार, असहाय परिस्थिति में रहने वाले बच्चे, बाल तस्करी के शिकार बच्चे या उनके बच्चे, अनाथ बच्चे जिनमें शहरों में भीख मांगने वाले व शहरी गरीब भी शामिल हैं) आदि के आधार पर वर्गीकृत किया गया है।

शोध उद्देश्य :–

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में वर्णित महिला शिक्षा के प्रावधान का अध्ययन करना।
2. महिला शिक्षा की वर्तमान प्रावधानों का अध्ययन करना।

3. महिला शिक्षा में सुधार हेतु सुझाव देना।

4. महिला शिक्षा को बढ़ाने के लिए किए कार्यों का अध्ययन करना।

NEP 2020 और महिला शिक्षा :–

विद्यालय स्तर पर बालिकाओं के लिए नई शिक्षा नीति 2020 में प्रावधान –

1. बालिका छात्रावासों तक सुरक्षित और व्यवहारिक पहुंच प्रदान की जाएगी।
2. जहां विद्यालय अधिक दूरी पर है, ग्रामीण अंचलों, पहाड़ी और दुर्गम क्षेत्रों, दूरदराज के इलाकों, वहां निःशुल्क छात्रावासों का निर्माण किया जाएगा और बालिकाओं की सुरक्षा के लिए उपयुक्त व्यवस्था होगी।
3. कस्तूरबा गांधी विद्यालय जो पहले से ही भारत सरकार की योजना है उसे और अधिक मजबूत बनाया जाएगा। सामाजिक आर्थिक रूप से पिछड़े समूहों की बालिकाओं की गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा वाले विद्यालयों में 12वीं स्तर तक विस्तार किया जाएगा ताकि छात्राओं का नामांकन बढ़ सके।
4. सामाजिक आर्थिक रूप से वंचित तथा अल्प प्रतिनिधित्व समूह में आधी संख्या महिलाओं एवं बालिकाओं की है। विशेषकर ऐसी महिलाओं के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी। इन छात्राओं पर विशेष ध्यान केंद्रित करके नीति एवं योजनाएं बनाई जाएंगी।
5. छात्राओं की भागीदारी और सुरक्षा की दृष्टि से ऐसे उपाय किए जाएंगे, जिससे वह विद्यालयों से जुड़ी रहे जैसे अधिक दूरी वाले स्थानों पर छात्राओं को साइकिल प्रदान की जाएगी तथा फीस आदि न भर पाने की स्थिति में उनके माता–पिता एवं अभिभावकों को सशर्त नगद हस्तांतरण किया जाएगा ताकि गरीबी के कारण उन्हें स्कूल छोड़ना ना पड़े।
6. विद्यालयों में सकारात्मक वातावरण, भौतिक सुविधाएं विशेषकर स्वच्छता, शौचालय आदि का विशेष ध्यान रखा जाएगा। जहां विद्यालय सह शिक्षा वाले हैं, वहां अलग शौचालय आदि अन्य बुनियादी सुविधाएं एवं सुरक्षा का ध्यान रखा जाएगा।
7. कार्यस्थल पर सुरक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण के प्रति सभी शिक्षक संवेदनशील होंगे तथा विद्यालय में समावेशी एवं संवेदनशील संस्कृति का निर्माण किया जाए।
8. नई शिक्षा नीति 2020 में यह भी स्पष्ट लिखा गया है कि स्कूल में नामांकित सभी बच्चे विशेषकर बालिकाओं किशोरों द्वारा सामना किए जाने वाले गंभीर मुद्दों जैसे कई प्रकार के भेदभाव उत्पीड़न तथा उनके अधिकारों सुरक्षा के खिलाफ किसी भी तरह के उल्लंघन पर कुशल तंत्र के साथ प्राथमिकता दी जाएंगी।
9. बालिकाओं और ट्रांसजेंडर छात्रों के लिए जेंडर समावेशी निधि का गठन करने की बात एक नया और क्रांतिकारी कदम है। यह जेंडर समावेशी कोष राज्यों के लिए उपलब्ध करवाया जाएगा, जिससे उनको ऐसी नीतियों योजनाओं कार्यक्रमों आदि को लागू करने में सहायता मिलेगी जिससे बालिकाओं को विद्यालय परिसर में अधिक सुरक्षा पूर्ण स्वस्थ वातावरण मिल सके।
10. नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ओपन स्कूलिंग और राज्यों के ओपन स्कूल द्वारा प्रस्तुत ओपन एंड डिस्टेंस लर्निंग कार्यक्रम का विस्तार और सुदृढ़ीकरण किया जाएगा, हालांकि यह प्रावधान सभी विद्यार्थियों के लिए हैं किंतु बालिकाओं को उसका विशेष लाभ मिलेगा जो विद्यालय नहीं जा सकती वह भी शिक्षा प्राप्त कर

सकेंगी।

उच्चतम स्तर पर बालिका शिक्षा के प्रावधान :–

1. बात करें उच्चतम शिक्षा की तो उच्चतम शिक्षण संस्थानों की प्रवेश प्रक्रिया में जेंडर संतुलन को बढ़ावा दिया जाएगा।
2. उच्चतर शिक्षण संस्थाओं के सभी पहलुओं द्वारा संकाय सदस्यों, परामर्शदाताओं और विद्यार्थियों को जेंडर और जेंडर पहचान के प्रति संवेदनशील और समावेशित किया जाएगा।
3. परिसर में भेदभाव और उत्पीड़न के लिए बने हुए नियमों को सख्ती से लागू किया जाए। यह सभी व्यवस्थाएं उच्चतर शिक्षा संस्थाओं में महिला विद्यार्थियों के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण करेंगे।
4. स्नातक पाठ्यक्रम में मल्टीपल एंट्री एंड एग्जिट व्यवस्था को अपनाया गया है इसके तहत 3 या 4 वर्ष के स्नातक कार्यक्रम में छात्र कई स्तरों पर पाठ्यक्रम को छोड़ सकेंगे और उन्हें उसी के अनुरूप डिग्री या प्रमाण पत्र प्रदान किया जाएगा (जैसे– 1 वर्ष के बाद प्रमाण पत्र, 2 वर्षों के बाद एडवांस डिप्लोमा, 3 वर्षों के बाद स्नातक की डिग्री तथा 4 वर्षों के बाद शोध के साथ स्नातक) इसके अतिरिक्त एक एकेडमिक क्रेडिट बैंक (एबीसी) की भी स्थापना की जाने का प्रावधान है जो अलग–अलग मान्यता प्राप्त संस्थाओं से प्राप्त क्रेडिट को एकत्रित करेगा और विद्यार्थी उस क्रेडिट का उपयोग करके किसी भी उच्चतर शिक्षा संस्थान से डिग्री प्राप्त कर सकेंगे। वैसे यह सुविधाएं सभी विद्यार्थियों के लिए हैं किंतु महिलाओं के लिए यह विशेष लाभकारी होगा क्योंकि विवाह, पारिवारिक कारण व अन्य कारणों की वजह से उन्हें अपनी पढ़ाई बीच में छोड़नी पड़ती है। इस प्रावधान से उन्हें विभिन्न स्तरों पर सर्टिफिकेट, डिप्लोमा और डिग्री के अनेक विकल्प उपलब्ध हो जाएंगे। अनेक कारणों की वजह से उच्च शिक्षा और शोध के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी जो कम हो जाती थी उनको दूर करने की दिशा में यह बदलाव विशेष रूप से लाभकारी होगा।
5. व्यवसायिक शिक्षा के कार्यक्रम को मुख्य धारा की शिक्षा में एकीकृत करने का प्रावधान है, जो कि उच्चतर, प्राथमिक, माध्यमिक कक्षाओं से होती हुई उच्चतर शिक्षा तक जाएगी जिससे प्रत्येक छात्र कम से कम एक व्यवसाय से जुड़े कौशल को सीख सकें। विशेषकर महिलाएं इससे आत्मनिर्भर बन सकें।
6. उच्च शिक्षण संस्थाओं को सॉफ्ट स्किल्स सहित विभिन्न कौशलों तथा "लोक विधाओं "में सीमित अवधि के सार्टिफिकेट कोर्स करवाने की भी अनुमति होगी इससे उच्च शिक्षण में महिलाएं अपनी रुचि एवं सुविधा के अनुसार कौशल प्राप्त करके आत्मनिर्भर बन सकेंगी।

महिला शिक्षा के मार्ग में चुनौतियां :–

भारतीय समाज पुरुष प्रधान है। महिलाओं को पुरुषों के बराबर सामाजिक दर्जा नहीं दिया जाता है और उन्हें घर की चहारदीवारी तक सीमित कर दिया जाता है। हालाँकि ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा शहरी क्षेत्रों में स्थिति अच्छी है, परंतु इस तथ्य से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि आज भी देश की अधिकांश आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है।

हम दुनिया की सुपर पॉवर बनने के लिये तेजी से प्रगति कर रहे हैं, परंतु लैंगिक असमानता की चुनौती आज भी हमारे समक्ष एक कठोर वास्तविकता के रूप में खड़ी है। यहाँ तक कि देश में कई शिक्षित और

कामकाजी शहरी महिलाएँ भी लैंगिक असमानता का अनुभव करती हैं।

समाज में यह मिथ काफी प्रचलित है कि किसी विशेष कार्य या परियोजना के लिये महिलाओं की दक्षता उनके पुरुष समकक्षों के मुकाबले कम होती है और इसी कारण देश में महिलाओं तथा पुरुषों के औसत वेतन में काफी अंतर आता है।

देश में महिला सुरक्षा अभी एक बड़ा मुद्दा बना हुआ है, जिसके कारण कई अभिभावक लड़कियों को स्कूल भेजने से कतराते हैं। हालाँकि सरकार द्वारा इस क्षेत्र में काफी काम किया गया है, परंतु वे सभी प्रयास इस मुद्दे को पूर्णतः संबोधित करने में असफल रहे हैं।

निष्कर्ष :–

ऐसा प्रतीत होता है कि नई शिक्षा नीति 2020 में प्रस्तावित अधिक छात्रवृत्तियां, महिला छात्रावासों का विस्तार, अलग से जेन्डर समावेशी फंड, क्रेडिट ट्रांसफर, अधिक सुरक्षित स्कूल/विश्वविद्यालय परिसर आदि अनेक कदम मिलकर बालिकाओं और महिलाओं को एक बड़ी संख्या में विद्यालयों तक लाने में कामयाब हो पाएंगे। इस प्रकार महिलाओं की शिक्षा में भागेदारी को बढ़ाने हेतु नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के बहुत विस्तृत आयाम हैं। शिक्षा के सभी स्तरों में लिंग संतुलन, सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित समूहों की महिलाओं की गुणवत्तापरक शिक्षा, शिक्षण परिसरों में महिलाओं की सुरक्षा आदि के प्रति यह नीति जागरूक और संवेदनशील है। अब प्रतीक्षा है तो इसके अतिशीघ्र क्रियान्वयन की ताकि बेहतर परिणाम प्राप्त हो सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रकाश कुमार, 21वीं सदी की मांग पूरी करेगी नई शिक्षा नीति, आउटलुक हिंदी, 24 अगस्त 2020
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
3. प्रो. के.एल. शर्मा, दैनिक भास्कर, जयपुर संस्करण, पृष्ठ संख्या 2, 24 अगस्त 2020
4. गंगवाल सुभाष, नई शिक्षा नीति, 21वीं सदी की चुनौतियों का करेगी मुकाबला, दैनिक नवज्योति पृष्ठ संख्या 22, अगस्त 2020
5. राजस्थान पत्रिका नागौर, 28 जनवरी 2020, सम्पादकीय पृष्ठ।
6. तन्खा वरूण, सुप्रीम कोर्ट अधिवक्ता, राजस्थान पत्रिका नागौर, 26 अगस्त 2020, सम्पादकीय पृष्ठ।
7. सिंह दुर्गेश, क्रॉनिकल मासिक पत्रिका, मई 2020, पृष्ठ संख्या 80–81

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 58-62

Smart Cities Mission in India : A Study

RAHUL SAXENA
PhD Pursuing, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra.

Abstract :-

The Smart Cities Mission in India represents a visionary and ambitious urban development program initiated by the Indian government in 2015. With the rapid urbanization of the country, this mission seeks to address the challenges posed by urban growth while harnessing technology and innovation to create sustainable, efficient, and inclusive cities. The primary objectives of the Smart Cities Mission are,. Infrastructure Development, Technology Integration, Sustainability , Citizen-Centric Approach, Inclusivity, Economic Growth, Resilience, Urban Mobility, Data-Driven Governance, Replicability and Scalability. The Smart Cities Mission in India represents a holistic approach to urban development, aiming to create cities that are not only technologically advanced but also sustainable, inclusive, and responsive to the needs of their residents. It is a long-term endeavor that strives to make urban living in India more comfortable, efficient, and connected.

Keywords : Smart City Mission, Smart Mission.

In 2015, the Smart Cities Mission was launched by the government. India. Its objective was to improve infrastructure and promote economic growth in 100 cities of the country. The mission also aims to create replica models of these cities which can inspire other cities in the country to become "smart". The Smart Cities Mission helps societies address socioeconomic and environmental challenges in urban areas.

In 2016, the first list of 20 cities was announced, and the development of these 20 cities was planned to be completed by 2022. These 20 cities were: Ahmedabad, Bhubaneswar, Pune, Coimbatore, Jabalpur, Jaipur, Surat, Guwahati, Chennai, Kochi, Visakhapatnam, Indore, Bhopal, Udaipur, Ludhiana Kakinada, Belgaum, Solapur and Bhuvanagiri, as well as New Delhi under NDMC. Upcoming area. More cities were added in later periods.

What do smart cities do?

Smart cities leverage technologies to provide services to citizens. Various electronic methods

and sensors are used to collect data. The insights from the data obtained help in operational improvement of garbage collection, utility supply, traffic movement, environment management and social services management. The use of information and communication technology allows city officials to monitor the city in real time and interact smoothly with the community.

Features of smart city :-

Smart cities include many features, including smart healthcare systems, governance, transportation systems, better monitoring for security, smart infrastructure, better job opportunities and every other facility and amenities for a comfortable life.

A city can be considered a smart city if it has the following characteristics :

- Society needs well-developed health care, education, housing and infrastructure.
- Provide improved key services to the community in a reliable and cost-effective manner.
- Better housing.
- To improve the economic development of the society.
- Effective management of resources to reduce shortages.
- Create more employment opportunities.
- A well-developed smart plan for data analysis and widespread community participation
- To boost the local economy.
- Well-controlled urbanization and coping strategies for population growth and climate change.
- Use of smart technology for community needs
- Well organized transportation system.

These characteristics differentiate smart cities from other cities. Smart cities are developed to inspire other cities to improve their infrastructure for the economic growth of cities.

Internet of Things, public safety, smart mobility, increased tourism, social infrastructure and physical infrastructure make it easier to transform a city into a smart city.

The insights gained from the roadmaps of leading smart cities around the world are summarized in four pillars. These pillars include :

1. An IoT-enabled infrastructure consisting of a robust network of devices and applications.
2. Intelligent transportation systems, shared mobility services and smart cities help more in achieving effective mobility.
3. Cyber resilience maintains a balance between efficiency and data privacy.
4. Involvement of the community in smart cities initiatives.

The foundation of a smart city is laid on these pillars. Integration of these features in smart city project enables cities to transform into smart cities.

Steps towards converting a normal city into a smart city

Set metrics after collecting data about the city to transform it into a smart city. After that, local officials start some smart projects and take them to higher level on their success. Reviewing community experiences helps improve areas needed.

The steps to convert a normal city into a smart city are :

Step-1: Collect data about the city and its key improvement areas.

Step-2: Determine the available time frame and budget as well as metrics for what it wants to be.

Step-3: Start with 1-2 small projects and complete them within the stipulated time frame. There may be changes/changes in the existing standard operating infrastructure and IT practices of the city while completing the project.

Step-4: Measure all city processes.

Step-5: Review the experience and start working on other projects to make a normal city a smart city.

By following a step-by-step approach, officials can transform ordinary cities into smart cities for a better life.

What is the process of smart city selection?

The task of transforming cities into smart cities is a huge task and involves many challenges. Thus, a procedure was set up by the government to simplify the process. To streamline the selection of smart cities in India.

The process for shortlisting smart cities is as follows :

Step 1: As a first step, a letter was sent to the states to nominate cities for Smart City nomination along with a questionnaire containing a detailed list of questions to be answered by the state.

Step 2: The list of questions can be seen by clicking on scoring parameters.

Step 3: The Smart City list is shortlisted based on the scoring received by each city based on the feedback received from the States and Union Territories.

Step 4: Once the selection is made, the potential smart cities are announced. Now each smart city has been assigned a consultant and an external agency that can help guide them on the multiple parameters set for the smart city competition.

The detailed parameters and phases of smart cities can be understood by visiting the website of the Ministry of Housing and Urban Affairs @ mohua.gov.in.

The Smart Cities Mission in India is a significant and ambitious initiative launched by the government to transform urban areas into more efficient, sustainable, and citizen-friendly spaces. As of my last knowledge update in September 2021, here are some key conclusions and insights regarding the Smart Cities Mission :

1. **Progress and Challenges :**
   - The Smart Cities Mission has made significant progress in terms of infrastructure development, technology integration, and improving the quality of life in selected cities.
   - However, challenges such as funding constraints, project delays, and the need for better citizen engagement and participation have been encountered.
2. **Urban Development :**
   - The mission has led to the development of modern infrastructure, including improved transportation systems, waste management, and efficient public services.
   - It aims to create more livable cities by addressing issues like traffic congestion, pollution, and inadequate housing.
3. **Technology Integration :**
   - The integration of technology, including IoT (Internet of Things), data analytics, and smart governance solutions, has been a key focus of the Smart Cities Mission.
   - These technologies are being used to enhance the efficiency of services like traffic management, energy conservation, and public safety.
4. **Citizen-Centric Approach :**
   - A central aspect of the mission is its emphasis on citizen participation and engagement. Smart cities are meant to be responsive to the needs and preferences of their residents.
   - Digital platforms and mobile apps have been deployed to facilitate citizen feedback and involvement in decision-making.
5. **Sustainability and Environment :**
   - The mission recognizes the importance of sustainability and environmental conservation. Many smart cities are adopting eco-friendly practices such as renewable energy generation and green infrastructure development.
6. **Economic Growth :**
   - The Smart Cities Mission is expected to stimulate economic growth by attracting investment, fostering innovation, and creating job opportunities in urban areas.
7. **Expanding Reach :**
   - The government has periodically added new cities to the Smart Cities Mission, aiming to cover a larger geographical area and benefit more urban populations.

In conclusion, the Smart Cities Mission in India is a transformative endeavor with the goal of modernizing and improving the quality of life in urban areas across the country. While there have been challenges and complexities in implementation, the mission represents a positive step towards

addressing the urbanization challenges faced by India. Progress and outcomes will continue to evolve as the initiative matures and adapts to changing circumstances. For the most up-to-date information and outcomes, it is recommended to refer to more recent sources and reports on the Smart Cities Mission in India.

References :-

1. https://smartcities.gov.in/
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Smart_Cities_Mission
3. https://www.magicbricks.com/blog/smart-cities-mission/127407.html
4. https://www.india.gov.in/spotlight/smart-cities-mission-step-towards-smart-india
5. Raya, D. M. 2009 Urban water supply in India: status, reform options and possible lessons. Water Policy 11, 442-460.
6. Jawaid M. F. et al. 2018-a. Exploring the Sustainability of Building Regulations in Jaipur City : A Review, Journal of Urban Management, 7, 111-120.
7. Gupta, K. 2007 Urban flood resilience planning and management and lessonsforthe future. Urban Water Journal, 183-194.
8. Aulakh, S. S. 2014 Planning for Low Carbon cities in India. Environment and Urbanization Asia, 17-34.
9. World Economic Forum 2016 Report on Reforms to Accelerate the Development of India's Smart Cities, World Economic Forum, 2016,1-45.
10. Jawaid, M. F. & Khan, S. 2015 Evaluating the Need for Smart Citiesin India. International Journal of Advance Research in Science and Engineering. IJARSE, Vol. No.4, Special Issue (01), 991-996.
11. Lehmann, S. 2017. Implementing the Urban Nexus approach for improved resource-efficiency. City, Culture and Society, 13, 46-56. [8] Bagade, K. et al. 2018. Evaluating urban heat island in the critical local climate zones of an Indian. Landscape and urban planning, 92-104.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 63-66

विकलांग बच्चों की शिक्षा और नई शिक्षा नीति 2020

डॉ. अंजना बसेड़ा
विभागाध्यक्ष बी.एड. विभाग, स्वामी विवेकानंद कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, हल्द्वानी, उत्तराखंड।
गंगा सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षक, शिक्षा विभाग, उत्तराखंड।

शोध सारांश :-

शिक्षा एक आवश्यक मशीनरी है जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए बहुत उपयोगी है। यह समाज में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक ज्ञान का हस्तांतरण है। किसी भी राष्ट्र का विकास काफी हद तक शिक्षा की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। यह सुनिश्चित करने के लिए, हमारी सरकार नई शिक्षा नीति, 2020 नामक एक नीति लेकर आई है। पिछली शिक्षा नीतियों में विकलांग बच्चों की शिक्षा की अनदेखी की गई थी। यह लेख पिछली शिक्षा नीतियों की खामियों को बताता है और नई शिक्षा नीति, 2020 की कुछ सकारात्मकताओं पर प्रकाश डालता है।

कूट शब्द :- विकलांगता, NEP 2020, शिक्षा नीति, बाधा, दिव्यांगता, जनसंख्या, जनगणना आदि।

परिचय :-

विकलांगता एक ऐसी स्थिति है जो किसी व्यक्ति को दूसरों की तरह कुछ गतिविधियाँ करने से रोक देती है। यह सीमा शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, संवेदी, संज्ञानात्मक विकास में बाधा या कई कारकों के संयोजन के कारण उत्पन्न हो सकती है। विकलांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम, 2016 की धारा 2 'विकलांगता' शब्द को परिभाषित करती है। उक्त अधिनियम की अनुसूची अंधापन, कम दृष्टि, बौनापन, मानसिक बीमारी, सेरेब्रल पाल्सी, हीमोफिलिया, सिकल सेल रोग, एसिड अटैक पीड़ित, पार्किंसंस रोग और कई अन्य विकलांगता स्थितियों को पहचानती है। विकलांग व्यक्तियों (पीडब्ल्यूडी) को विकलांग व्यक्तियों के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए निरंतर और विशेष देखभाल और ध्यान की आवश्यकता होती है।

शोध उद्देश्य :-

- दिव्यांग बच्चों के संदर्भ में NEP 2020 का अध्ययन।
- दिव्यांग बच्चों हेतु किए प्रावधान का अध्ययन।
- दिव्यांग बच्चों की स्थिति का अध्ययन करना।
- दिव्यांग बच्चों की स्थिति में सुधार हेतु सुझाव देना।

शोध विधि :–

यह अध्ययन सैद्धांतिक एवं गुणात्मक आधारित प्रकृति का है, शोधकर्ता उद्देश्यों का विश्लेषण प्राथमिक के साथ–साथ विभिन्न माध्यमिक स्रोतों पर भी निर्भर करता है। यहां द्वितीयक स्रोत पुस्तकें, जर्नल और लेख हैं और प्राथमिक स्रोत एनईपी रिपोर्ट और किताबें हैं।

स्कूल में विकलांग बच्चों द्वारा सामना की जाने वाली समस्याएँ :–

एक उदाहरण लेते हैं, मान लीजिए कि एक लड़का सेरेब्रल पाल्सी से पीड़ित है। वह पढ़ाई में बहुत धीमा है। काफी मेहनत करने के बाद भी वह अच्छे अंक हासिल नहीं कर पाता है। उसके शिक्षक अक्सर उसे डांटते और दंडित करते थे। उसके माता–पिता उसकी दुर्दशा को नहीं समझते। वह अपना अधिकांश समय कक्षा के बाहर बिताता है। उसका कोई दोस्त नहीं है क्योंकि उसकी आवाज कांपती है, या क्योंकि उसकी गति अलग है। ऐसे में लड़के के पास अकेले रहने और अपनी समस्याओं से खुद निपटने के अलावा कोई विकल्प नहीं है, जिसके लिए वह सक्षम नहीं है। ये सिर्फ एक मामला नहीं है, 2011 की जनगणना के अनुसार, 7.86 मिलियन बच्चे विकलांग हैं। यूनेस्को के अनुसार, "भारत में 75 प्रतिशत विकलांग बच्चे स्कूल नहीं जाते"।

पहले की शिक्षा नीति :–

हमारी पहले की कुछ शिक्षा नीतियों ने विकलांग बच्चों की शिक्षा की लगातार अनदेखी की। उदाहरण के लिए, नई शिक्षा नीति, 2019 का मसौदा शिक्षा से संबंधित लगभग 500 पृष्ठों में एक बच्चे के पूरे जीवनकाल के बारे में बताता है, फिर भी विकलांग बच्चों को स्वीकार करने में विफल रहा। शिक्षा के अधिकार से संबंधित कानूनों में सामंजस्य का अभाव था। उदाहरण के लिए, आरपीडी अधिनियम समावेशी शिक्षा की बात करता है, लेकिन बच्चों का निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 समावेशी शिक्षा को परिभाषित भी नहीं करता है।

समावेशी शिक्षा एक ऐसी प्रणाली है जहाँ विशेष आवश्यकता वाले बच्चे और सामान्य बच्चे एक ही स्कूल में पढ़ते हैं। इससे उन्हें बेहतर प्रदर्शन और सामाजिक संपर्क मिलता है जिससे उन्हें जीवन में आगे सफलता मिलती है। हालाँकि, यह प्रणाली विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए अलग स्कूलों के अस्तित्व को पूरी तरह से नकारती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई), 1986 ने समावेशी शिक्षा यानी समुदाय के भीतर विकलांग बच्चों के एकीकरण का समर्थन किया था। मेरी राय में, इस प्रणाली के साथ समस्या, जब हम इसे सख्त अर्थों में लागू करते हैं, यह है कि कोई टाइफाइड और तपेदिक दोनों को ठीक करने के लिए एक ही दवा नहीं लिख सकता है। दोनों बीमारियों के लक्षण या लक्षण अलग–अलग होते हैं, इसलिए अलग–अलग दवाओं की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार, विकलांग बच्चों को बिना विकलांग बच्चों की तुलना में अधिक देखभाल और ध्यान की आवश्यकता होती है। इसलिए, दोनों प्रकार के बच्चों को पढ़ाने की शिक्षाशास्त्र और रणनीति भी अलग–अलग होनी चाहिए।

समाधान :–

इस समस्या का समाधान यह है कि समावेशी शिक्षा मॉडल का पालन किया जाना चाहिए, लेकिन सख्त अर्थों में नहीं। सीधे शब्दों में कहें तो विकलांग बच्चों और सामान्य बच्चों को एक ही स्कूल में एक ही कक्षा में एक ही शिक्षक द्वारा शिक्षा दी जा सकती है। इसके अलावा, विकलांग बच्चों की विशेष जरूरतों को पूरा करने

के लिए विशेष रूप से उनके लिए कुछ कक्षाएं आयोजित की जानी चाहिए।

मुद्दा यह है कि यह समाधान तभी काम करता है जब हमने बच्चे की विकलांगता की पहचान कर ली हो। उन बच्चों के बारे में क्या जिनकी विकलांगताएँ छिपी हुई हैं? वे बिना किसी समाधान के समस्याओं का सामना करते रहेंगे। इसलिए, हमारी प्राथमिकताओं में से एक विकलांग बच्चों की स्क्रीनिंग और पहचान करना होना चाहिए।

बच्चों की स्क्रीनिंग उनके जीवनकाल के विभिन्न चक्रों में की जानी है। दिल्ली बाल अधिकार संरक्षण आयोग (डीसीपीसीआर) के एक अधिकारी अनुराग कांडू का सुझाव है कि, सबसे पहले, यह जन्म के समय किया जाना चाहिए। इसके बाद जब बच्चा 6 वर्ष का हो जाए तो स्क्रीनिंग का एक और दौर किया जाना चाहिए। तीसरा, जब वह किशोरावस्था में प्रवेश करता है, तो स्क्रीनिंग दोहराई जानी चाहिए। स्कूलों को अनिवार्य रूप से बच्चों की स्क्रीनिंग करनी चाहिए और विकलांगता प्रमाणपत्र जारी करना चाहिए।

नई शिक्षा नीति, 2020 :–

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 29 जुलाई, 2020 को राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 को मंजूरी दे दी। नई शिक्षा नीति देश में शिक्षा क्षेत्र में बड़े परिवर्तनकारी सुधार लेकर आई। उनमें से एक है "विशेष शिक्षक"। हमारी सरकार ने स्कूली शिक्षा के कुछ क्षेत्रों के लिए अतिरिक्त विशेष शिक्षकों को शामिल करने की तत्काल आवश्यकता महसूस की है। उदाहरण के लिए, विशिष्ट सीखने की अक्षमताओं वाले बच्चों की देखभाल करना।

ऐसे शिक्षकों से न केवल विषय–शिक्षण ज्ञान, बल्कि बच्चों की विशेष आवश्यकताओं को समझने के लिए प्रासंगिक कौशल भी रखने की अपेक्षा की जाती है। सरकार इसके लिए पर्याप्त प्रशिक्षण उपलब्ध कराएगी। योग्य विशेष शिक्षकों की पर्याप्त संख्या सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एनसीटीई) और भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) के पाठ्यक्रम के बीच बेहतर तालमेल बनाया जाएगा। विकलांग बच्चों को विषय पढ़ाने के लिए स्कूलों को उचित तकनीक और सहायक उपकरण उपलब्ध कराए जाएंगे। नेशनल स्कूल ऑफ ओपन स्कूलिंग (एनआईओएस) भारतीय सांकेतिक भाषा और भारतीय सांकेतिक भाषा का उपयोग करके अन्य विषयों को पढ़ाने के लिए पाठ्यक्रम तैयार करेगा।

हमारे सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री थावरचंद गहलोत ने कहा है– "आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम के अनुसार सभी विकलांग बच्चों के लिए बाधा–मुक्त पहुंच सक्षम की जाएगी।" ट्वीट्स की श्रृंखला में, उन्होंने एनईपी में विकलांग बच्चों और सामाजिक–आर्थिक वंचित पृष्ठभूमि वाले बच्चों से संबंधित कुछ बिंदु बताए। एक अन्य ट्वीट में उन्होंने कहा कि 'विशिष्ट विकलांगता वाले बच्चों को कैसे पढ़ाया जाए, इसका ज्ञान सभी शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों का एक अभिन्न अंग होगा।' नेशनल सेंटर फॉर प्रमोशन ऑफ एम्प्लॉयमेंट फॉर डिसेबल्ड पीपल (एनसीपीईडीपी) के कार्यकारी निदेशक अरमान अली ने इस नीति का समर्थन किया।

निष्कर्ष :–

नई शिक्षा नीति, 2020 पिछली शिक्षा नीतियों से एक बड़ा अद्यतन है। यह न केवल स्वीकार करता है बल्कि विकलांग बच्चों की शिक्षा पर भी जोर देता है। इसने विशेष रूप से विकलांग बच्चों के लिए 'विशेष शिक्षक' की अवधारणा पेश की है। एनईपी 2020 काले और सफेद रंग में बहुत आदर्श प्रतीत होता है। हमें इसकी व्यावहारिक प्रयोज्यता देखने के लिए इंतजार करना होगा। एनईपी का लक्ष्य 2035 तक उच्च शिक्षा में सकल

नामांकन अनुपात को 26.3 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत करना है। सरकार ने शिक्षा क्षेत्र में सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत (पहले 3–4 प्रतिशत) खर्च करने का वादा किया है। हमें एक बेहतर भविष्य की आशा करनी चाहिए जो विशेष छात्रों की विशेष आवश्यकताओं के लिए अधिक अनुकूल हो।

संदर्भ :–

1. Editor, Disabled population in India as per census 2011 (2016 updated), Enabled.in (Aug 5th, 2020, 8:30 PM)
2. Kadambari Agarwal, Why 75% of India's disabled kids never attend a school in their lifetime, The Print (Aug 5, 2020, 9:00 PM) https://www.google.com/amp/s/theprint.in/opinion/un&report&75&india&disabled&kids&never&attend&school&in&lifetime/423440/%3famp
3. Editor, Inclusive Education, Unicef.org (Aug 8th 2020, 11:30 PM) https://www.unicef.org/education/inclusive&education
4. https://twitter.com/TCGEHLOT/status/1288499910073970690
5. https://twitter.com/TCGEHLOT/status/1288499628506193923

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 67-70

विश्वपटल पर सोशल मीडिया में हमारी हिन्दी का बढ़ता प्रचार

प्रीति चौहान
शोधार्थी, गृह विज्ञान, मालवांचल विश्वविद्यालय इंदौर (मध्य प्रदेश)

हिंदी भारत की आधिकारिक भाषा है। हिंदी पढ़ने, लिखने और बोलने वाले 70 प्रतिशत भारतीय हिंदी नहीं जानते। हर कोई सोचता है कि हिंदी राष्ट्रीय भाषा है। 70 साल से ज्यादा समय से आजाद हो चुके इस देश के पास आज भी आजादी के नाम पर कोई राष्ट्रभाषा नहीं है। हमने सदैव राजभाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग किया है। हिंदी समाचार पत्र, हिंदी पत्रिकाएं, हिंदी समाचार चैनल और हिंदी भाषा के सभी चैनल हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जनसंचार माध्यम के रूप में हिंदी का प्रयोग कोई नई बात नहीं है, लेकिन आजादी के बाद राजभाषा और प्रयोजनमूलक हिंदी के रूप में हिंदी का प्रयोग बढ़ रहा है। सदियों से, सरकारों और व्यवसायों ने जनता को उपयोगी जानकारी और समाचार प्रदान करने के लिए इस भाषा का उपयोग किया है। आधुनिक जनसंचार के मुख्य माध्यम रेडियो, टेलीविजन, फिल्में, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ और इंटरनेट हैं। संचार के सभी माध्यमों में हिंदी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हिंदी अखबार हों, रेडियो हों, दूरदर्शन हों, हिंदी फिल्में हों, विज्ञापन हों या ओटीटी– हर जगह हिंदी है। वर्तमान में, इसके वक्ता हिंदी भाषा को वैश्विक संदर्भ प्रदान करने में मदद कर रहे हैं। हिंदी फिल्मों, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, विभिन्न हिंदी चैनलों, विज्ञापन एजेंसियों, विश्व स्तरीय हिंदी साहित्य और साहित्यकारों आदि का विशेष योगदान है। इसके अलावा हिंदी को विश्व भाषा बनाने में इंटरनेट की भूमिका भी बहुत महत्वपूर्ण है।

मीडिया में भी हिन्दी का वैश्विक स्वरूप देखा जा सकता है। हिंदी के वैश्विक स्वरूप को आकार देने में मीडिया का बहुत बड़ा योगदान रहा है। भाषा संस्कृति की वाहक है और मीडिया द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों के माध्यम से हिंदी के नाम पर समाज की बदलती सच्चाई उजागर होती है। आज हिन्दी राष्ट्रभाषा है। हाँ भाषा. आज अधिकतर लोग हिन्दी बोलते हैं। आज हिंदी एक ऐसी भाषा है जो दुनिया भर में व्यापक रूप से बोली और समझी जाती है। आज इस बात को हर कोई स्वीकार करता है कि हिंदी वास्तव में देश की संपर्क भाषा बन गयी है।

विदेशी सरकारें भी अब भारत के लिए हिंदी की प्रासंगिकता की आवश्यकता महसूस कर रही हैं। इसलिए, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन और यूरोप जैसे प्रमुख देशों ने हिंदी सीखने की व्यवस्था करना शुरू कर दिया है। केंद्रीय हिंदी संस्थान, विभिन्न विश्वविद्यालयों और अन्य शैक्षणिक संस्थानों में विदेशों से बड़ी संख्या में

छात्र हिंदी सीखने आते हैं। इसके अलावा विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिंदी में बीए–एमए करने वाले छात्रों की संख्या भी बढ़ रही है।

किसी भी देश की पहचान उस देश में बोली जाने वाली भाषा से होती है। हिंदी, भारत की आधिकारिक भाषा की तरह, देश में सबसे अधिक बोली जाने वाली और समझने योग्य भाषा के रूप में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

भारत के हर राज्य में हिंदी बोली जाती है। भावनाओं को व्यक्त करने के अलावा, भाषा हमेशा लोगों तक महत्वपूर्ण जानकारी और ज्ञान पहुंचाने का एक सशक्त माध्यम रही है। भाषा के माध्यम से ही हमारा साहित्य न केवल लोकतंत्र को कायम रखता है, बल्कि जनता को भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के माध्यम से लोकतंत्र में भागीदारी के महत्व को पहचानते हुए समाज के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में सक्रिय भूमिका निभाता है। इसलिए, आज के इलेक्ट्रॉनिक युग में, सोशल मीडिया (फेसबुक, ट्विटर, ब्लॉग, इंस्टाग्राम, टेलीग्राम, व्हाट्सएप) के माध्यम से वैश्विक भाषाओं को पीछे छोड़ते हुए, भाषाओं को जनसंचार के रूप में जोड़ने का काम इंटरनेट के माध्यम से तेजी से किया जा रहा है। सोशल मीडिया पर हिंदी ने अपना परचम लहराया है और आज साहित्यकार और वरिष्ठ नागरिक ही नहीं युवा भी अपनी मातृभाषा में अपने विचार व्यक्त करने से नहीं कतराते। वर्तमान में इंटरनेट (अंतरजाल) भी हिंदी भाषा के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। आज इंटरनेट पर 15 से अधिक हिंदी सर्च इंजन मौजूद हैं। मालूम हो कि ज्यादातर लोग इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं। यहां तक लगभग सभी सरकारी अर्ध–सरकारी एजेंसियों में 'राजभाषा अधिकारी' और 'राजभाषा सहायक' होते हैं जो अपने अधीन विभिन्न शाखाओं के कर्मचारियों को सरकारी और सरकारी कामकाज हिंदी में करने में सक्षम बनाते हैं। ईमेल पत्राचार।

गौरतलब है कि हिंदी को हर कार्यालय में व्यापक रूप से फैलाने के लिए हिंदी में सबसे ज्यादा काम करने वालों को पुरस्कृत करने की योजनाएं भी बनाई गई हैं. किसी कर्मचारी के कार्य प्रदर्शन में ईमेल के माध्यम से संचार भी शामिल है। गौरतलब है कि वर्तमान में 'पेपरलेस ऑफिस' को जोर–शोर से बढ़ावा दिया जा रहा है। प्रोत्साहन योजना का लाभ उठाने के लिए अधिकांश कर्मचारी ऑनलाइन हिंदी में काम करना सीख रहे हैं। इस संबंध में यह ज्ञात है कि सरकार सभी संस्थानों में कागज के उपयोग को कम करने के लिए 'पेड़ बचाओ' अभियान के तहत पिछले कुछ वर्षों से मीडिया के माध्यम से एक बड़ा अभियान चला रही है। इस संबंध में यह ज्ञात है कि सरकार सभी संस्थानों में कागज के उपयोग को कम करने के लिए 'पेड़ बचाओ' अभियान के तहत पिछले कुछ वर्षों से मीडिया के माध्यम से एक बड़ा अभियान चला रही है।

जब लोग मीडिया के माध्यम से हिंदी भाषा को बढ़ावा देने की बात करते हैं तो लोगों को 'समाचार पत्र' का भी ख्याल आता है। बेशक, अख़बार पढ़ना और मधुर धूप के नीचे चाय की चुस्कियाँ लेना वर्षों से हम सभी का पसंदीदा शगल रहा है और आश्चर्य की बात यह है कि आज के कंप्यूटर युग में भी, अंग्रेजी की तुलना में हिंदी में कहीं अधिक समाचार पत्र हैं।

एक समय था जब वेबसाइटें और ब्लॉग केवल अंग्रेजी में ही उपलब्ध थे, लेकिन हिंदी में क्रांति शुरू हो गई है और हम देख सकते हैं कि हिंदी वेबसाइटों का उपयोग करने वाले लोगों की संख्या दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है और लोग ब्लॉग भी पढ़ रहे हैं। वे हिंदी में पढ़ना–लिखना भी पसंद करते हैं क्योंकि हिंदी लोगों के

दिलों के करीब है।

सोशल मीडिया ने जो सबसे महत्वपूर्ण काम किया है, वह यह है कि इसने लेखकों के बीच की दूरी को कम करना शुरू कर दिया है। लेखक एक दूसरे को जानने और समझने लगे हैं। इसी समय, कलमकर ने कुछ लोगों के साथ कुछ कार्यशालाएँ भी आयोजित कीं और कुछ छोटे कार्यक्रम भी आयोजित किये, जिन्हें उन्होंने अखिल भारतीय साहित्यिक कार्यक्रम भी कहा। ऐसा कहा जाता है कि अगर कोई उससे पूछता कि क्या उसके पास समय है तो वह व्यक्ति कहता कि उसके पास समय नहीं है और वह समय ढूंढ लेगा। लेकिन आज अगर आप जमीन पर नजर डालें तो आपको दिन में अच्छी बस्तियों में लोग घूमते दिख जाएंगे। हो सकता है कि वे अपने घर, स्थान या खुले स्थान पर बैठकर बातचीत कर रहे हों या इधर–उधर घूम रहे हों। कुछ लोग मौज–मस्ती और जुआ भी खेल रहे होंगे। मिलेंगे। बहरहाल, व्हाट्सएप और फेसबुक पर हिंदी का व्यापक प्रचार–प्रसार है। आपके लेख पूरे भारत से लोग पढ़ रहे हैं। भारत में आपकी पहचान बन रही है। सोशल मीडिया नागरिकों की झिझक को खत्म करता है। हालाँकि देश की 70 प्रतिशत आबादी हिंदी बोलती है। लेकिन जब लिखने की बात आती है तो 70 प्रतिशत लोगों में से केवल 50 से 55 प्रतिशत लोग ही कुछ लिख पाते हैं। जब चिट्ठियों का जमाना खत्म हुआ तो व्हाट्सएप, फेसबुक पर चिट्ठियाँ लिखी जाने लगीं.. लोग अपने संदेश देने लगे। हिंदी बोलने वालों की संख्या दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है और भारत में होने वाले चुनावों में सोशल मीडिया ने भी काफी अहम भूमिका निभाई है। लोगों को चुनाव के बारे में बताएं। चुनाव क्यों मायने रखते हैं और आपको वोट क्यों देना चाहिए? इस बारे में लंबी चर्चाएं और बातचीत हुई, उन चीजों के बारे में जो उन्हें व्हाट्सएप या फेसबुक पर नहीं करनी चाहिए। सोशल मीडिया लोगों को जोड़ता है, 'अखबार ने बताया कि यह चुनाव के लिए नहीं था, जिसमें चुनाव से संबंधित कई फर्जी खबरें और आचार संहिता का उल्लंघन भी पाया गया। हम उनके खिलाफ कार्रवाई करेंगे और बिल्कुल करना चाहिए।' सोशल मीडिया के काले पक्ष को उजागर किया जाना चाहिए और सोशल मीडिया से हानिकारक तत्वों को खत्म करना भी जरूरी है।

टेलीविजन को सबसे मुखर, प्रभावशाली और आकर्षक मीडिया माध्यम माना जाता है। टीवी ऑडियो और चित्र दोनों प्रदर्शित करते हैं, जिससे वे अधिक दिलचस्प बन जाते हैं। भारतीय टेलीविजन अपने जन्म के बाद लगभग 30 वर्षों तक धीरे–धीरे आगे बढ़ा, लेकिन 1980 और 1990 में दूरदर्शन ने टेलीविजन पर राष्ट्रीय कार्यक्रम और समाचार प्रसारित करके हिंदी को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। 1990 के दशक में निजी उपग्रह मनोरंजन और समाचार चैनलों के उद्भव के साथ यह प्रक्रिया तेज हो गई। रेडियो की तरह, टेलीविजन भी अपने मनोरंजन कार्यक्रमों में फिल्मों का भरपूर उपयोग करता है और फीचर फिल्मों, वृत्तचित्रों और फिल्मी गीतों को प्रसारित करके देश के सभी कोनों में हिंदी को बढ़ावा देता है। टेलीविजन सीरीज दर्शकों के बीच एक खास जगह रखती है। सामाजिक, पौराणिक, ऐतिहासिक, पारिवारिक और धार्मिक विषयों वाले हिंदी धारावाहिक घर–घर में देखे जाने लगे। रामायण, महाभारत हमलोग, भारत एक खोज आदि धारावाहिक न केवल हिंदी के प्रसार के माध्यम बने बल्कि राष्ट्रीय एकता का भी स्रोत बने। जल्द ही टीवी शो से जुड़े लोग फिल्मी सितारों जितने मशहूर हो गए। देशभर में टेलीविजन शो की लोकप्रियता के कारण देश में गैर–हिंदी भाषी लोग हिंदी समझने और बोलने लगे।

सोशल मीडिया पर अपलोड किए गए हिंदी वीडियो कई देशों के लोगों को आकर्षित करते हैं और

इसलिए, हमारे देश के गैर–हिंदी भाषी लोगों ने भी हिंदी समझने, बोलने और लिखने की आवश्यकता को अपनाया है।

आज सोशल मीडिया पर हर चीज का अस्तित्व नए चलन से जुड़ा हुआ है और हर संस्था, व्यक्ति, सरकार, कंपनी, लेखक, साहित्यिक कार्यकर्ता, सामाजिक संगठन, नेता, अभिनेता की लोकप्रियता सोशल मीडिया पर उसके ध्यान देने वाले लेखकों और प्रभावित करने वालों पर निर्भर करती है। ऐसे में हिंदी की जिम्मेदारी बहुत बढ़ जाती है, क्योंकि हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है, जहां भावनाओं को सही मायने में व्यक्त किया जा सकता है। आज मीडिया में चर्चा में रहने वाले लगभग हर मुद्दे पर सामाजिक बहस होती है और देश के प्रधानमंत्री भी किसी भी अच्छी खबर पर जनता को बधाई देने के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल करते हैं। सोशल मीडिया ने प्रिंट मीडिया की तुलना में तेज और अधिक शक्तिशाली पहुंच वाले माध्यम के रूप में अपनी छवि बनाई है। सोशल मीडिया की बढ़ती प्रगतिशील दिशा में हैशटैग ने भी अपनी गरिमा बरकरार रखी है, हम हिंदी में जो भी संदेश देना चाहते हैं, हैशटैग पर क्लिक करके यानी उस हैशटैग के जरिए हम उस विषय से संबंधित अन्य पोस्ट तक पहुंच सकते हैं। संदेश, इसलिए हैशटैग स्वयं एक लिंक है जिसके माध्यम से सभी समान पोस्ट एक पेज पर एक साथ देखे जा सकते हैं। हिंदी लेखन जगत में एक और दुखद पहलू देखने को मिलता है जहां लोग दूसरों की अच्छी लिखी रचनाएं अपने नाम से पोस्ट करने लगते हैं और कुछ लोग तो इन पोस्ट के जरिए कुछ श्रेय भी हासिल कर लेते हैं। ये बेहद दुखद पहलू है। जो लोग ऐसा नहीं करते, उनका काम चोरी हो जाने के डर से अपना काम लिखना भी गलत है और आपको विरोध करना चाहिए और उस व्यक्ति को समाज के सामने लाना चाहिए जिसने आपका काम चुराया है। उसे साहित्य जगत में भ्रमण करने दीजिए।

इस प्रकार ही आप एक स्वस्थ साहित्यकार परिवार माने जा सकते हैं। किसी भी स्थिति से बचना या भागना कायरता ही कहलाएगी।जो लोग अच्छा कार्य कर रहे हैं और हिंदी के विकास में बहुमूल्य योगदान दे रहे हैं, उनके साथ जुड़ना अपना नैतिक दायित्व समझकर यदि हर कोई ऐसा करने लगे तो हिंदी का विकास तेज गति से होने लगेगा। जिस दिन 100 प्रतिशत भारतीय हिंदी में काम करना शुरू कर देंगे वह दिन होगा पूरी दुनिया हिंदी के महत्व को समझेगी और दुनिया भर के लोगों का एक वर्ग हिंदी को अपनाएगा। आज की पीढ़ी के लिए शिक्षा से जुड़ी पाठ्य सामग्री भी इंटरनेट पर आसानी से उपलब्ध है। इन विषयों को गूगल पर पढ़ा जा सकता है और यूट्यूब पर छोटे–छोटे वीडियो के माध्यम से बहुत अच्छी हिंदी में समझाया जा सकता है। सरकार और व्यक्तिगत प्रयासों के लिए धन्यवाद, आज मुझे यह कहते हुए बहुत खुशी हो रही है कि आज हमें हिंदी भाषी कहलाने में कोई हीनता महसूस नहीं होती है क्योंकि अब मीडिया ने भारत की हिंदी भाषा को दुनिया भर में फैलाया है और हम सभी भारतीयों को दिया गौरव और सम्मान।

संदर्भ :–

1. सुधीर सिंह सुधाकर, हिंदी के प्रचार–प्रसार और विस्तार में सोशल मीडिया की भूमिका, मातृभाषा.कॉम वैचारिक महाकुंभ, May 30, 2019.
2. अंजली खेर, हिंदी के प्रचार–प्रसार में मीडिया की भूमिका, मातृभाषा.कॉम वैचारिक महाकुंभ, मई 31, 2019.
3. डॉ. अंकिता नामदेव, सोशल मीडिया में हिन्दी भाषा का बढ़ता प्रयोग, छत्तीसगढ़ मित्र, November 1, 2021

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 71-77

सतत विकास और प्रकृति

डॉ. मूर्ति मलिक
एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी विभागाध्यक्ष), बी पी एस एम वी, खानपुर कलां, सोनीपत।

सतत विकास और वैश्विक चुनौतियां विषय पर विचार विमर्श करने से पूर्व इनका सही और सटीक अर्थ जानना और समझना नितांत आवश्यक है। सतत अर्थात लगातार यानी बिना अवरोध के सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ आगे बढ़ाना। विकास, तरक्की उन्नति, आगे बढ़ाना। ये शब्द परस्पर पर्यायवाची है। व्यापक अर्थ में सतत विकास तथा वैश्विक चुनौतियों से अभिप्राय है। वैश्विक स्तर पर जन सामान्य का सामाजिक कल्याण तथा आपसी संबंधों में समानता का भाव होना। इसके साथ ही प्रकृति अर्थात पर्यावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करना।

भारतीय और विश्व इतिहास पर दृष्टिपात करें, तो ज्ञात होगा कि सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण की शब्दावली का प्रयोग व्यवहारिक जीवन में नहीं होता था। प्राचीन समय में सामान्य जन अशिक्षित अवश्य था, किंतु विकास के नाम पर प्रकृति के साथ खिलवाड़ करना उसकी प्रवृत्ति में शामिल नहीं था। वह प्रकृति व इसके संरक्षण के महत्व को बखूबी समझता था तथा उसे अपने आचरण में अपनाता था। इस कार्य हेतु उसे किसी प्रकार के शिक्षण–प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं थी, किंतु समय परिवर्तन के साथ वह इनके महत्व को जानते–समझते हुए भी जाने–अनजाने में प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप से इनकी अनदेखी–अनसुनी करने लगा। जिसके कारण इस प्रकार के आयोजनों की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी।

प्राच्य जीवन शैली आधुनिक जीवन शैली से कहीं अधिक तर्क सम्मत तथा वैज्ञानिक थी। व्यक्ति सीमित संसाधनों से ही व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेता था। अपने आस–पड़ोस के लोगों से उसका आत्मीयता और अपनेपन का रिश्ता होता था। परस्पर वस्तुओं का आदान–प्रदान उनकी स्वाभाविक जीवन शैली का अभिन्न अंग था। वर्तमान में मनुष्य ने तकनीक भले ही विकसित कर ली है, किंतु मनुष्य का एक दूसरे को सोचने–समझने का दायरा निरंतर सीमित होता जा रहा है। आपाधापी और चकाचौंध की अंधी दौड़ में वह अपने सहज नैसर्गिक गुणों से दूर होकर आत्म–सीमित व आत्म–केंद्रित होता जा रहा है। वर्तमान में व्यक्ति अपने निजी स्वार्थों व व्यक्तिगत आवश्यकताओं को प्राथमिकता देने लगा है। पारिवारिक व सामाजिक नैतिक मूल्यों को निरंतर भूलता जा रहा है। साथ ही पर्यावरण के प्रति अपने दायित्वों को भी अनदेखा व अनसुना कर रहा है। मानव की स्वार्थी प्रवृत्ति ने ही इस ज्वलंत विषय पर चर्चा करने के लिए विवश किया है।

सतत विकास और वैश्विक चुनौतियां विषय 90 के दशक की देन है। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में

पर्यावरण संरक्षण और वैश्विक चुनौती एक लोकप्रिय शब्द बनकर प्रचलन में आया है और सब का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। वर्तमान में सतत विकास समाज वैज्ञानिकों, बुद्धिजीवियों, सामाजिक संगठनों, नेताओं और राजनेताओं के बीच चर्चा का मुख्य केंद्र बनता जा रहा है। जो इस बात का सूचक है कि पर्यावरण संरक्षण के प्रति सचेत होना कितना आवश्यक है। आज सबको मिलकर मानव के मूल अधिकारों को सुरक्षित व संरक्षित रखते हुए इस दिशा में काम करने की बहुत आवश्यकता है।

सतत् विकास तथा पर्यावरण संरक्षण पर चिंतन मनन करके उसे आचरण में लाना, प्राकृतिक संसाधनों को भावी पीढ़ी के लिए संरक्षित एवं संवर्धित करना विषय इसलिए भी महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय है क्योंकि सतत विकास एक ऐसी जीवन शैली है,जो न केवल हमें प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की सीख देती है, वरन उनको अनावश्यक रूप से नष्ट करने की मानसिकता पर भी रोक लगाती है। इसका मूल लक्ष्य यह है कि सतत विकास का लाभ सीमित लोगों तक न रहकर सबको समान स्तर पर समाज के हर वर्ग तथा व्यक्ति तक पहुंचाया जा सके।

व्यावहारिकता की दृष्टि से सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण में मुख्यतः इन बिंदुओं पर ध्यान केंद्रित किए जाने की आवश्यकता है :–

1. सीमित संसाधनों के साथ विकास नीति।
2. प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी पर नियंत्रण।
3. सतत विकास के साथ–साथ संसाधन संरक्षण पर बल।
4. नीति निर्माण करते समय पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता देना।
5. स्वास्थ्य पर आधारित व्यवस्था कायम करना।
6. सामाजिक समानता पर आधारित व्यवस्था को बनाए रखना।
7. पर्यावरण संरक्षण।

मानव शरीर पंचमहाभूत :–

जल, वायु, अग्नि, आकाश तथा पृथ्वी से निर्मित है। मानव का जन्म, पालन–पोषण सब कुछ इन्हीं पांच तत्वों पर आधारित है। अपने लालची स्वभाव के कारण मनुष्य सबसे पहले इन्हीं पर आघात करता है। मानव मिट्टी में ही पैदा होता है और अंततः मिट्टी में ही मिल जाता है कबीर के शब्दों में –

'माटी कहै कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोहि।
एक दिन ऐसा होएगा, मैं रोदूंगी तोहि।।'[1] (कबीर)

आध्यात्मिक अर्थ में मानव सृष्टि में प्रमुख योगदान देने वाला तत्व मिट्टी, जो सृष्टि अर्थात समस्त जड़ चेतन के सृजन का आधार है। मानव को चेताते हुए इसके संरक्षण का संदेश संप्रेषित करता है।

मानव शरीर का आधारभूत तत्व जल है। जल के अभाव में मानव जीवन कठिन ही नहीं असंभव है। भोजन तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति न होने पर तो मनुष्य कुछ दिन तक जीवित रह सकता है, किंतु जल के अभाव में वह दो या तीन दिन से अधिक जीवित नहीं रह सकता। हाइड्रोफोबिया से जूझ रहा मरीज इस पीड़ा को भली–भांति समझ सकता है। जल की महता को मध्यकालीन कवि रहीम के निम्न दोहे से समझा जा सकता है :–

'रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी गए न ऊबरे, मोती मानस चून।।'[2] (रहीम)

दूरदर्शी कवि रहीम ने तत्कालीन समाज की स्थितियों को भांपकर मनुष्य को स्वयं अपने मान–सम्मान की रक्षा करने हेतु उक्त दोहा कहा होगा, लेकिन वर्तमान संदर्भ में यह मनुष्य को पर्यावरण संरक्षण विशेष रूप से जल संरक्षण के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित करता है। इन्होंने अपनी सूक्ष्म अंतर्दृष्टि से इस भयावह समस्या को ठीक उसी प्रकार बहुत पहले ही भांप लिया था। 'जैसे महर्षि व्यास ने अश्वमेध यज्ञ की संपन्नता के समय युधिष्ठिर को चेतावनी दी थी कि निकट भविष्य में पूरा विश्व महासंग्राम में पढ़ने वाला है'[3] (दिनकर) ये जानते थे कि यदि पीने योग्य पानी नहीं होगा तो मानव का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा। दूषित पानी के सेवन से मनुष्य अनेक रोगों से ग्रस्त होगा। हम सब इस तथ्य से भली–भांति अवगत हैं कि धरती पर मानव जीवन की अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जल का संरक्षण और संवर्धन जरूरी है। जल के अभाव में मानव जीवन की अस्मिता को सुरक्षित रख पाना असंभव है। ब्रह्मांड में धरती ही एक मात्र ऐसा ग्रह है। जहां पानी और जीवन एक साथ विद्यमान है। पृथ्वी का 70 प्रतिशत हिस्सा जल अर्थात महासागरों से घिरा है, लेकिन पीने का पानी बहुत कम मात्रा में उपलब्ध है अर्थात मनुष्य के पास प्रकृति प्रदत्त पीने योग्य जल की उतनी कमी नहीं है, किंतु मनुष्य ने विकास के नाम पर निजी स्वार्थ की पूर्ति हेतु पानी की इस अमूल्य धरोहर को उस रूप में सुरक्षित नहीं रखा, जितना रखा जाना चाहिए था।

इस प्रकार भारतीय साहित्य के इतिहास में पर्यावरण संरक्षण विशेष रूप से जल संरक्षण के अनेक प्रसंग भरे पड़े हैं। वैदिक साहित्य में पानी को प्राण तत्व की संज्ञा दी गई है। पुराणों में (अग्नि पुराण और गरुड़ पुराण) कुएं के जल की अपेक्षा झरने, सरोवर[4] (तुलसीदास)

तथा नदी जल को पवित्र माना गया है।[5] (गोपाल सिंह नेपाली) इन सबसे बढ़कर तीर्थ जल को अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया गया है। स्मृति ग्रथों में भी जल की महिमा का गुणगान मुक्त कंठ से किया गया है। प्राचीन सभ्यताओं के विकास क्रम का अध्ययन करने के बाद ज्ञात होता है कि विश्व की सभी प्राचीन सभ्यताएं नदियों के किनारे विकसित हुई हैं। जैसे सिंधु, सरस्वती आदि। इतना ही नहीं सृष्टि के आदि और अंत की कथाएं भी इससे जुड़ी हैं। मनु और श्रद्धा के माध्यम से सृष्टि के पुनर्निर्माण की कहानी कही गई है। प्रसाद कृत महाकाव्य कामायनी में जल प्रलय।

मानवीय इतिहास में एक ऐसी ही प्राचीन घटना है।[6] (जयशंकर प्रसाद) मानव सभ्यता और साहित्यिक क्षेत्र में नदियों का योगदान प्राचीन काल से ही रहा है। भगवान श्री राम का जन्म सरयू नदी किनारे अयोध्या में हुआ। इसी प्रकार कृष्ण की समस्त लीलाओं का केंद्र यमुना नदी रहा है। गंगा भारत की पावन और दिव्य नदियों में से एक है। गंगा में स्नान करने से अनेक त्वचा रोगों का इलाज स्वतः हो जाता है। खनिज लवणों से संपन्न गंगा का स्वच्छ व पवित्र निर्मल पानी पेट की अनेक बीमारियों का इलाज करता है। इन नदियों का ऐतिहासिक और धार्मिक एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से भी महत्व रहा है। इन नदियों के किनारे अनेक गांव, शहर, नगर, महानगर बसे हैं। जिनके कारण नदियां औद्योगिक दृष्टि से भी महत्व रखती हैं। जीवन को सुरक्षित व संरक्षित रखने वाली इन नदियों ने सैकड़ो हजारों वर्षों तक हमें सहेजे रखा, किंतु आज उनके अस्तित्व पर संकट बना हुआ है। दिल्ली में यमुना एक गंदे नाले के रूप में परिवर्तित हो चुकी है। पूजनीया गंगा का जल इतना दूषित हो चुका

है कि लोग इसमें स्नान करने से भी कतराने लगे हैं। भारत एक ऐसा देश है जहां नदियों को भी देवी मां के समान मान–सम्मान दिया जाता है और उनको दैवीय तथा अलौकिक गुणों से संपन्न करके उनके प्रति श्रद्धा प्रकट की जाती है।' नमामि गंगे 'अर्थात राष्ट्रीय नदी गंगा स्वच्छता मिशन (2014) के द्वारा गंगा को स्वच्छ करना व इसकी पवित्रता ध्पावनता को सुरक्षित रखना इसी तरह का प्रयास है। इस प्रकार जल जीवन है और जीवन की अभिव्यक्ति है साहित्य। इसलिए साहित्य में वर्णित जल संरक्षण के विभिन्न पहलुओं पर विचार विमर्श करना अनिवार्य है। जल संरक्षण प्रकृति संरक्षण को लेकर देश में अनेक आंदोलन हुए हैं। जैसे नमामि गंगे, नर्मदा बचाओ। इसमें रोचक तथ्य यह है कि इस प्रकार के आंदोलन की शुरुआत हाशिए पर खड़ी जनजातियों के द्वारा की गई है। इन्होंने अनुभूत किया है कि प्रकृति संरक्षण उनकी अस्मिता का प्रश्न नहीं, वरन प्रकृति संरक्षण का संघर्ष भी है।

औद्योगिक विकास के नाम पर जल स्रोतों को दूषित करना मानव का स्वभाव सा बन गया है। सरकार द्वारा भले ही कठोर नियम उप नियम निर्धारित किए गए हैं, लेकिन अपनी स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण मनुष्य प्रत्यक्ष – अप्रत्यक्ष रूप में इन सबसे बच निकलने के मार्ग स्वयं ही ढूंढ लेता है और इन नैसर्गिक जल स्रोतों– कुएं, बावड़ी, सरोवर, झील आदि के साथ खिलवाड़ करता है।

भारतवर्ष में हर पर्व–त्योहार व अनुष्ठान में जल का महत्व है। शिशु के पैदा होने से लेकर उसके अंतिम संस्कार तक में जल का उपयोग जल की महता को स्वतः दर्शाता है। हमारे सभी धार्मिक अनुष्ठानों में जल को सांझी मानना, जल छिड़कना, संकल्प लेना, मांगलिक अवसरों पर जल स्रोतों/कुआं पूजना, मृत शरीर के मुंह में गंगा जल डालना, मृत्यु के उपरांत घड़ा फोड़ कर जल विसर्जन करना, तमाम व्रत विधान एक्स (निर्जला एकादशी, करवा चौथ) में अर्घ्य देना आदि सब जल के महत्व को इंगित करते हैं। ग्रामीण जीवन में जल उसका अभिन्न सहचर रहा है। उसकी आस्था, विश्वास, मिथक प्रथाएं, कविताएं और कथाएं साहित्य का अभिन्न अंग रही है।

सृष्टि में जीवो की उत्पत्ति, पालन–पोषण का संपूर्ण चक्र जल के इर्द–गिर्द घूमता प्रतीत होता है। वर्षा का जल किसान की खेती के लिए वरदान सिद्ध होता है वह अच्छी तरह जानता है कि यदि मेघों से वर्षा का जल प्राप्त नहीं हुआ, तो उसके लिए अपना जीवन यापन करना दुरूह हो जाएगा। नरेश मेहता रचित 'बोवाई का गीत' कविता में किसान खेतों में बीज बोने से पहले वह बादलों से प्रार्थना करता है कि बादल जल बरसाएं ताकि किसान के खेतों में बीज अंकुरित होकर फसल का रूप धारण करें। वर्षा के पानी के उपरांत ही वह बीज बोएगा, तदांतर फसल लहराएगी और फिर उसके जीवन में खुशहाली आएगी। किसान अपने तीज–त्योहार मना पाएगा। खेत में फसल उत्पन्न होने पर अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाएगा।

'बदरा पानी दे
मैं बोऊंगा बीर बहूटी/ इंद्रधनुष सतरंग।
' ' '

राखी के सूत
और सावन की पहली तीज
बदरा पानी दे।'[7] (नरेश मेहता)

इस प्रकार किसान आशा भरी दृष्टि से बादलों को पुकारता है क्योंकि उसकी आवश्यकता व खुशियां आदि सभी कुछ वर्षा जल पर आधारित है। सतत विकास प्रक्रिया के अंतर्गत पेड़ों को निरंतर काटा जा रहा है और (सीमेंट के पेड़) बड़ी–बड़ी गगनचुंबी इमारतें खड़ी की जा रही हैं, यदि सतत विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों पेड़ आदि का दोहन इसी प्रकार होता रहा, तो किसान का खेती हेतु बादलों से याचना करने का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा।क्योंकि पेड़ ही वर्षा का आधार होते हैं। जल किसान की खेती का प्राण तत्व है। वर्षा के अभाव में खेती/फसल न होने के कारण किसान का जीवन नारकीय बन जाता है। वर्षा अर्थात बादल कृषि के लिए वरदान होते हैं।

'घनभेरी गर्जन से
सजग सुप्त अंकुर और में पृथ्वी के आशाओं से/नवजीवन की ऊंचा कर सिर/
तक रहे हैं है विप्लव के बादल/
फिर फिर।'[8] (सूर्यकांत त्रिपाठी निराला)

पानी/जल के आकार – प्रकार, रूप, गंध की बात करें, तो यह एक रंगहीन, गंधहीन, स्वादहीन, पारदर्शी, गतिशील द्रव्य है, जो असंख्य तथा अलौकिक गुणों से संपन्न है। फिल्म अभिनेता मनोज कुमार निर्देशित फिल्म 'शोर' में इसका बहुत अच्छी तरह से वर्णन किया गया है।

'पानी रे पानी तेरा रंग कैसा।
जिसमें मिला दे लगे उसे जैसा।'[9] (मनोज कुमार)

इस गीत में पानी को अनेक रूपों में चित्रित किया गया है यहां पानी की तुलना सृष्टि के रचयिता ईश्वर से की गई है। अर्थात जिस प्रकार सृष्टि का रचनाकार ईश्वर है। उतना ही महत्व सृष्टि निर्माण में जल का है। विचारणीय विषय यह है कि फिर भी मनुष्य द्वारा जीवन के आधार तत्त्व का निरंतर क्षरण किया जा रहा है। कुल मिलाकर जल अर्थात पानी ही प्राकृतिक वैभव का मूल स्रोत रहा है। जीवन और प्रकृति का संपूर्ण सौंदर्य जल पर ही निर्भर है।

साहित्यकार युगचेता रचनाकार होता है। वह अपनी सूक्ष्म अन्तःदृष्टि से सृष्टि में व्याप्त उन छोटे–छोटे अणुओं/कणों को भी देख लेता है। जो सामान्य व्यक्ति को दिखाई देकर भी अनुभव अभिव्यक्ति का आधार नहीं बनती। उसका भाव क्षेत्र अपेक्षाकृत अधिक परिपक्व तथा सचेत होता है। वह पेड़ पौधों की रक्षा करना चाहता है। वह इन्हें नुकसान पहुंचाने वालों के प्रति आक्रोश से भर उठता है। पशु पक्षियों के प्रति उसके मन में आत्मीयता का भाव होता है। इसलिए वह उनकी पहचान में छिपी वेदना को पहचान लेते हैं :–

'उसने कहा/पक्षियों का कलरव/
पक्षियों का समूह गान सुनो/
मैंने कहा वह अपने घोसलों के लिए रो रहे।'[10] (लीलाधर जगूड़ी)

सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण को समझने के लिए विशंभरनाथ कौशिक की कहानी 'अशिक्षित का हृदय' मील का पत्थर है। वह प्रकृति प्रेम की एक नई परिभाषा गढ़ती है। माता–पिता का संतान के प्रति प्रेम, संतान का माता–पिता के प्रति प्रेम, भाई बहन का आपसी प्रेम, दाम्पत्य प्रेम, सख्य प्रेम आदि के असंख्य, अद्वितीय अप्रतिम उदाहरण साहित्य के इतिहास में अनेक प्रसंगो में मिलते है जैसे– श्रवण कुमार का अपने अंधे माता–पिता

के प्रति प्रेम, राजा जनक का पुत्र राम के प्रति, प्रेम कृष्ण और सुदामा का सख्य प्रेम, किंतु पेड़ों के प्रति निश्छल प्रेम प्रसंग कम ही देखने को मिलते हैं। सतत विकास प्रक्रिया में प्रायः देखने में आता है कि अनेक पेड़ विकास की भेंट चढ़ जाते हैं। किंतु अशिक्षित का हृदय कहानी में अभावग्रस्त जीवन जीने वाला मनोहर सिंह अपने पिता द्वारा रोपित पेड़ को जमीदार के पास मजबूरी में गिरवी अवश्य रख देता है, किंतु जमीदार द्वारा पेड़ काटने की बात सुनकर वह आक्रोश से भर उठता है। वह निश्चय कर लेता है कि जीते जी अपने नीम के पेड़ को काटने नहीं देगा। यह उसका पेड़ के प्रति भावात्मक लगाव है। नीम का पेड़ उसके पिता की निशानी है। उसका बचपन, उसकी यादें पेड़ के साथ जुड़ी है। इसलिए किसी भी स्थिति में वह पेड़ को काटने नहीं देता। कहानी का अन्य पात्र तेजा सिंह भी इस नेक कार्य में पर्यावरण संरक्षण में उसका साथ देता है।

'यह यह पेड़ मेरे पिता का द्वारा लगाया हुआ है''' वृक्ष की ओर मुंह करके बोला यदि संसार में किसी ने निस्वार्थ भाव से मेरा साथ दिया है तूने। यदि संसार में निस्वार्थ भाव से मेरी सेवा की है तो तूने। अभी मेरी आंखों के सामने वह दृश्य आ जाता है, जब मेरे पिता तुझे सींचा करते।'[11] (विशंभर नाथ कौशिक) डॉ. कैलाशचंद्र विराचित रचना तुक्के का बादशाह में भी पात्र भीखू के मन के भाव मनोहर सिंह से मिलते हैं–

'मेरे पिताजी ने ही अपने बगीचे के पेड़ लगाए थे
उनमें मेरी और मेरी बूढ़ी मां की आत्मा बसती है'''

'बीबी जी वह बगीचा मेरे पिताजी ने लगवाया है। हम लोगों ने अपने पसीने से सींचा है, वे पेड़ बेकार नहीं है।'[12] (कैलाश चंद्र शर्मा) इसी प्रकार नन्हा सुक्खा पेड़ो की रक्षा हेतु मर–मिटने के लिए तैयार है।

'वह हमारी जान है। मैं अब खेत में जाकर रह लूंगा पर अपने खेत में पेड़ लगाऊंगा और जंगल चौपट करने वालों के खिलाफ आवाज उठाऊंगा।'[13] (कैलाश चंद्र शर्मा)

साथ ही वह अपने सभी साथियों को उनके महत्व के विषय में भी बताता है। 'पर्यावरण की शुद्धता हेतु पेड़ों का बड़ा महत्व है। ''' 'पेड़ों की कटाई करना जीव हत्या करने जैसा है।'[14] (कैलाश चंद्र शर्मा)

इसी तरह की पर्यावरण जागरूकता हरियाणवी लोकगीतों में भी देखने को मिलती है :–

'बड़ पीपल कटवाइये मतना, बेटी उलहाना लाइए मतना।'15 (डॉ. मूर्ति मलिक)

ग्रामीण जीवन में वृक्षों को विशेष रूप से वट तथा पीपल को काटना पाप समझा जाता है। अतः सभी अभिभावक बेटी की विदाई के समय अन्य नैतिक बातों के साथ बड़ पीपल को न काटने की समझाइश देते हैं। उन्हें इस बात का पूरा ज्ञान था कि यह दोनो वृक्ष ऑक्सीजन का सबसे बड़ा स्रोत होते हैं, जो न केवल दिन में, बल्कि रात में भी आक्सीजन प्रदान करते हैं।

नगरीय सभ्यता की चकाचौंध और औद्योगीकरण ने ग्रामीण सभ्यता में घुसपैठ की है। संयुक्त परिवार परिवार टूट रहे हैं। जनसंख्या विस्फोट ने खेतों को क्यारियों में बदल दिया है। पेट की भूख शांत करने के लिए ग्रामीण शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। गांव संकुचित होते जा रहे हैं। शहरों का निरंतर विस्तार हो रहा है। आज आदमी स्वार्थी, आत्म–सीमित व आत्मकेंद्रित होता जा रहा है। आज मनुष्य सब कुछ जानते व समझते हुए भी जीवन में सुख के आधार वृक्षों को काटने में जरा सा भी संकोच नहीं करता। उसे भली–भांति ज्ञात है कि जल के समान वृक्ष भी हमारे जीवन का आधार है। यह हमें भोजन, शीतलता, वर्षा आदि प्रदान कर जीवनदायिनी औषधि/संजीवनी का काम करते हैं। किंतु फिर भी मनुष्य इनको काटते समय जरा सी भी अपनी विवेक बुद्धि

का उपयोग नहीं करता। मनुष्य इस तथ्य से भी भली–भांति अवगत है कि पेड़ ने जाने कितने जीव जंतुओं का आश्रय स्थल है। यह फल और फूल प्रदान करते हैं, फिर भी मनुष्य पेड़ों को काटकर अपनी सुख सुविधा तथा बनावटी दिखावे हेतु इनका क्षरण करता जा रहा है।

संक्षेप में इतना ही कहा जा सकता है कि बाजारीकरण, औद्योगिकरण, उदारीकरण, वैश्वीकरण के इस युग में हम तकनीकी व वैज्ञानिक दृष्टि से सक्षम तो बने, किंतु जड़ों से जुड़े रहना भी अत्यंत जरूरी है। क्योंकि जड़ों से कटकर पेड़ कभी भी पल्लवित व पुष्पित नहीं हो सकता। उसी प्रकार भौतिक विकास के नाम पर उन्नति से ही मानव का कल्याण नहीं हो सकता, उसके लिए प्रकृति द्वारा सहज रूप में दिए नैसैर्गिक स्रोतों का संरक्षण व संवर्धन भी अनिवार्य है। माधव कौशिक के शब्दों में :–

'जिसको बचपन में ढूंढा, वह पनघट पोखर ढूंढूगा।
अबकी बार गांव में जाकर, फिर अपना घर ढूंढूँगा।।'[16] (माधव कौशिक)

अंततः इतना ही कहा जा सकता है कि सृष्टि के समस्त जड़ चेतन की अस्मिता को सुरक्षित व संरक्षित रखने के लिए प्रकृति संरक्षण अनिवार्य है। सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य को उसको प्रयोग करने व सहेजने की शैली को पुनः अपनाना होगा। व्यक्तिगत व सामाजिक स्तर पर इसके परंपरागत स्रोतों को पुनर्जीवित करना होगा। साथ ही भावी पीढ़ी को उनकी महता तथा सदुपयोग के तरीके समझाने होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सन्त कबीर, संपादक, डॉ. नरेश मिश्र, काव्य शिखर, मुद्रण एवं प्रकाशन, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, संस्करण 2002, पृष्ठ 4
2. रहीम http//Hindi Quora.com
3. रामधारी सिंह दिनकर, आधुनिक हिंदी कविता, संपादक डॉ. सरिता वशिष्ठ, प्रकाशन विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, संस्करण 2012, पृष्ठ 76–77
4. तुलसी सिमटि सिमटि जल भरहि तालाबा, जिमि सदगुण सज्जन यदि आवा।। hindi india water portal.org/
5. गोपाल सिंह नेपाली, शरद ऋतु वर्णन, katha sangrah.com
6. जयशंकर प्रसाद कामायनी, डायमंड पॉकेट बुक्स, संस्करण 2014 आमुख, पृष्ठ 6
7. नरेश मेहता, बोआई का गीत, hindi poem.org.
8. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, बादल राग, आधुनिक हिंदी कविता, प्रकाशन विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र संपादक, डॉ. सरिता वशिष्ठ, पृष्ठ 42
9. मनोज कुमार निर्देशित फिल्म 'शोर'
10. लीलाधर जगूडी, वृक्ष की हत्या, hindiguruji.com
11. विशंभर नाथ कौशिक, अशिक्षित का हृदय, hindi kahan hindi poem.com
12. डॉ. कैलाश चंद्र शर्मा, तुक्के का बादशाह,प्रथम संस्करण, 1998 बाणगंगा प्रकाशन, जयपुर –3, पृष्ठ 21
13. डॉ. कैलाश चंद्र शर्मा, तुक्के का बादशाह, प्रथम संस्करण, 1998 बाणगंगा प्रकाशन, जयपुर –3,पृष्ठ,96
14. डॉ. कैलाश चंद्र शर्मा, तुक्के का बादशाह, प्रथम संस्करण,1998 बाणगंगा प्रकाशन, जयपुर –3, पृष्ठ 97
15. डॉ. मूर्ति मलिक, हरियाणा के लोक संस्कार गीत, सप्तऋषि पब्लिकेशंस चंडीगढ़, संस्करण 2016, पृष्ठ 67
16. माधव कौशिक, पद्य गंगा, प्रकाशन विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, संस्करण 1998, पृष्ठ 46

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 78-83

राजी सेठ का कथा साहित्य – विकलांग वेदना का दस्तावेज

वनीता रानी, शोधार्थी – पी.एच.डी.
डॉ. सुनीता गुरूङ्ग, सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, गुरु काशी विश्वविद्यालय, तलवंडी साबो, भटिंडा (पंजाब)

शोध सारांश :–

विकलांगता समाज के लिए नवीन शब्द नहीं है। यह समाज की अत्यंत गंभीर समस्या है। विकलांग के लिए बहुत से शब्दों का प्रयोग किया जाता रहा है जैसे– अपंग, बाधित, निशक्त, दुर्बल, अक्षम, अपाहिज और दिव्यांग। विकलांगता को दो रूपों में समझा जा सकता है, सामाजिक और शारीरिक। शारीरिक विकलांगता से अभिप्राय है– शारीरिक अपंगता, अपूर्णता, निशक्तता अथवा असमर्थता है। सामाजिक विकलांगता से अभिप्राय है– समाज के द्वारा निश्चित किए गए मापदंडों पर खरा न उतर पाने के प्रभाव स्वरूप समाज से प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से तिरस्कृत या बहिष्कृत किया जाना। साहित्यकार विकलांगों की कथा व्यथा को अपनी लेखनी के माध्यम से अपनी कथा माला में पिरोकर उन्हें हाशिए से उठा कर समाज की मुख्य धारा के साथ जोड़ने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं।

बीज शब्द :– विकलांगता, अपंग, विकलांग कहानी, निशक्तता।

भूमिका :–

साहित्य मानव जीवन की समीक्षा है। अतः समाज के दलित और उपेक्षित समुदाय की पीड़ा–वेदना और अन्य समस्याओं को वाणी देकर जन जन के समक्ष प्रस्तुत करने का कार्य साहित्य का है। साहित्य ही समाज को एक नई दिशा प्रदान करता है।

स्वतंत्रतापूर्वक और स्वतंत्रोयत्तर साहित्यकारों ने साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से समाज में प्रचलित विभिन्न समस्याओं पर चिंतन मनन हेतु साहित्य लेखन किया है। मुंशी प्रेमचंद से लेकर अज्ञेय, कमलेश्वर, कृष्ण सोबती, मन्नू भंडारी, नासिरा शर्मा, गीतांजलि श्री आदि ने समाज के विभिन्न वर्गों यथा श्रमिक, किसान, दलित, किन्नर, वैश्य, विधवा आदि की समस्याओं पर अपनी कहानियों के माध्यम से प्रकाश डाला है। फिर भी समाज का एक ऐसा वर्ग है जिसकी तरफ साहित्यकारों का उपेक्षा भाव अधिक रहा है। यह वर्ग है – विकलांग वर्ग।

समयानुसार हिंदी साहित्य की प्रतिष्ठित कहानीकार गौरा पंत शिवानी, राजी सेठ तथा अन्य कुछ ऐसी लेखिकाएं हैं जिनकी कहानियां के केंद्र का मुख्य बिंदु विकलांग पात्र हैं। इन लेखिकाओं ने अपनी लेखनी के माध्यम से विकलांगों की संवेदना तथा जीवन के खट्टे–मीठे अनुभवों का बहुत अच्छा चित्रण किया है।

राजी सेठ की कहानियां में विकलांग :-

राजी सेठ की रचनाएं आगत, गलियारे, दलदल, उन दोनों के बीच, उसका आकाश विकलांग पात्रों के अति संवेदनशील संसार को खंगालती हैं तथा उनकी सोच समझ, कुंठाओं और उनके जीवन के प्रति नजरिया को सामने लाती हैं।

लेखिका राजी सेठ की कुछ कहानियों में अपाहिजों और विकलांगों की कथा व्यथा, असुरक्षा और कठोर निर्मम जीवन स्थितियों का बहुत ही मार्मिक चित्रण मिलता है। लेखिका की कहानी एक बड़ी घटना, उन दोनों के बीच, इन दिनों, बाहरी लोग, यह कहानी नहीं, उसका आकाश आदि में एक तरफ वर्तमान प्रसंग में विकलांगता को परिभाषित करने का प्रयास किया है तो दूसरी तरफ समाज में उनकी स्थिति एवं कठिन जीवन संघर्ष का भी वर्णन किया है।

विकलांग की संवेदना भरी दुनिया :-

राजी सेठ एक अत्यंत संवेदनशील कहानीकार है। उन्होंने अपनी कहानियों में ऐसे व्यक्तियों के भाव संवेदना को केंद्र बिंदु में रखा है, जिनकी तरफ जीवन और साहित्य में प्रत्येक व्यक्ति का अक्सर उपेक्षा भाव ही रहा है। ये वे लोग हैं जिन्हें अक्सर निकम्मे, निरुपयोगी और निरर्थक माना जाता है और उनके प्रति निर्लेपता और तटस्थता का भाव रखा जाता है। जिस प्रकार घर में पड़ा अनुपयोगी सामान घर के एक कोने में रख दिया जाता है और यदा कदा ही उसकी तरफ ध्यान दिया जाता है। विकलांग, अपाहिज लोग भी शारीरिक और मानसिक रूप से इसी प्रकार का संताप झेलते हैं। वर्तमान समय में तो माननीय प्रधानमंत्री जी ने इन्हें डिसएबल अथवा हैंडीकैप न कह कर डिफरेंटली एबल्ड, दिव्यांग का नाम दिया है। दिव्यांग अर्थात दिव्य अंगों वाला। लेकिन सच तो यह है कि केवल नाम बदलने मात्र से भाग्य नहीं बदलता। आज भी समाज और साहित्य में विकलांगों को देखने का, उन्हें समझने का नजरिया वही पुराना है। उसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है।

साहित्य की बात की जाए तो यहां भी चोर, ठग, किसान, साहूकार, जमींदार, दलित, स्त्री आदि के लिए बहुत स्थान है किंतु विकलांगों की कथा व्यथा करने सुनने और समझने का उपक्रम कम है। कहानियों में तो विकलांग पात्र मुख्य न होकर गौण रूप में दिखाई पड़ते हैं। विकलांगों को केंद्र में रखकर लिखे गए कहानी, उपन्यास, कविता, नाटक आदि बहुत ही कम मिलते हैं। विकलांग, दिव्यांग, अपाहिज वृद्ध आदि पात्रों के कथा लेखन के उपलक्ष में राजी सेठ एक असामान्य कहानीकार के रूप में हमारे सामने आई है। उनकी कहानियों में विकलांग पात्रों की न केवल उपस्थिति है बल्कि कई कहानियां जैसे आगत, गलियारे, उसका आकाश, दलदल, उन दोनों के बीच में विकलांगों को मुख्य पात्र के रूप में चित्रित करते हुए राजी ने उनके जीवन की संवेदना को खंगाला है। एक कुशल अद्‌भुत लेखिका के स्तर पर राजी सेठ ने विकलांग पात्रों के वास्तविक जीवन में प्रवेश कर बिना किसी दया भाव, सहानुभूति के उनके जीवनगत सामाजिक एवं मानसिक स्तर को यथापरक ढंग से पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास किया है।

गलियारे के मुख्य पात्र देव का शुमार उनके कुछ चिरस्मणीय पात्रों में किया जाता है। कहानी में अपंग गृह के जीवन का दृश्य चित्रित करते हुए राजी सेठ ने विकलांगों की दिनचर्या के क्रिया कलापों, में झांक कर उनके मानसिक द्वंद और संघर्ष को भी बाखूबी मूक से मुखर बनाया है।

विकलांग देवा मन से तो बहुत ही स्वाभिमानी और समझदार है लेकिन तन से लाचार है। मन से सौम्य,

संवेदनशील विनोदप्रिय है किंतु तन से बेजान है। उसके तन और मन के विचारों की टकराहट, हताशा, उमंग, अवसाद, प्रेम घृणा आदि भावों को राजी सेठ ने अपनी कथामाला में अत्यंत कुशलता पूर्वक पिरोया है। अपनी दीदी के लिए मन में संवेदना, प्यार, अपनापन और अधिकार भावना का एहसास जिंदा रखने वाला और निगम साब के प्रति घृणा, ईर्ष्या और कठोर नाराजगी का अनुभव करने वाला देवा मानसिक रूप से तो साधारण व्यक्ति है लेकिन अपने छोटे छोटे काम जैसे बैठना–उठना, कपड़े पहनना, कोई वस्तु उठाना आदि के लिए उसे घंटों कठिन संघर्ष करना पड़ता है।

लेखिका ने विकलांग देवा के माध्यम से निर्मम समाज की विकलांगों के प्रति कड़वी सोच और असहनीय सच्चाई को वर्णित किया है। कहानी के अनुसार देवा जैसे विकलांगों के साथ दीदी अथवा निगमसाब जैसे पारिवारिक सदस्य दिखावे की हमदर्दी, सहानुभूति तो दिखा सकते हैं, इन विकलांगों के उत्थान की कोशिश भी कर सकते हैं लेकिन कभी भी इनके जीवन का हिस्सा नहीं बन सकते और न ही इन्हें अपने जीवन में सम्मिलित कर सकते हैं। राजी सेठ ने अपनी कहानी गलियारे में अपंगगृह के विकलांग बच्चों की गतिविधियों को यथार्थपरक चित्रित किया है– " अपनी टेढ़ी–मेढ़ी बाहों को तोड़ती मरोड़ती वह दीदी की कलाइयों को अपनी हथेलियों में भरने की कोशिश करेगी और खी खी हंसती रहेगी। लोका किसी पालतू की तरह किन्नी का पीछा करता करता यहां चला आयेगा और खींसें निपोरेगा। हंसने की कोशिश में वह जीभ बाहर निकाल लेगा और लार टपकाता रहेगा।"[1]

लेखिका ने गलियारे कहानी के माध्यम से क्रूर सत्य का चेहरा प्रस्तुत किया है कि इन कहानियों के विकृत अंगों, टेढ़ी मेढी बाजुओं, हकलाते, तुतलाते,लार टपकाते पात्रों का अलग संसार या तो साधारण व्यक्ति के लिए जुगुपसाप्रद बना रहेगा या फिर घृणित, उपेक्षित और त्याज्य।

कहानी का शीर्षक गलियारे विशेष सूचक और प्रतीकात्मक है। यह कहानी केवल विकलांग गृह के गलियारे में अपनी व्हीलचेयर चलाते देवा की नहीं है अपितु इसके जैसे विकलांगों के अंधकारमय जीवन और घुटनभरे कभी न खत्म होने वाले गलियारे की है जिस में ये भोले भाले, अभागे, बेबस और लाचार सरक सरक कर जीवन व्यतीत करने को विवश हैं।

राजी सेठ की कहानी आगत बहुत छोटी कहानी है। इस कहानी का विकलांग युवक अपनी खुशमिजाजी, विनोदप्रियता, जिंदादिली और अच्छे व्यवहार से लेखिका को हैरान कर देता है। उस समय राजी सेठ एक लेखिका के नजरिए से समाज की उस संकीर्ण मानसिकता पर एक बड़ा सा प्रश्न चिन्ह लगाती है। जिसके अनुसार विकलांग व्यक्ति कभी खुश नहीं रह सकते। उन्हें केवल हताश, निराश, दुःखी और उदास ही रहना चाहिए। चर्चित कहानी आगत का विकलांग अचानक लेखिका के घर आकर हंसी और विनोदप्रियता के रंग बिखेर देता है। वह निश्चेष्ट और आश्चर्यचकित लेखिका को अपने शब्दों से झंझोड़ते हुए कहता है– "अरे, अब तो हैरान होना बंद कीजिए.....मेरे आने पर खुश होइए..... क्या मुझे ही हमेशा आपके आने पर खुश होते रहना होगा! क्या आप भी ऐसा ही चाहती हैं कि मैं रोता रहूं और आप मुझे हंसाने में लगी रहें? सच बताऊं, मैं इस बीमार और बेहुदे रिश्ते को तोड़ देना चाहता हूं..."[2]

इस कहानी के माध्यम से राजी सेठ अपनी सोच और नजरिए की नई खिड़की खोल कर चिर परिचित विकलांगों के संसार में नए रास्ते से प्रवेश करती है। अपनी सकारात्मक प्रवृति से कहती हैं कि अपना नजरिया

बदल कर दुनिया को भी बदला जा सकता है।

राजी सेठ की बहु चर्चित कहानियों में एक है, उसका आकाश। जिस में पक्षाघात से पीड़ित एक वृद्ध विकलांग व्यक्ति की पीड़ा वेदना, अनुकंपा, पराधीनता, परवरशता और बेबस जीवन को केंद्र में रखा है। उसकी बीमारी की स्थिति, पारिवारिक सदस्यों के संबंधों में विच्छेद के हालात पैदा कर देती है। उपेक्षा, उदासीनता, तिरस्कार, अपमान और तीव्र घृणा का सामना करते वृद्ध विकलांग के माध्यम से लेखिका न केवल व्यक्तिगत और नजदीकी संबंधों का ऐसिड टेस्ट करती है, अपितु सत्य की पहचान करते हुए मानवीय संवेदना के कटु सत्य का आवरण हटाती है। इस कहानी के माध्यम से लेखिका विकलांग वृद्ध की जीर्ण क्षीर्ण मनोस्थिति को अंतरंगता से जांचती है। लाचार, बेबस, निःसहाय और एकाकी जीवन का बोझ ढोते वृद्ध विकलांग के लिए उसके पोत्र का खिलखिलाता चमचमाता चेहरा और छोटी खिड़की से बाहर दिखने वाले आकाश का एक छोटा सा टुकड़ा ही जिंदगी जीने का सबब बन जाते हैं। परंतु कोकरीट का वन आकाश के उस टुकड़े को अपना ग्रास बना लेता है तो वृद्ध विकलांग की जिजिविषा का अंतिम दुर्बल तागा भी टूट जाता है। लेखिका ने इस वृद्ध विकलांग के माध्यम से विकलांगों की दयनीय, करूण और परवशता की स्थिति का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है। अपने दिनचर्या की कोई भी क्रिया यथा खाना–पीना, उठना–बैठना, नहाना–धोना आदि में असहाय होने के कारण इस विकलांग वृद्ध को हर छोटे बड़े काम के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है। वह अपनी बहू की अनादरपूर्ण, तार–तार कर देने वाली, नफरत भरपूर नजरों को प्रतिक्षण महसूस करता है जैसे वे उसे एहसास दिला रही हों – "यह सब तुम्हारे पापों का फल है.... तुम्हारे अपने पापों का और थोड़ा बहुत हमारे पापों का भी कि तुम्हारा गो–मूत, नाक थूक समेटना पड़ता है।"[3]

इस प्रकार राजी सेठ ने वृद्ध विकलांग के मानसिक संसार में प्रवेश करते हुए उसकी बेचैनी, लाचारी, क्षोभ, संताप, संकोच, आत्मदया, एकाकीपन और अपने होने की व्यर्थता को सटीकता के साथ अनावृत्त किया है।

राजी सेठ ने लकवा ग्रस्त व्यक्ति की संवेदना को उन दोनों के बीच कहानी में चित्रित किया है। लेखिका ने इस बात का एहसास करवाया है कि जब एक स्वस्थ व्यक्ति अचानक पक्षाघात के प्रभाव स्वरूप लकवा ग्रस्त हो जाता है तो इस निर्बलता और असहायपन की लाचारी से वह किस तरह मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाता है। उसके अंतर्मन में केवल निराशा और हताशा भर जाती है। क्योंकि उसके अपने घरवालों, पारिवारिक सदस्यों के लिए भी उसका जीवन असहनीय बन जाता है। कहानी में लेखिका ने लकवाग्रस्त पुरुष की अर्धांगिनी का गुस्सा, खीझ, नफरत और व्यावहारिक कड़वाहट के माध्यम से उसकी मनोस्थिति को अति संवेदनशीलता से प्रस्तुत किया है। इसी से एहसास होता है कि लेखिका की लेखनी में इतना सामर्थ्य है कि खिसर–खिसर जैसा ध्वन्यातम्क एवं प्रतीकात्मक शब्द भी लकवा ग्रस्त विकलांग पुरुष के घिसटते रेंगते तन और जीवन का सटीक वर्णन करता है।

लेखिका ने दल दल कहानी में विकलांग फौजी की निराशा जन्य भावना और अहम को केंद्र में रखा है। विकलांग फौजी के माध्यम से लेखिका राजी सेठ ने इस सच्चाई का विवेचन करना चाहा है कि किस प्रकार आकस्मिक घटनाएं जीवन में नकारात्मकता और घृणित मानसिकता भर देती हैं। इस कहानी का विकलांग हो चुका फौजी अपने मन मस्तिष्क में समाज के प्रति अत्याधिक नफरत और उदासीनता भर कर जीता है। इसी

उदासीनता के कारण उसके अंतर्मन में इतनी कुंठाएं पैदा हो जाती हैं कि वह वह सदैव अपने आपको बड़ा और सामर्थ्यवान दिखाने के लिए अन्य लोगों पर अत्याचार करने से भी पीछे नहीं हटता। वह अपनी आंतरिक दुर्बलता, रिक्त भावना और लघुता ग्रंथि को दूसरों से छिपाने के लिए कोई भी नीच कार्य करने से हिचकिचाता नहीं।

इस प्रकार राजी सेठ ने विकलांगों की जीवन यात्रा और जीवन दृष्टि को कहानियों में सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। उनकी कथा कहानी सामान्य दुनिया के समांतर ही एक ऐसी विशेष एवं प्रतिशेधित लोगों कीघ दुनिया को प्रस्तुत करती हैं। जिन में मजबूरी, विवशता, लाचारी, अभाव, पराधीनता और एकाकीपन होने के बावजूद भी जिंदगी जीने की इच्छा है। जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण है।

अनुभवात्मक तथ्यात्मक प्रभाव :–

राजी सेठ की कहानियों में अस्तित्ववादी, तथ्यात्मक प्रभाव स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट होता है। वर्तमान समय में इंसान भीड़ वाले विश्व में भी अकेला हो गया है। दुनिया में अपने अस्तित्व और मानवीय संबंधों को लेकर मनुष्य निस्तबद्धता, नीरवता, रिक्तता, निराशा, एकाकीपन, तनाव और मृत्यु बोध आदि का विकट रूप से अनुभव करता है। लेखिका की कहानियों में मानव के विशेषतः विकलांगों की इन भावनाओं, एहसासों, अनुभूतियां और कुंठाओं का सरल सहज शब्दों में प्रतिबिंबन हुआ है।

मृत्यु बोध :–

राजी सेठ ने अपनी कहानियों में मृत्यु बोध के प्रसंग में, यह कहानी नहीं की भूमिका में लिखा है, "मेरी आंतरिकता में मृत्यु एक ऐसा मुद्दा है जो मेरी रचनाओं में बार–बार उजागर होता है। जीवन की बहुत सी बातें इस संदर्भ से लगाकर कहने का दबाव बनता है। कभी स्थिति की तरह, कभी प्रसंग, कभी अनुभव, और कभी मानसिकता के प्रसार की तरह मृत्यु सदा उपस्थित रहती है, जबकि जीवन को लेकर मेरी अंतरनिहित प्रतिक्रिया मृतप्रायता की हर वृति के विरुद्ध रही है।"[4]

उसका आकाश, कहानी में राजी सेठ का मृत्यु विषयक चिंतन स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आता है। मृत्युबोध के विषय में, मृत्यु क्या है, इस प्रसंग में राजी सेठ का दृष्टिकोण दर्शनिकता का पुट लिए हुए है। विकलांग, जिंदा लाश बनकर लगातार जीवन मृत्यु का अनुभव कर रहे हैं। विकलांग वृद्ध के द्वारा लेखिका मृत्यु की भयानक अनुभूति को शब्द देती है– "कितनी मौतें..... कितनी अधिक मौतें एक साथ जी सकता है मनुष्य। फिर जीवन के पूर्ण स्थगन का ही नाम मृत्यु क्यों है?... मृत्यु वह है जो महसूस होती है.... जो महसूस करते होती हो, जैसे उसकी हो रही है। उसकी मृत्यु हो रही है। उसका आधा भाग मर चुका है। उसका जीवित भाग मरने की प्रक्रिया में है।"[5]

हर क्षण मृत्यु की तरफ बढ़ रहा विकलांग वृद्ध केवल यही सोचता है कि जिंदगी के तमाम ताम दाम, रौब–रुतबा, भाग दौड़, दिखावा, आडंबर आखिर किसलिए हैं– अंततः तो एक दिन सबको मरना ही है। आधे मृत और आधे जीवित शरीर के साथ जीवन व्यतीत कर रहे विकलांग वृद्ध के मानसिक संसार में डुबकी लगाते हुए राजी सेठ मृत्यु विषयक चिंतन मनन के बहुत से महत्वपूर्ण पहलुओं को छूती हैं– "क्या मर जाना इतना निःशब्द, इतना सामान्य, इतना साधारण होता है कि शरीर के अर्धांग में होता रहे और बोध भी न हो? मृत्यु ऐसी होती है क्या?..."[6]

रिक्तता और संबंध विच्छेद :–

लेखिका की कहानियों में विभिन्न मानवीय संबंधों एवं परिस्थितियों से निरूपित शून्यता एवं संबंध विच्छेद की अनुभूति को उनकी कहानियों का विशेष भाग बताते हुए डॉक्टर कश्मीरी लाल लिखते हैं– "संबंधों में अनुकूलता न होना, रुग्णता होना, व्यवस्था का अस्त व्यस्त होना आदि इस रिक्तता के मुख्य कारण है।"[7]

डॉ. कश्मीरी लाल लेखिका की कहानियों में रिश्तो में अलगाव की उपस्थिति को विशेष रूप से इंगित करते हुए, इस विच्छेद को अस्वस्थता, रुग्णता, बीमारी से उत्पन्न, पूर्व कटु रिश्तों से उत्पन्न तथा स्व प्रतिष्ठा जनित बताते हैं।

उसका आकाश में वृद्ध विकलांग की ठहरी हुई, स्थगित, खाली, अर्थहीन, बोझिल और उदासीन जिंदगी कुछ ऐसी ही प्रतीत होती है जैसे कि ठहरा हुआ सड़ांध मारता पानी।

गलियारे के देवा का जीवन उसकी विकलांगता और पराधीनता के कारण वितृष्णा पूर्ण और एकाकीपन से भरा है। उन दोनों के बीच कहानी की पत्नी अपने पति की रुग्णता एवं पराधीन स्थिति के कारण वितृष्णा और कटु एकाकीपन का अनुभव करती है।

उसका आकाश का अंगाघात से पीड़ित विकलांग नायक मात्र एक टुकड़ा भर आकाश की उपस्थिति को ही प्राप्त कर पाता है। आराम शैया पर तन को निरंतर ठंडा गर्म होते महसूस करते हुए नितांत अकेलेपन, अपेक्षा और घृणा झेलता है।

इस प्रकार राजी सेठ के कथा साहित्य में विकलांग वर्ग को समाज से अलग न समझते हुए, समाज के अभिन्न भाग के रूप में समझने, जानने और मानने का प्रयास किया गया है। इनके प्रति सहानुहूति अथवा दया भाव न रख कर, लेखिका ने विकलांग वर्ग की उपस्थिति को सार्थक रूप में प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष :–

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि विकलांगता को परिभाषित करने के लिए बहुत सारे सहानुभूति पूर्ण शब्दों का प्रयोग किया जा रहा है लेकिन सच तो यह है कि विकलांगता का संताप भोग रहे बच्चे बूढ़े महिलाएं पुरुष यहां तक की तृतीय लिङ्गियों के लिए भी यह एक बहुत बड़ी विपदा है क्योंकि इनके (विकलांगों) लिए समाज में हर कदम पर केवल उपेक्षा, घृणा और तिरस्कार है। साहित्यकारों की अपनी सशक्त लेखनी के द्वारा इन्हें समाज में सम्मान दिलवाने की कोशिश इनके मन मस्तिष्क में आशा की किरण जगा रही है। इसी लेखनी के प्रभाव से समाज विकलांगता संबंधी अपने पूर्वग्रहों से बाहर निकल पाएगा और इन्हें समाज की मुख्यधारा के साथ जोड़ने में अवश्य सफल होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राजी सेठ, 'दूसरे देशकाल में', पृ. 2
2. राजी सेठ, 'यह कहानी नहीं', पृ. 52
3. राजी सेठ, 'अंधे मोड़ से आगे', पृ. 35
4. राजी सेठ, 'यह कहानी नहीं', भूमिका पृ. 8
5. राजी सेठ, 'अंधे मोड़ से आगे', पृ. 35
6. वही, पृ. 42
7. डॉ. कश्मीरी लाल, 'राजी सेठ, कथा सृष्टि एवं सृष्टि', पृ. 74

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 84-88

व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं सार्वभौमिक न्याय तथा अद्वैत सिद्धांत एक वैचारिक दृष्टिकोण

सुभाष चंद्र शर्मा
शोधार्थी, दर्शनशास्त्र विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर।

भूमिका :–

व्यक्तिगत अधिकार सार्वभौमिक न्याय और अद्वैत के बीच क्या संबंध हैं। इनका आपस में क्या आशय है, ये एक दूसरे से कैसे जुड़े हुए हैं। क्या यह मृत्यु, भ्रम, अभाव, दुष्टता और इस वैश्विक समुदाय से मुक्ति के बारे में बताता है? इस भौतिक संसार में अद्वैत विद्या को समझने के लिए अनेक शास्त्र उपलब्ध है। संसार में अनेक शास्त्र, उपनिषद तथा वेद है, जानने एवं समझने को बहुत कुछ है लेकिन समय बहुत कम है और विद्या बहुत अधिक है। अतः जो सारभूत है उसका ही सेवन करना चाहिए जैसे हंस जल और दूध में से दूध को ग्रहण कर लेता है :–

अनेकशास्त्रं बहुवेदितव्यम्, अल्पश्च कालो बहवश्च विघ्नाः।
यत् सारभूतं तदुपासितव्यं, हंसो यथा क्षीरमिवाम्भुमध्यात्।।

सुभाषितसुधारत्नभाण्डागारम् ५०९–८७८

अद्वैत में सार्वभौमिक न्याय का आशय एक सामान्य विचार है, इसमें मुख्यतः सामान्य न्याय की व्याख्या है, जो विश्वास करने का अवसर प्रदान करती है। बताया गया है कि हम में से प्रत्येक के दो जीवन हैं। हम दो जीवन जीते हैं। प्रथम जीवन वह होता है जिसके बारे में हम सोचते हैं, हम जी नहीं पाते हैं। दूसरा जीवन वह होता है जो हम वास्तव में जी रहे होते हैं। जीवन जीने की यह उच्च स्तरीय राह ही अद्वैत दर्शन है। जब हम जीवन के छोटे उद्देश्यों से दूर होकर दो नहीं एक ही की राह पकड़ लेते हैं तो यह अद्वैत दर्शन होता है। हमारे ऊपर वर्तमान मौजूद छवि या छाप हल्की होने लगती है, धुंधली हो जाती है। इसके बाद हमारी त्वरित प्रतिक्रिया जिस प्रकार हमारी सोच को प्रदर्शित करती है, वह अद्वैत दर्शन को परिलक्षित करती है। इसी की भारतीय न्याय में यह भारतीय न्याय प्रणाली में बहुत बड़ी विशेषता एवं उपयोग है।[2]

इस तरह अद्वैत या दो नहीं एक ही की अवधारणा को जानने के लिए प्रश्न पूछकर, जागरूकता लाकर या सजह होकर ही मुक्ति नहीं पाई जा सकती है। ये वाक्य या ये शब्द हमारा पीछा तब तक नहीं छोड़ेंगे जब तक हम व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं सार्वभौमिक न्याय अथवा वस्तुनिष्ठ न्याय के सही मायने नहीं तलाश लेते हैं। तब तक हमारे लिए यह एक चुनौती बने रहेंगे।[3]

शंकराचार्य के अनुसार स्वतंत्रता एवं न्याय प्राप्त करने के लिए विचारों के बहिष्कार को समझाना अथवा अविद्याजनक परिस्थिति या उनके बारे में अपनी राय स्पष्ट करने में असमर्थता महसूस करना आवश्यक हो जाता है। शंकराचार्य कहते हैं कि ज्ञान प्राप्त करने की स्थिति तभी आती है जब अज्ञान या विद्या को नष्ट किया जा सकता है अब यह अज्ञान ही न्याय प्राप्त करने में बाधक तत्व होता है।[4] अज्ञान को शंकराचार्य माया के नाम से भी संबोधित करते हैं यह है माया विवाद को जन्म देती है एवं अद्वैत दृष्टि विवाद को सुलझाने का कार्य करती है यही अद्वैत न्याय है कबीर वाणी में उल्लेख मिलता है–

कबीर माया पापणीं, हरि सूँ करे हराम।
मुखि कड़ियाली कुमति की, कहण न देई राम।।

यह माया बड़ी पापिन है। यह प्राणियों को परमात्मा (सार्वभौमिक न्याय) से विमुख कर देती है तथा उनके मुख पर दुर्बुद्धि की कुंडी लगा देती है और राम–नाम का जप नहीं करने देती।[11]

शब्द कुंजी :–

अद्वैत न्याय, सार्वभौमिकता, वस्तुनिष्ठ, एकात्मकता, दार्शनिक राजा, श्रवण, मनन, और निदिद्यासन इत्यादि।

शंकराचार्य के अनुसार स्वतंत्रता प्राप्त करने (अद्वैत न्याय) के लिए विचारों के बहिष्कार को समझाना या उनके बारे में अपनी राय स्पष्ट करने में असमर्थता महसूस करना आवश्यक हो जाता है।

वह कोई भी व्यक्ति जो स्वतंत्रता एवं न्याय चाहता है, वह अपने हृदय के पवित्र स्थान में उस पर ध्यान देना सीखेगा। उसे अपने मन की शुद्धता और पवित्रता को संभालकर रखना होगा। यह बात, यह विचार बुद्धि के लिए समझ से परे हो सकता है। यह दिमाग के नियंत्रण से बाहर है। जरूरी नहीं कि इस कथन का चिंतन हमारा मस्तिष्क कर सके। यह कुछ ऐसा है जिसे व्यक्त नहीं किया जा सकता है। यह केवल महसूस किया जा सकता है। इसे लेकर आम तौर पर यही निष्कर्ष हासिल किए जा सकते हैं कि अद्वैत या मुक्ति या स्वतंत्रता अथवा न्याय श्रवण, मनन, निदिद्यासन के द्वारा प्राप्त की जा सकती है। इसका यह निष्कर्ष निकलता है कि ब्रह्मांड की मूल उत्पत्ति, अपने व्यक्तित्व की वास्तविकता, व्यावहारिक जगत के साथ एकता और जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति को अनुभव करने जैसी कई रोचक व आकर्षक बातों के बारे में यह बताता है। कई बार कुछ व्यक्ति धीरे–धीरे हो रही भावनाओं की कमी को पहचानते हैं। इसके अलावा उनके जीवन में कुछ भी नया बताने लायक नहीं होता है। यहां कुछ भी घोषित तौर पर नहीं होता है,जैसा सामने होता है, वैसा ही सब कुछ प्रतीत होता है। बस यह कहा जा सकता है कि इसका ज्ञान होने के बाद जीवन अधिक सुखद हो सकता है।

हमारे स्वयं के स्वरूप को जानने के बाद अपने जीवन में और अधिक आनंद प्राप्त होने लगता है और हम उस वस्तुनिष्ठ न्याय अथवा सार्वभौमिक न्याय को ही व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अर्थ के रूप में समझने लगते हैं असल में अद्वैत की स्थिति में व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसी कोई चीज शेष नहीं रहती अथवा जो स्वतंत्रता वस्तुनिष्ठ एवं सार्वभौमिक हो वही उसके लिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता है इसमें द्वैत स्थापित करना संभव नहीं है।

अद्वैत वेदांत का न्याय के संदर्भ में उपदेश :–

वास्तव में अद्वैत न्याय क्या है?

अद्वैत न्याय एक विचारधारा, एक राष्ट्रीय पहचान और नैतिकता की भावना प्रतीत होती है। सिद्धांत के अनुसार वस्तुनिष्ठ सत्य है। यह वास्तव में बांटा नहीं जा सकता है। इसकी परिधि इसकी सीमाएं तय नहीं हैं

असीमित हैं, शानदार हैं। यह पूरी तरह से सत्य नहीं है। इसकी अवधारणा अपने स्वयं के अस्तित्व से जुड़ी है। इसके लक्ष्य को आमतौर पर मोक्ष के रूप में जाना जाता है। यहां नैतिकता का आशय है इस तरह से कार्य करने से है कि आत्मा जो कुछ भी देखती है, महसूस करती है, वह सत्य के रूप में सामने आए, वह अद्वैत के रूप में सत्य बन सके।

अद्वैत न्याय का वास्तिवक अर्थ क्या है?

संस्कृत शब्द अद्वैत का अर्थ है अद्वैत। अद्वैत शब्द के अनुसार जब अस्तित्व को एक निश्चित दृष्टिकोण के मुताबिक ही माना जाए। उसे अलग–अलग स्वरूप न मानकर एक स्वरूप ही माना जाता है। यहां जीवन की श्रेष्ठता उसके सही उपचार और सही निदान में मानी जाती है, कहा जाता है जीवन का एक स्पष्ट नजरिया होता है, दृष्टिकोण होता है, वो है अद्वैत। जीवन रूपी तराजू को अद्वैत पैमाने पर स्थित रखकर अद्वैत न्याय का विचार प्रतिपादित किया जा सकता है। इस सिद्धांत का कहीं उल्लेख नहीं मिलेगा लेकिन फिर भी मनुष्य विवेकशील प्राणी होते हुए अद्वैत न्याय को आत्मसात कर सकता है इसमें कोई दो राय नहीं है।

क्या अद्वैत न्याय को धर्म माना जाता है?

अद्वैत विचार धारा की ओर से यह दावा किया जाता है कि वास्तव में अद्वैत एक सत्य है, ऐसा सत्य जिसे प्राथमिक रूप से निर्धारित किया जा सकता है। ऐसा करने के लिए हमें सहायता और सलाह की आवश्यकता होगी, इन तर्कों व सलाह को हमें तथ्यों पर आधारित रखना चाहिए। इसमें धारण करने जैसी कोई चीज नहीं है इसका स्वरूप ही साक्षी चैतन्य भाव है।

अद्वैत वेदांत में ध्यान का स्वरूप :–

केवल ध्यान योग अभ्यास जो अद्वैत नहीं होता?

नियमित रूप से अद्वैत अंतर्दृष्टि से ध्यान हमारे अपने अस्तित्व के गैर–दोहरे सिद्धांतों या अद्वैत सिद्धांत की वैधता की पुष्टि करने के सबसे महत्वपूर्ण तरीकों में से एक है। यहां श्रवण मनन और निदिद्यासन तीनों पद्धति से ही अद्वैत सिद्धि होती है यही एकात्म न्याय है! यही वस्तुनिष्ठ न्याय हैं! यही अद्वैत न्याय है!

ध्यान का अभ्यास :–

मन और मस्तिष्क को लेकर ध्यान (श्रवण, मनन, निदिद्यासन) के बाद अद्वैत न्याय या सार्वभौमिक निर्णय या गैर–दोहरी निर्णयआत्मक विचारों को शुरू करने या चलाने के लिए प्रशिक्षण सत्र एक बेहतर विकल्प साबित हो सकता है। यहां एक संकल्प यह भी है कि हम एक दिन पूर्व निर्धारित अवधि में नियमित आधार पर विश्राम करें। दैनिक ध्यान के अभ्यास के लिए लय पाने में और उसे कायम रख पाने के बारे में अधिक जानकारी पाई जा सकती है। मेडिटेशन से गतिविधियों की एक गाइड का सहारा भी लिया जासकता है। यह ध्यान के मामले में फायदेमंद साबित हो सकता है।[8]

वैचारिक परिपक्वता :–

अद्वैत वेदांत दर्शन में जो न्याय की विचारधारा सम्मिलित है या मनीषियों ने उसको न्यायिक दृष्टि से देखने का प्रयास किया है वह यह है कि अद्वैत तत्व का चिंतन मनन अभी करने से वैचारिक परिपक्वता आती है यही परिपक्वता अपने आप में न्याय है यदि वैचारिक परिपक्वता नहीं हो तो स्थिति यह होती है चाणक्य नीति दर्पण में वर्णित है।[9]

काचे मणिः मणौ काचो येषां बिद्धिः प्रवर्तते।
न तेषां संनिधौ भृत्यो नाममात्रौ तिष्ठति।।

कांच को मणि और मणि को कांच समझने वाले राजा के पास नौकर तक भी नहीं टिकते वह न्याय क्या करेगा।[12]

प्लेटो के दार्शनिक राजा के सिद्धांत में भी यह वर्णित है कि संयम साहस विवेक और 4 गुण दार्शनिक राजा में विद्यमान होते हैं विश्व में सर्वोच्च से गुण न्याय का होता है वह स्थिति उसकी अद्वैत स्थिति होती है। अद्वैत स्थिति में तटस्थ होकर के निर्णय दिए जाते हैं एवं तटस्थता के आधार पर ही राज्य में सामाजिक आर्थिक राजनीतिक सांस्कृतिक विविधताओं के बावजूद भी एकता है। यही वस्तुस्थिति या विचारधारा अद्वैत सिद्धांत को परिलक्षित करता है।[10]

विवाद समाप्ति अद्वैत द्वारा सुनिश्चित होती है।[6]

भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य है यह धर्मनिरपेक्षता अद्वैत न्याय को सूचित करती है। इसी प्रकार व्यक्तिगत है मतभेद हो या मनभेद हो दोनों स्थितियों में अद्वैत सिद्धांत की महत्वता या उपयोगिता सिद्ध होती है। स्पष्ट किया गया है कि द्वैत सिद्धांत में वैचारिक मतभेद की स्थिति हो सकती है लेकिन उसी वैचारिक कम के बाद अद्वैत की स्थिति में सारे वैचारिक मतभेद शांत हो जाते हैं एवं मानसिक निर्मलता आती है। दो विचारों के संगम पर हो रही कलहपूर्ण स्थिति को सिद्धान्त और साधन के विभागों में संजोया है। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों सुखों का संविधान कुशल कला कौशल के साथ वर्णित किया है। वस्तुतः दार्शनिक अनुमिति का 'तत्त्व' पर रहते हुए भी तत्त्व के प्रति अनास्थापरक दृष्टिकोण सुदृढ़ न होने के कारण द्वैतात्मकता का विकास हुआ है। इस प्रकार क्रम से अद्वैत में द्वैत और त्रैत आदि का आगमन 'दर्शन' में अनिर्णायकता के जन्म का कारण बना है। वस्तुतः अन्तिम प्रमाणरूप से मानी जाने वाली श्रुतियों में आस्था होने पर भी, विचार दृष्टियों में भिन्नता के कारण अर्थों में वैषम्य उत्पन्न हुआ क्योंकि श्रुतियाँ द्वैत के माध्यम से जिस अद्वैत की व्याख्या करती हैं, उस द्वैत को विभिन्न दार्शनिक विधाओं ने मुख्य ही मान लिया। मुख्य कारण था कि वहाँ पर प्रयुक्त प्रमाण वाक्यों को प्रमा की संज्ञा न दे पाने के कारण श्रुतियाँ अनेकार्थक हुई हैं। उसी संदर्भ में केवलाद्वैत के समक्ष विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वैताद्वैत आदि ने अपनी विचारधाराएँ सप्रमाण विद्वत् समाज के सम्मुख उपस्थित की। सभी विश्लेषणों से लगता है कि इस व्यवस्था में भी अद्वैती सोच का परित्याग कोई भी प्रणाली नहीं कर पाई।[7]

इसी कारण इस शोधकार्य में रामचरितमानस के अन्तर्गत तत्त्वमीमांसा की अभीप्सा बनी है। यह अनुमान तथा अनुभव के आधार पर किया गया सर्वेक्षण नहीं है। यद्यपि श्रुतियों के अनुसार 'तत्त्व' वह है– 'जो वाणी आदि का विषय नहीं बन सकता'। अतः उस पर किया गया परिश्रम केवल बुद्धि के प्रेक्षण तक कार्य करता है। उस तात्त्विक वृत्ति की फलित अवस्था में तत्त्व विश्लेषणात्मक बुद्धि भी कार्य करना बंद कर देती है। अतः उसके वक्ता, श्रोता का अभाव रहता है, केवल अनुभव का विषय रह जाता है।

'कहेहू तें कछु दुख घटि होई।
काहि कहौं यह जान न कोई।।
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा।

जानत प्रिया एकु मनु मोरा।'[3]

मन का दुःख कह डालने से भी कुछ घट जाता है। पर कहूँ किससे? यह दुःख कोई जानता नहीं। हे प्रिये! मेरे और तेरे प्रेम का तत्त्व (रहस्य) एक मेरा मन ही जानता है।[5]

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि अद्वैत न्याय अनुभव का विषय है ना कि सैद्धांतिक यह अनुभव साधन चतुष्टय व्यक्ति एवं ब्रह्मनिष्ठ अधिकारी पुरुष को ही प्राप्त होगा निरंतर अभ्यास से अद्वैत सिद्ध प्राप्त व्यक्ति की अद्वैत न्याय का अधिकारी न्यायाधीश होगा।

संदर्भ-सूची :-

1. तत्त्वबोध शङ्कराचार्य कृत, चिन्मय मिशन।
2. आत्मबोध शङ्कराचार्य कृत, चिन्मय मिशन।
3. चूडामणि शङ्कराचार्य कृत, चिन्मय मिशन।
4. पञ्चदशी शङ्कराचार्य कृत, चिन्मय मिशन।
5. स्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर।
6. न्याय दर्शन, महर्षि गौतम द्वारा रचित।
7. शंकरनंद की कृतियाँ।
   (1) भगवद्गीता भाष्य
   (2) आत्म पुराणम्।
   (3) वेदांत परिभाषा (धर्म राजा ध्विंदर कृत)
8. न्याय दर्शन, देवराज नंदकिशोर भारतीय दर्शन का परिचय
9. भारतीय दर्शन का परिचय, दत्ता एवं एवं चटर्जी।
10. प्लेटो द्वारा रचित, रिपब्लिक।
11. कबीर–वाणी, संत कबीर द्वारा रचित।
12. अर्थशास्त्र, कौटिल्य द्वारा रचित।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 89-94

सिवाना एवं मोकलसर : ऐतिहासिक अध्ययन

दिनेश गहलोत
शोधार्थी, इतिहास विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर।

राजस्थान यह एक ऐसी भूमि है जिसका नाम लेते ही आदर्श देशप्रेम, स्वातन्त्रय भावना, जातिगत स्वाभिमान, शरणागत वत्सलता, प्रतिज्ञा–पालन और सर्व–समर्पण जैसी विशिष्टताओं का स्मरण हो उठता है। यहाँ का ज़र्रा–ज़र्रा देश प्रेम, वीरता और बलिदान से ओत–प्रोत अपने अतीत का जीता जागता इतिहास है। राजस्थान का पश्चिमी भाग मारवाड़ कहलाता था। वर्तमान में हम मारवाड़ को जोधपुर कहते हैं। राज्य प्रबन्ध के लिए मारवाड़ के 21 विभाग किये गये थे। जो परगने कहलाते थे। मारवाड़ के इतिहास में सिवाना परगने का विशिष्ट स्थान रहा है।

सिवाना :–

सिवाना का दुर्ग मध्यकालीन इतिहास में बहुत प्रसिद्ध रहा है। सिवाना मोकलसर स्टेशन उत्तरी रेलवे समदड़ी रानीवाड़ा खंड पर सात मील दूरी पर स्थित है। सिवाना का दुर्ग छप्पन की पहाड़ी भाग पर बालोतरा जिले में स्थित हुआ है। यह पहाडी 1050 फीट ऊँची है। चारों ओर पहाड़ी भाग आ गया है। पास के क्षेत्र में पहाड़ी की दो समान्तर पंक्तियां चलती हैं, जिनके बीच के भाग का क्षेत्र 15 मील है। यह दोनों पहाड़ियों के बीच का प्रदेश विविध प्रकार के वृक्षों से परिपूर्ण होकर बड़ा दुर्गम हो गया है। कांटेदार झाड़ियों आदि ने इस दुर्गमता में वृद्धि की है।[1]

सिवाणा का पहाड़ी दुर्ग जोधपुर के राजाओं का विपत्ति में आश्रय–स्थल रहा है। जब कभी प्रबल शत्रुओं ने उनसे जोधपुर दुर्ग छीन लिया तो प्रायः दुर्गम दुर्ग सिवाणा ही उनका आश्रय–स्थल रहा। सिवाना की अगम्य गिरि पक्तियां, सघन वनावलि से मिलकर ऐसी अभेद्य बनी हुई थीं कि बड़ी सेना को इस प्रदेश में ले जाना अतीव दुष्कर था। इन्हीं प्राकृतिक सुरक्षा से समन्वित दुर्ग का आश्रय लेकर मालदेव ने शेरशाह से तथा राव चन्द्रसिंह ने अपने आप को मुगलों से सुरक्षित रखा। सिवाना की छप्पन की पहाड़ियां मुगलों के लिए अनतिक्रम्य बाधा बन गई थीं।[2]

एरस्किन ने इन पहाड़ी श्रेणियों को सरोरा का नाम दिया। उत्तरी श्रेणी की अधिकतम ऊँचाई 3737 फीट है, जबकि दक्षिण की ओर की श्रेणी की सर्वाधिक ऊँचाई 2540 फीट है। इन पहाड़ी श्रेणियों की बीहड़ता से मुगल फौजों के आगे बढ़ने में बड़ी बाधा पड़ी थी। अबुल फजल ने अकबरनामा जिल्द में सिवाना के दुर्ग का वर्णन करते हुए कहा कि ''अजमेर के नीचे सिवाणा एक प्रसिद्ध दुर्ग है जिस पर चन्द्रसेन का अधिकार है। बाछा राठौड़ किले का किलेदार था। शाही सेना दो माह तक किले के आसपास के प्रदेश के जंगल काटकर साफ करने में

लगी रही''।

तारीखे अलाई ने सिवाना दुर्ग का वर्णन इस प्रकार किया है कि यह किला दिल्ली से 100 परसंग दूर है तथा पहाड़ी की ऊँचाई पर खड़ा है। आसपास का जंगल जंगली बर्बर लोगों से भरा पड़ा है जो दिन दहाड़े डकैती करते हैं। सातलदेव इस पहाड़ी किले की चोटी पर बैठा हुआ काकेशस पर बैठे हुए वृहदाकार पक्षी सा नजर आता था या वह पहाड़ी बाज प्रतीत होता था।

''मारवाड़ रा परगनां री विगत'' में उल्लेख है कि सिवाणा जोधपुर से लगभग 60 मील दक्षिण में दाहिनी कोण में है। जालोर से इसकी दूरी करीब 30 मील मानी जाती है। यह किला पर्वत शिखरों के बीच में अवस्थित है।

''मारवाड़ रा परगनां री विगत'' में आये उल्लेख के अनुसार इस किले का निर्माण संवत् 1077 के पौष सुदी 7 को पंवार वीर नारायण ने करवाया। यह वीर नारायण बाड़मेर के शासक धरणीवराह के भाई राजा भोज का पुत्र था। इसका उल्लेख इस प्रकार से है –

''परगनों सिवाणों जोधपुर थी कोस 30 दखनाद कूण था जीवणै रौ। जालोर था कोस 15 महेवा थी कोस 12 छै। आद पंवारां रौ करायौ गढ़ छै। धरणी वाराह पंवार बाहड़मेर धणी हुवो। तिण आपरा भाई राजा भोज नुं जालोर भाई बांटे दीयौ थौ। तिण रौ बेटो पंवार वीरनारायण तिण इण भाखरी ऊपर गढ़ करायौ, संमत 1077 पोस सुद 6।''[4] इस संबंध में श्री रतनलाल मिश्र ने ओझा के इतिहास के संदर्भ में बताया कि इस किले का निर्माण वीर नारायण ने सन् 954 ई. में करवाया था।

इतिहासकार जगदीश सिंह गहलोत के अनुसार– ''हुकुमत कस्बा सिवाना जोधपुर शहर से 56 मील दक्षिण पश्चिम में तीन हजार बस्ती का है। जोधपुर रेलवे से समदड़ी स्टेशन से दस मील दूर है। इसको बसाने वाल पंवार क्षत्रिय थे। वीरनारायण पंवार ने यहां पर किला बनाया था जो अब तक हैं। यह अलाउद्दीन खिलजी के कब्जे में भी रहा। अलाउद्दीन के पीछे राव मल्लिनाथ राठौड़ के भाई जैतमाल ने कब्जा कर लिया और कई पीढ़ी तक उनके वंशजों के हाथ में रहा। बाद में राव मालदेव का अधिकार हो गया। अकबर बादशाह ने राव चंद्रसेन से छीनकर उसके एक भतीजे राठौड़ कल्ला रायमलोत को दे दिया। उससे मोटा राजा उदयसिंह ने लड़ कर छीन लिया। महाराजा जसवंत सिंह (प्रथम) के देहांत के पश्चात् औरगंजेब ने राजा सूजानसिंह पीसांगन के इस्तमरारदार हैं। किंतु अजीतसिंह ने उनके पुत्रों से वापस छीन लिया तब से मारवाड़ राज्य में शामिल है। दर्शनीय स्थानों में कल्ला रायमलोत राठौड़ का थड़ा है। किले में और हल्देश्वर पहाड़ी पर महाराजा अजीतसिंह के बनाये बुर्ज हैं। ऐतिहासिक स्थान समदड़ी, दूंदाड़ा और कुईपा है। सिवाने का किला पहाड़ी पर है। नाई और छींपा दर्जी को रात के वक्त किले में नही रहने देते हैं, क्योंकि इन लोगों के भेद से ही यह किला राजा उदयसिंह ने कल्ला रायमलोत से जीता था''।[5]

सिवाना के पास के भू–भागों पर कुतुबुद्दीन ऐबक और इल्तुतमिश के हमलों का उल्लेख मिलता है। अतः बहुत संभव है कि उक्त दोनों मुसलमान शासकों ने सिवाना दुर्ग पर भी अधिकार किया हो। अलाउद्दीन खिलजी के समय सिवाना पर निरंतर हमले होते रहे पर सातलदेव ने आक्रमणकारियों को मार भगाया। अंत में अलाउद्दीन खिलजी स्वयं सिवाना के विरुद्ध चला। काफी समय तक घिरा रहने के कारण दुर्ग का पतन हुआ और सातलदेव आदि राजपूत मारे गये। यह घटना 1308 ई. की है।[6]

फिरोजशाह तुगलक ने 1357 ई. में सिवाना पर आक्रमण किया था। किला बडे प्रतिरोध के बाद जीता गया। सिवाना फिर मल्लीनाथ के अधिकार में गया जिसने 1399 ई. तक शासन किया।[7] जोधा के समय सिवाना दुर्ग बीजा के अधिकार में था जिसका वध अजमल द्वारा हुआ। आपामल भाद्राजून का शासक था। बीजा के पुत्र ने आपामल को मारकर सिवाना पर पुनः अधिकार कर लिया।

अलाउद्दीन की मृत्यु के पश्चात् सिवाणे पर खिलजी वंश का शासन समाप्त हो गया। उन दिनों राव मल्लीनाथ सलखावत का प्रभाव खेड़ व मेहवे क्षेत्र में बढ़ रहा था। राव मल्लीनाथ बहुत वीर व शक्तिशाली थे। अलाउद्दीन की मृत्यु के पश्चात् सिवाणा में मुसलमानों का प्रभाव कम हो गया। तब राव मल्लीनाथ जी ने मुसलमानों को वहां से भगा कर सिवाने पर अपना अधिकार कर लिया। कुछ समय पश्चात् मल्लीनाथ ने सिवाना अपने छोटे भाई जैतमाल को दे दिया। वहां पर जैतमाल जी की लगभग नौ पीढ़ियों का शासन रहा। इस संबंध में परगना री विगत में इस प्रकार से उल्लेख किया गया है –

''तठा पछै रावल मालौ सलखावत तपीयौ। माले मुगलां कना सीवांणौ लेनै राव जैतमाल सलखावत नुं दीयौ, सु इतनी पीढ़ी 9 जैतमाल सीवांणो रह्यौ –

1. रा. जैतमाल सलखावत 2 रावत हापौ जैतमालोत, 3. रावल करण हापावंत, 4. रावत तीहणौ करनोत, 5 रावत वीजो तीहणोत, 6. राणो देवीदास बींजावत, 7. राणो जोगो देवीदास रो, 8 रांणो करमसी जोगा रौ, 9 राणो डूंगरसी करमसी रौ।[8]

राव मल्लीनाथ का समय वि.सं. 1431 से 1456 तक का माना जाता है। उक्त घटना इस अवधि के दरम्यान की है। जिस समय सीवाणे पर रावत वीजोजी (जैतमालजी की पांचवीं पीढ़ी) का शासन था, उस समय जोधपुर बस चुका था और राव जोधाजी का जोधपुर सहित पूरे मारवाड़ में वर्चस्व कायम हो चुका था।

15वीं सदी के अंत में सिवाना भगोड़े नरेशों का शरणागृह बन गया था। 1538 ई. में मालदेव ने अपनी सेना सिवाना पर भेजी। राठौड़ डूंगरसी ने फौज को मार हटाया इस पर स्वयं मालदेव दुर्ग पर चढ़ आया। लंबे घेरे के बाद दुर्ग का पतन हुआ।[9]

1543 ई. में शेरशाह द्वारा पराजित मालदेव ने सिवाना में शरण ली। 1556 ई. में चन्द्रसेन भी सिवाना आ रहे थे। 1572 ई. में राणा रायसिंह ने सिवाना पर मुगलों की ओर से आक्रमण किया था। पत्ता ने डटकर मुकाबला किया, अतः मुगलों को घेरा उठाना पड़ा था। दूसरा प्रयत्न भी भारी हानि के साथ बेकार गया पर दुर्ग नहीं लिया जा सका।[10] तीसरी बार जलाल खां को हमला करने हेतु भेजा पर चन्द्रसेन ने अचानक आक्रमण कर उसे मार डाला।

तारीख–ए–शेरशाही के अनुसार राव मालदेव (जोधपुर नरेश) शेरशाह सूरी से परास्त होकर सिवाना की पहाड़ियों में भाग आया और यहां के दुर्ग में शरण ली। तबकात–ए–अकबरी एवं अकबर नामा में भी सिवाना दुर्ग का उल्लेख है। इनमें लिखा है कि अकबर के सेनापतियों शाह कुली खां, जलाल खां, बीकानेर नरेश रायसिंह तथा शाहबाज खां कई माह तक दुर्ग पर घेरा डाले रहे। जलाल खां मारा गया अंततः शाहबाज खां दुर्ग हासिल करने में सफल हो गया। सिवाना नगर के प्रवेश द्वार पर एक लेख लगा हुआ है जिसमें लड़कियों को न मारने की राजाज्ञा उत्कीर्ण है। दुर्ग के अतिरित साहिब राम की समाधि चारभुजा मंदिर, पाण्डवों से संबंधित भीमगोड़ा (अभयधाम) दुर्गादास पोल तथा हलदेश्वरजी का मंदिर दर्शनीय हैं।

मोकलसर :–

प्राकृतिक सौंदर्य से आच्छादित एवं गौरव गाथा सुनाते हुए प्रतीत होते उन्मुक्त पहाड़ की गोदी में बसा एक ग्राम है 'मोकलसर'। बरसात में कल–कल करते पहाड़ों से बहते झरने, तीनों तरफ से गिरिवर छप्पन की श्रृंखलाओं से अपनी खूबसूरती बिखेरता रमणीय वातावरण, प्राकृतिक संपदाओं से भरपूर, प्रकृति से अद्भूत भेंट, भीलड़ी–समदड़ी रेलवे के मुख्य मार्ग पर स्थित, बालोतरा राजमार्ग, गांव के बीचो–बीच गुजरता हुआ एवं बालोतरा जिले के गढ़ सिवाणा तहसील का मुख्य नगर तथा सिंवाची क्षेत्र में अग्रणी पहचान रखता, यह सुंदर गांव मोकलसर है। मोकलसर गांव मारवाड़ की धर्म नगरी के रूप में प्रसिद्ध है।

मोकसलर गांव वर्तमान में बालोतरा जिले की सिवाणा तहसील के अंतर्गत आता है तथा सिवाणा की स्थापना विक्रम संवत् 1011 (954 ई.) में परमाऱ राजा भोज के पुत्र वीर नारायण ने की थी। 1308 ई. में अलाउद्दीन खिलजी ने सिवाना पर आक्रमण करके इसे जीत लिया और एक मुस्लिम गवर्नर को सुपुर्द कर दिया। वीर नारायण ने इस नगर का नामकरण कुमथाना किया था, किंतु अल्लाउद्दीन खिलजी ने इसका नाम सिवाना रखा। टोलेमी ने रेगिस्तान के बीच स्थित पहाडियों में भावलिंगों के एक नगर 'जोआना' का वर्णन किया है। यह जोआना वास्तव में सिवाना है।[11]

वर्तमान जिला मुख्यालय बालोतरा से 45 किलोमीटर दूर है तथा विशाल ग्रेनाइट पहाड़ियों की तलहटी में बसा हुआ है। मोकलसर में अनेक छतरियां, मंदिर तथा अन्य स्थल दर्शनीय है। वर्तमान में कुल आबादी लगभग आठ हजार के करीब है। हिन्दू बहुल आबादी में राजपूत, ब्राह्मण, भाटी, घांची, मेघवाल आदि जातियों का समावेश है। जैन धर्म की आबादी ज्यादा है तथा वर्तमान में देश विदेश में व्यापार हेतु फैले हुए हैं। कुछ मुस्लिम परिवार भी रहते है तथा गांव में सांप्रदायिक सौहार्द का वातावरण, सामाजिक समरसता की मिसाल प्रस्तुत करता है।

केलवा राजलोक में लिखा है कि ''रावत उदा रौ मोबी बेटौ मोकल वि.सं. 1535 में सिवाणा रै आखती–पाखती रौ इलाकौ जठै दईया राजपूतां रौ कब्जौं हो, उणां नै हराय'र आपरै नांव सू 'मोकळसर' नांव रौ गांव बसायौ। मोकलसर रौ वौ 14 बरस तांई उपभोग करियौ। अर वि.सं. 1549 में देवलोक हुयौ।''[12]

अर्थात् रावत उदा का सबसे बड़ा बेटा मोकल वि.सं. 1535 (1478 ई.) सिवाणा के आस–पास का इलाका जहां दहिया राजपूतों का कब्जा था उनको हराकर अपने नाम से "मोकलसर" नाम का गांव बसाया। मोकलसर पर चौदह वर्षो तक राज किया और वि.सं. 1549 (1492 ई.) में मोकलजी का स्वर्गवास हुआ।

'उदयभांण चंपावत री ख्यात' में लिखा है कि ''रावत उदा इणरै तीन बेटां भदा, मेहरा, अर सांधौ (इणरै बेटा पंचायण नै महाराणा उदयसिंह री कानी सूं बदनौर री मौटी जागीर मिली) रौ उल्लेख हुयौ है। जद कै 'केलवा री तवारीख' मांय बीदा, भदा, सिंगा, लखमणसी, अर करमसी पांच बेटां रा नांव दिया है। मोकल रे पाट बीदा बैठो।''[13]

अर्थात् उदयभांण चंपावत की ख्यात में मोकल के तीन बेटे क्रमशः भदा, मेहरा और सांधौ (इनके बेटे पंचायण को महाराणा उदयसिंह द्वारा बदनोर की बड़ी जागीर मिली) का उल्लेख मिलता है। जबकि केलवा की तवारिख में बीदा, भदा, सिंगा, लखमणसी और करमसी पांच बेटों के नाम दिए गए हैं। मोकल के पश्चात् मोकलसर की गद्दी पर बीदा जैतमालोत बैठा था।

ऐसी किवदन्ती सुनने में आती है कि महाभारत काल में पांडवों ने अज्ञातवास की कुछ अवधि यहां की

पहाड़ियों में व्यतीत की थी। अध्यात्म योगी श्री भद्रमुनिजी इसी ग्राम की पहाड़ी की गुफा में रहकर लंबे समय तक ध्यान साधना में रत रहे थे। कालांतर में वही भद्रमुनिजी हम्पी के आश्रम में रहते हुए श्री सहजानन्द घनजी के नाम से विख्यात हुए। मिट्टी के ठंडे घडों के लिए भी मोकलसर दूर दूर तक विख्यात है। गांव के मध्य में प्राचीन काल में बनी बावड़ी स्थापत्य कला का अपने आप में एक बेजोड़ नमूना है।[14]

मोकलसर का अमरतिया बेरा (अमृत कूप) तथा पगळाव विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अमरतिया बेरा बस्ती से काफी दूर है। यह राजा सगर द्वारा बनवाया गया बताते हैं। सात सौ वर्ष पहले मोकलसर में पीने के पानी के लिए अमरतिया बेरा ही एक मात्र स्रोत था। बस्ती से दूर होने के कारण पानी लाने में काफी कठिनाई होती थी। सात सौ वर्ष पहले मोकलसर की विख्यात पगबाव का निर्माण करवाया गया। यह कस्बे के बीच में बैजनाथ महादेव मंदिर के समीप खुली जमीन के अंदर बनी हुई हैं, यह पगबाव 225 फुट लंबी एवं लगभग 15 फुट चौड़ी है जिसका प्रवेश द्वार दक्षिणामुखी है, जबकि पानी निकालने का स्थल उत्तरी किनारे पर आया हुआ है। पुराने जमाने में हाथियों, ऊंटों, बैलों, भैसों, गधों आदि से खींचकर पानी निकाला जाता था। पगबाव का पानी वाला हिस्सा गोलाकार बना हुआ है जिसमे से पानी खींचकर बाहर निकाला जाता था। वहां बाहर की तरफ पानी के लिए कोठा, खेली, अरहट आदि बने हुए हैं।[15]

पगबाव में दक्षिण की तरफ से प्रवेश किया जाता है। 26 सीढ़ियां नीचे उतरने के बाद बाव का पहला तोरण आता है, फिर दूसरे खंड में उतरने के लिए 18 सीढ़ियां उतरते हैं जिस पर दो तोरण बने हुए हैं। इन दो तोरण खंड से 21 सीढ़ियां नीचे उतरने पर तीन तोरण और फिर 18 सीढ़ियां नीचे उतरने पर चार तोरण वाला खंड आता है। इस प्रकार कुल 83 सीढ़ियां नीचे उतरने पर पानी की सतह आ जाती है। बाव के इन चार सीढ़ियों वाले खंडों पर कुल दस तोरण बने हुए हैं। तोरण द्वार साधारण पत्थरों को जोड़कर बनाए गए हैं जिनके ऊपरी दोनों किनारों पर साधारण आकार की गोलाकार शिल्पकृति उकेरी गई हें तोरणों के निचले भागों में दोनों तरफ छोटे–छोटे आले बने हुए हैं। पगबाव की गहराई 65 फुट से अधिक है। पानी की गहराई भी बहुत है। पानी से बाव की ऊंचाई गोल आकार में पक्की ईंटों से बनाईं गई हैं। एक–एक गोल घेरा, चार फुट की ऊंचाई का है और इस प्रकार के पानी की सतह से बाव की गोलाकार ऊंचाई मुख तक 16 घेरे बने हुए हैं।[16]

गांव के भीतर संगमरमर पाषाण की नक्काशीदार जालियों से सुशोभित श्री सहस्त्रफणा पार्श्वनाथ जिनालय मोकलसर श्री जैन संघ का प्रमुख आस्था–केंद्र हैं। इस मंदिरजी की प्रतिष्ठा संवत् 2011 वैसाख सुदि 5 को प्रखर, प्रभावी साहित्याचार्य भट्टारक 1008 श्री तीर्थेद्रसुरीश्वरजी म.सा की पावन निश्रा में सुसंपन्न हुई थी। मूलनायक श्री सहस्त्रफणा पार्श्वनाथ की प्रतिमाजी 16वीं शताब्दी की है एवं प्रथम तल पर विराजमान श्री नेमिनाथ प्रभु की श्यामवर्णीय प्रतिमाजी 10वीं शताब्दी की है।[17] इस मंदिर की प्रतिष्ठा के बाद मोकलसर वासियों का निरन्तर चहुँमुखी विकास होता गया।

मोकलसर में श्री चामुंडा माताजी मंदिर, श्री खेतलाजी, श्री मामा–भांजा एवं मामीजी मंदिर, श्री शनेश्वरजी मंदिर, श्री राणी भटियाणी एवं सवाईसिन्हजी मंदिर, श्री जोगमाया मंदिर श्री वैजनाथ महादेवजी, श्री बिल्लेश्वर महादेव जी मंदिर, श्री ठाकुरजी मंदिर, श्री हनुमानजी मंदिर आदि अनेक दर्शनीय एवं आस्था के केंद्र इस गांव की धार्मिक विरासत को मजबूत आधार प्रदान करते हैं।[18]

चिकित्सा, शिक्षा, जीवदया, मानवसेवा, धर्मराधना आदि क्षेत्रों में जैन समाज की उदारता एवं सक्रियता

अपने आप में बेजोड़ हैं। गांव में निर्मित अनेक समाजोपयोगी एवं जनपयोगी भवन व इमारतें मोकलसर के जैन परिवारों की उदारता का खुलकर परिचय देती है। अनेक चारित्र रत्नों ने इस माटी में जन्म लिया है। यहां के प्रवासी देश–विदेश के विभिन्न प्रदेशों में व्यापारिक, औद्योगिक शैक्षणिक, चिकित्सा एवं तकनीकी क्षेत्रों में कामयाब होकर अपनी मातृभूमि का नाम ऊंचा कर रहे हैं।

संदर्भ :–

1. मिश्र, रतनलाल – राजस्थान के दुर्ग, 2012, पृ. 86
2. वही – पृ. 86
3. वही – पृ. 88
4. नैणसी, मुंहता ; मारवाड़ रा परगनां री विगत, भाग–2, पृ. 215
5. गहलोत, जगदीश सिंह ; मारवाड़ राज्य का इतिहास, पृ. 242
6. बाड़मेर गजेटियर, पृ. 31
7. मिश्र, रतनलाल – राजस्थान के दुर्ग, 2012, पृ. 89
8. नैणसी, मुंहता ; मारवाड़ रा परगनां री विगत, भाग–2, पृ. 216
9. मिश्र, रतनलाल – राजस्थान के दुर्ग, 2012, पृ. 8
10. बाड़मेर गजेटियर, पृ. 36
11. गुप्ता, मोहनलाल–जोधपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, 2013, पृ. 268
12. (i) भाटी, विक्रमसिंह – राव जैतमाल, 2005, पृ. 48
    (ii) केलवा राजलोक, क्र 4, पृ. 12
13. भाटी, विक्रमसिंह – राव जैतमाल, 2005, पृ. 48
14. साक्षात्कार श्री सुरेश कुमार सोलंकी मोकलसर, से प्राप्त जानकारी के अनुसार।
15. गुप्ता, मोहनलाल – जोधपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, 2013, पृ. 268
16. वही – पृ. 269
17. साक्षात्कार, श्री सुरेश कुमार सोलंकी मोकलसर, से प्राप्त जानकारी के अनुसार।
18. साक्षात्कार, श्री सुरेश कुमार सोलंकी मोकलसर, से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 95-96

पाश्चात्य परिप्रेक्ष्य में स्त्री चिंतन की परंपरा

आरती यादव
पी.एच.डी शोधार्थी, अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय (हैदराबाद) तेलंगाना–500007

पश्चिमी देशों में आज स्त्री जिस सुदृढ़ अवस्था में दिखाई देती है, उतनी वह स्वतंत्र आरम्भिक काल में भी नहीं थी। मनुष्य के आदिम अवस्था से लेकर मध्ययुग तक स्त्री विभिन्न बंधनों में जकड़ी रही। मध्ययुग के अंत तक आते–आते पश्चिमी देशों में स्त्री को अपने अस्तित्व की पहचान होने लगी। जिसके फलस्वरूप पूरे विश्व में स्त्री चिंतन की लंबी परंपरा की शुरूआत हुई। पाश्चात्य सभ्यताओं में सृष्टि के प्रारंभ से ही स्त्री की उत्पत्ति को दोयम दर्जे का माना गया। ऐसा माना जाता है कि स्त्री की उत्पत्ति पुरुष के बाद हुई। पाश्चात्य धारणाओं में पहले पुरुष बनाया गया तत्पश्चात स्त्री बनायी गयी। आदिम समाज में स्त्री को घर–परिवार की देखभाल और पुरुष को कबीले की रक्षा तथा शिकार की जिम्मेदारी सौंपी गयी। स्त्री में जो प्रजनन क्षमता थी वही उसके दुर्बलता का कारण भी बना। जैसे सीमोन द बोउवार के अनुसार– "स्त्री मादा पशु की तरह अपनी शारीरिक सीमाओं में प्रजनन–क्षमता के कारण सदा के लिए कैद कर ली गयी"। परंतु आदि काल में स्त्री पुरुष के इतना अधीन भी नहीं थी कि जिसे गुलाम कहा जा सकता था। कृषि युग में स्त्री को उसकी प्रजनन क्षमता के कारण अत्याधिक महत्व प्राप्त हुआ। क्योंकि खेती के लिए अधिक मानव श्रम की आवश्यकता महसूस होने लगी। स्त्री के महत्व के कारण वह अपने कबीले में महत्वपूर्ण स्थान पा गयी, परंतु आगे चलकर पुरुष को अपनी क्षमता का अहसास होने पर उसने स्त्री का शोषण शुरू कर दिया। सीमोन द बोउवार लिखती हैं– "प्राचीन समाज ने औरत की यह अधीनस्ता इतने खुले रूप में स्वीकारी नहीं थी, किन्तु ज्यों–ज्यों पुरुष का आत्मगौरव बढ़ा, प्रकृति का शोषण चालाकी से करने के साथ ही वह युक्तिसंगत ढंग से औरत का शोषण करने लगा"। मध्ययुग में भी स्त्री को पुरुष की तुलना में दोयम दर्जा ही दिया गया। पितृसत्ता द्वारा बनाया गया विवाह संस्था स्त्री को अधीन रखने और शुद्ध वंश वृद्धि के लिए ही तैयार किया गया।

आदिम युग से मध्य युग तक स्त्री पर जो बंधन लादे गए वे सभी व्यवस्था के साथ विकसित भी होते गए, परंतु मध्ययुग के अंत होते–होते स्त्री विभिन्न क्षेत्रों में अपने को सहभागी बनाने लगी और सत्रहवीं शताब्दी में स्त्रियों ने कला और साहित्य में काफी योगदान दिया। धीरे–धीरे अठारहवीं शताब्दी तक आते–आते स्त्री के जीवन में विकास होने लगा, परंतु स्त्री के जीवन में शिक्षा की कमी रह गयी थी। पाश्चात्य जगत में स्त्रियों को अपने अस्तित्व के प्रति जागृति फ्रांसीसी क्रांति के साथ आयी क्योंकि उस समय तक स्त्रियों ने भी विभिन्न क्षेत्रों के साथ–साथ राजनीतिक क्षेत्रों में खुलकर हिस्सा लेने लगी थी। धीरे–धीरे स्त्री संगठन तथा स्त्री अधिकार, स्वतंत्रता और समानता की मांग उठायी गयी। पश्चिम में इन आंदोलनों का प्रारंभ बीसवीं शताब्दी में हुआ।

अमेरिका और ब्रिटेन जैसे देशों में मार्क्सवादी आंदोलनों की शुरुआत हुई जिससे स्त्रियों में आंदोलनों को आगे ले जाने का आत्मविश्वास आया। जिससे स्त्री के अधिकारों के मांगों पर जोरदार आंदोलन हुए। पश्चिम में स्त्रीवाद की कई धाराएं बनी जैसे– लिबरल फेमिनिजम, रेडिकल फेमिनिजम, मनोविश्लेषणवादी स्त्रीवाद, मार्क्सवादी स्त्रीवाद आदि।

आज जिस स्त्री चिंतन की चर्चा बार–बार की जा रही है उस प्रकार का स्त्री चिंतन पाश्चात्य साहित्य में पहली बार मेरी वोलस्टन क्राफ्ट की पुस्तक 'स्त्रियों के अधिकारों का औचित्य–प्रतिपादन' में दिखाई देता है। यह पुस्तक नारी आंदोलन की महत्वपूर्ण किताब मानी जाती है। जिसमें इन्होंने रूसो के विरुद्ध लिखकर पूरे यूरोप का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया था। मेरी वोलस्टन क्राफ्ट ने स्पष्ट किया कि स्त्रियाँ बौद्धिक मामलों में पुरुषों से कमजोर नहीं होती हैं। उन्हें भी समान शिक्षा और समान अधिकार मिलना चाहिए। उन्होंने समाज के उस व्यवस्था पर सवाल उठाये जो स्त्रियों की दोयम दर्जे की स्थिति के लिए जिम्मेदार थी और साथ ही समाज में स्त्री–पुरुष समानता के दोहरे मापदंड पर भी सवाल उठाये। मेरी वोलस्टन क्राफ्ट की तरह स्त्री चिंतन को आधार मानकर जॉन स्टुअर्ट मिल के द्वारा 'द सब्जेक्शन ऑफ वुमैन' पुस्तक लिखा गया जिसका हिन्दी में अनुवाद 'स्त्रियों की पराधीनता' नाम से किया गया। यह पुस्तक लिबरल फेमिनिजम के आधार पर लिखा गया है। इस पुस्तक में स्पष्ट किया गया है कि स्त्रियां बौद्धिक मामलों में पुरुषों से पीछे कभी नहीं रही। स्त्रियों को कभी अपनी बौद्धिक क्षमता दिखलाने का अवसर नहीं दिया गया और समाज द्वारा यह कहा गया की स्त्रियां पुरुषों से बौद्धिक रूप में कमजोर होती हैं। इसलिए उन्हें इस प्रकार का काम नहीं सौंपा जाता है। जे.एस.मिल इस मान्यता का जोरदार खण्डन करते हैं, उनका मानना था कि "पुरुषों और स्त्रियों के बीच नैतिक और बौद्धिक अन्तर भले ही कितने बड़े स्तर के और अपरिवर्तनीय प्रतीत हों, पर इन अंतरों के प्राकृतिक होने का प्रमाण नहीं मिलता"। स्त्रियों की सामाजिक पराधीनता उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व और सर्जनात्मकता को कुचल देती है। उन्हें स्त्रियों की गुलामी का प्रमुख कारण अशिक्षा और आर्थिक रूप से पुरुष पर निर्भर रहना लगता है। स्त्री–चिंतन की परंपरा में वोलस्टन क्राफ्ट की पुस्तक के बाद जे.एस.मिल की 'स्त्रियों की पराधीनता' पुस्तक स्त्री–चिंतन की महत्वपूर्ण पुस्तक है।

पाश्चात्य चिंतन परंपरा में पाश्चात्य साहित्य ने नारीवादी विमर्श पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाया है। साहित्य के माध्यम से व्यक्त विचारों के कारण स्त्री अपने अस्तित्व निर्माण का प्रयास करने लगी और पश्चिमी समाज की बात करें तो नारीवादी आंदोलन और चिंतन का अच्छा बुरा दोनों प्रभाव दिखाई पड़ता है। समाज में औरतों को आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई, सामाजिक स्थिति मजबूत हुई और कई सकरात्मकता प्रभाव दिखाई देते हैं, परंतु खुले यौन–संबंध का दुष्प्रभाव भी समाज पर बहुत ज्यादा दिखाई पड़ता है। जिसके कारण परिवार लगभग वहाँ समाप्त होने के कगार पर है। आवश्यकता है वहाँ ऐसे स्त्री–विमर्श की जो प्रतिद्वंदी न माने बल्कि सहयोगी मानकर स्त्री–विमर्श की लड़ाई को सामाजिक सरोकारों से जोड़कर वहाँ की संस्कृति को बचा सके।

सन्दर्भ सूची :–

1. सिमोन द बोउवार अनुवादक–प्रभा खेतान, स्त्री उपेक्षिता, पृ.सं.–50
2. वही पृ.सं.–53
3. जॉन स्टुअर्ट मिल अनुवादक–युगांक धीर, स्त्री और पराधीनता, पृ.सं.–33

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 97-101

चम्बल परियोजना की दांयी बांयी मुख्य नहरों का हाड़ौती प्रदेश की संस्कृति के विकास पर प्रभाव

Impact of right and left main canals of Chambal project on the development of culture of Hadoti region

Devendra Meena
Research Scholar, Department of Geography, Govt. Arts College, Kota, Rajasthan

प्रस्तावना –

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का एक महत्वपूर्ण स्थान है। परंतु भारत की जलवायु अर्द्ध शुष्क मानसूनी होने के कारण राजस्थान के हाड़ौती प्रदेश में भी यही जलवायु है जिसके कारण यहाँ की कृषि मानसून पर निर्भर है। मानसून के पश्चात यहाँ कृषि कार्य के लिए सिंचाई की आवश्यकता होती है जिससे हाड़ौती प्रदेश में चम्बल नदी पर बने कोटा बैराज बाँध से निकलने वाली दांयी–बांयी नहरों ने इस प्रदेश की संस्कृति के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। चम्बल नदी का ही प्रताप है कि इस प्रदेश के कई जिलों में पेयजल की समस्या का स्थायी समाधान हो पाया है। हाड़ौती प्रदेश का 2.26 लाख हैक्टेयर से ज्यादा क्षेत्रफल चम्बल की नहरों के कारण सिंचित हो रहा है। यह क्षेत्र कृषि उत्पादन में अग्रणीय बन गया है। चम्बल रो आयी हरित क्रांति एवं पीली क्रांति का ही परिणाग है कि हाड़ौती प्रदेश राजस्थान राज्य गें गंगानगर के बाद दूसरा बड़ा कृषि उत्पादक क्षेत्र बन गया है। इसी से कोटा में सेठ भामाशाह कृषि उपज मंडी एशिया की सबसे बड़ी मंडी की स्थापना की गई है।

अध्ययन क्षेत्र –

चम्बल की दांयी–बांयी मुख्य नहर कोटा बैराज $25^0 26'$ पूर्वी अक्षांश और $75^0 76'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। दांयी–बांयी मुख्य नहर चम्बल से सिंचाई परियोजना के प्रथम चरण में बनाई गई थी। चम्बल सिंचित क्षेत्र परियोजना का प्रारम्भ 1953 में होकर 1960 में जल उपलब्धि के साथ 1971 में पूरा हुआ। कोटा बैराज से निकली 372 कि.मी. दांयी मुख्य नहर कोटा, बारां होती हुई मध्य प्रदेश राज्य की 1.27 लाख हैक्टेयर भूमि को सिंचित करती है। बांयी मुख्य नहर की दो शाखाएं बून्दी एवं कापरेन हैं जो 168 कि.गी. लम्बी है जो हाड़ौती प्रदेश के बून्दी जिले के 1.02 हैक्टेयर भूगि को रिंचित करती है। वर्ष 1960 से इन नहं से सिंचाई के लिए जल उपलब्ध कराया जाने लगा। वर्ष 1962 में परियोजना क्षेत्र में विश्व बैंक के साथ करार होने से कृषि समबन्धित नियम बनाये गये। चम्बल परियोजना क्षेत्र 4.84 लाख हैक्टेयर क्षेत्र कोटा, बारां एवं बून्दी जिलों में जिसमें से 2.29 लाख हैक्टेयर क्षेत्र. की सिंचाई योग्य है। परियोजना की नहर प्रणाली 2.29 लाख हैक्टयर भूमि हाड़ौती प्रदेश में एवं इतनी ही भूमि मध्य प्रदेश में सिंचित करती है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. हाड़ौती प्रदेश में नहर सिंचाई की स्थिति व विस्तार का विश्लेषण करना,
2. हाड़ौती प्रदेश में नहर सिंचाई का पारिस्थितिकी का तुलनात्मक अध्ययन करना,
3. नहर प्रणाली योजना के पश्चात हाड़ौती प्रदेश के आर्थिक सामाजिक व सांस्कृतिक आदि क्षेत्र में विकास की क्या संभावनाऐं हो सकती है,

दांयी–बांयी नहर प्रणाली की मुख्य विशेषताएँ –

तालिका–1 – राजस्थान में चम्बल सिंचित क्षेत्र विकास की नहरों का विवरण

क्र. सं.	विवरण	दांयी मुख्य नहर	बांयी मुख्य नहर	योग	इकाई
1	उद्गम स्थान	कोटा बैराज के दांये किनारे से	कोटा बैराज के बांये किनारे से		
2	निस्सानरण क्षमता	6656	1500	8156	क्यूसेक
3	सिंचाई योग्य सिंचित क्षेत्र	127000	102000	229000	हैक्टेयर
4	प्रस्तावित सिंचाई क्षमता	रबी–55 खरीफ–21	रबी–55 खरीफ–21	रबी–55 खरीफ–21	प्रतिशत
5	मुख्य नहर की कुल लम्बाई	124	2.59	126.59	कि.मी.
6	मुख्य नहर से निकल रही ब्रांच नहर की संख्या एवं उनकी कुल लम्बाई	7 (198)	3 (163)	10 (361)	कि.मी.
7	वितरिकाओं की संख्या एवं उनकी कुल लम्बाई	27 (268)	27 (343)	54 (611)	कि.मी.
8	लघु वितरिकाओं की संख्या एवं उनकी कुल लम्बाई	356 (910)	180 (605)	536 (1515)	कि.मी.
	कुल नहरों की संख्या	390 (1500)	210 (1113.59)	600 (2613.59)	कि.मी.
9	कुल आउटलेट की संख्या	3802	3211	7013	
10	लाभान्वित जिले	कोटा एवं बारां	कोटा एवं बूंदी		
11	लाभान्वित तहसील	लाड़पुरा, दीगोद, अंता, मांगरोल, पीपल्दा	लाड़पुरा, केशोराय पाटन, बूंदी, इन्द्रगढ़		
12	लाभान्वित ग्रामों की संख्या	473	284	757	
13	कार्यरत खण्डों की संख्या	कोटा मुख्यालय, अन्ता मुख्यालय, इटावा मुख्यालय	बूंदी मुख्यालय, के. पाटन मुख्यालय	5	
14	कार्यरत उपखण्डों की संख्या	9	6	15	
15	जल उपयोक्ता संगमों की संख्या	159	123	282	

स्त्रोत – कृषि विभाग, राजस्थान सरकार, वार्षिक प्रतिवेदन रिपोर्ट

चम्बल नहर प्रणाली के उद्देश्य –

1. चम्बल नहर प्रणाली का मूल उद्देश्य इस प्रदेश की कृषि का मानसून पर निर्भरता को कम करते हुए उचित समय पर समुचित सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराना एवं इस प्रदेश के कृषि उत्पादन में वृद्धि करना।
2. नहर प्रणाली का दूसरा उद्देश्य उद्योगों को आवश्यकतानुसार जलापूर्ति या पेयजल उपलब्ध कराना।

शोध विधितंत्र –

प्रस्तुत आलेख विश्लेषणात्मक एवं वर्णात्मक प्रकृति है। अनुसंधान करने के लिए उपलब्ध साहित्य का अध्ययन किया गया। तद्पश्चात प्राथमिक समंकों के लिए नहर प्रणाली क्षेत्रों में जाकर साक्षात्कार किया एवं द्वितीयक समंकों के लिए विभिन्न भौगोलिक विभागों राष्ट्रीय, राज्य सिंचाई एवं प्रबंध विभागों, सी.ए.डी. विभाग (कोटा) की वार्षिक रिपोर्ट तथा सी.ए.डी. विभाग की आधिकारिक वेबसाइट तथा समाचार पत्र–पत्रिकाऐं आदि से सूचना प्राप्त की जिसे समुचित क्षेत्र का प्रतिनिधित्व हो सके।

नहर प्रणाली से हाड़ौती प्रदेश का विकास एवं लाभ –

भारत सरकार द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही चरणबद्ध विकास प्रक्रिया अंतर्गत बड़े–बड़े बाँधों एवं नहरों का निर्माण करवाया गया। उपलब्ध प्रकृति जल का कुशल प्रबंधन एवं वितरण कार्य नदी परियोजनाओं के माध्यम से जनहित में किया गया। चम्बल नदी परियोजना के अन्तर्गत गांधी सागर, प्रताप सागर, जवाहर सागर और कोटा बैराज का निर्माण किया गया। चम्बल परियोजना कोटा संभाग (हाड़ौती प्रदेश) के तीन जिले क्रमशः कोटा, बारां व बून्दी में वर्ष 1974 से संचालित की जा रही है। हाड़ौती प्रदेश में सिंचाई हेतु यहाँ से दांयी–बांयी मुख्य नहर निकाली गई है। जिनकी निस्सारण क्षमता क्रमशः 6656 क्यूसेक एवं 1500 क्यूसेक हैं। दांयी मुख्य नहर 124 कि.मी. राजस्थान के (कोटा, बारां) में एवं 248 कि.मी. मध्य प्रदेश की सीमाओं में जल प्रवाहित करती हैं। दांयी मुख्य नहर का राजस्थान में सिंचित क्षेत्र 1.27 लाख हैक्टेयर है बांयी मुख्य नहर का 2.59 कि.मी. लम्बी है जो कि सिर्फ राजस्थान (कोटा, बून्दी) में ही सिंचाई करती है एवं इसका सिंचित क्षेत्र 1.02 लाख हैक्टेयर है वर्तमान में कृषकों को रबी की फसल के लिए सामान्यतः माह अक्टूबर से मार्च तक पानी उपलब्ध कराया जाता है।

रबी एवं खरीफ में कृषि फसलों के उत्पादन के साथ–साथ यहाँ फल, सब्जी, मसालें, औषधी एवं फूलों की बागवानी तथा कृषि पर आधारित मधु मक्खी पालन के क्षेत्र में भी काश्तकार आगे आये हैं।

चम्बल और उसकी नहर प्रणाली से हाड़ौती प्रदेश की सिंचित कृषि भूमि के उत्पादन में वृद्धि हुई है। दांयी–बांयी नहरों में हाड़ौती प्रदेश की कृषि भूमि अर्थव्यवस्था की एक निश्चित विशेषता बन गई है। इस प्रकार चम्बल नहर प्रणाली हाड़ौती प्रदेश के आवृत अकालों के विरूद्ध एक बीमा सिद्ध हुई है।

तालिका–2 – चम्बल परियोजना क्षेत्र में कुल बोया गया क्षेत्र

जिला	2010-11	2015-16	2020-21
बारां	609615	699073	626030
बूंदी	424409	499129	508914
कोटा	457725	326108	515768
कुल	1491749	1524310	1650712

स्त्रोत – कृषि विभाग, राजस्थान सरकार, वार्षिक प्रतिवेदन रिपोर्ट

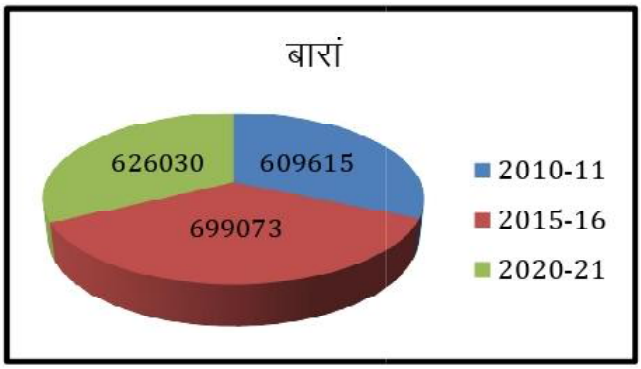

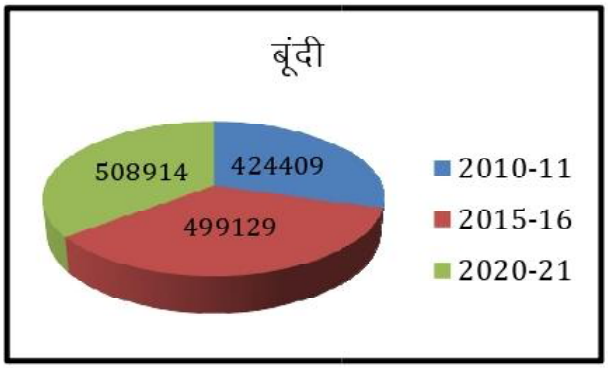

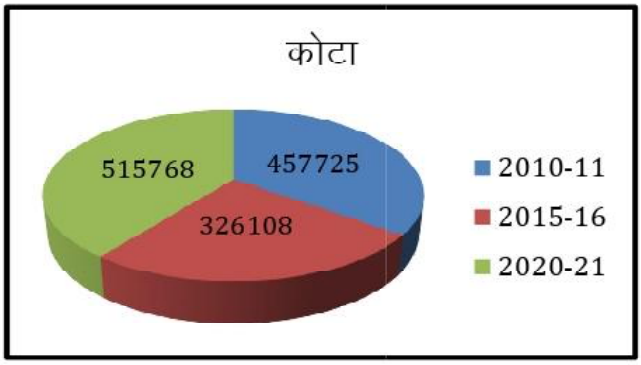

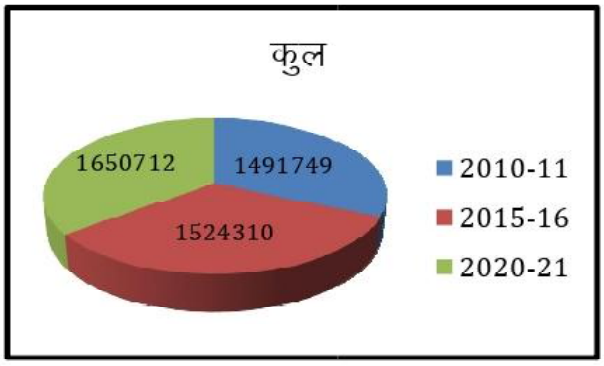

नहर प्रणाली क्षेत्र में हाड़ौती प्रदेश के तीन जिले बारां, बून्दी और कोटा आता हैं। जिनमें कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत कुल बोया गया क्षेत्र 2015 से 2020 तक के आँकड़ें दर्शाये गये हैं।

तालिका के आधार पर नहर प्रणाली क्षेत्र 2010–11 में कुल 14912749 हेक्टेयर कृषि भूमि में फसल बोयी गई थी जो कि बढ़कर सन 2015–16 में 1524310 हेक्टेयर क्षेत्र में बोयी जोकि सन् 2010–11 की तुलना में 2.18 प्रतिशत अधिक था। सन् 2020–21 में कुल क्षेत्र 1650712 हेक्टेयर पर कृषि कार्य किया गया जो कि सन् 2015–16 की तुलना में 8.29 प्रतिशत अधिक था। इसी आधार पर नहर प्रणाली विकास से सम्पूर्ण क्षेत्र में लगातार कृषि क्षेत्र में वृद्धि होती जा रही है।

नहर प्रणाली क्षेत्र में आर्थिक–सामाजिक विकास की संभावनाऐं –

कई विकास अर्थशास्त्रीयों एवं नीति निर्धारकों ने आर्थिक विकास की प्रक्रिया में नये श्रम शक्ति हेतु गैर कृषि क्षेत्र को उत्पादक नियोजक स्वीकार किया। परन्तु बाद के दशकों में विकास के लिए गैर कृषि क्षेत्र को महत्व प्रदान करने की नीति ने नीति निर्धारकों को निराश किया। भारत जैसे विकासशील देश में गैर कृषि क्षेत्र अधिक पूंजीगत क्षेत्र है। इसलिए यहाँ अतिरिक्त श्रम शक्ति के समावेशन की संभावना कम हैं अतः अब यह सामान्य मान्यता होती जा रही है कि आगामी एक या दो दर्शकों में कृषि को निवेश योग्य अतिरिक्त रोजगार के अवसर खोजने होंगे। चूंकि कृषि अन्य विस्तारोन्मुख क्षेत्रों को निवेश योग्य अतिरिक्त भी प्रदान करती है।

अतः ऐसी व्यूह रचना का निर्माण किया जाये जिससे घरेलू खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि हो एवं कृषि में श्रमिकों का गहन उपयोग हो। कृषि के सहायक क्षेत्रों में ही अतिरिक्त श्रम शक्ति को रोजगार उपलब्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त कृषि में श्रम उपयोग बढ़ाने के लिए सिंचाई सुविधाओं का विस्तार आवश्यक मानकर विभिन्न योजनाओं में कृषि एवं सिंचाई को प्राथमिकता दी गई है।

सुझाव –

1. लगातार बढ़ती मानव आबादी के कारण गहन कृषि के बढ़ते प्रचलन के लिए सिंचाई की आवश्यकता के और बढ़ाने तथा उपज प्राप्त करने के लिए सिंचाई प्रबंधकों द्वारा इस तथ्य को मद्देनजर रखते हुए आवश्यक जल की मात्रा को बढ़ाया जाना चाहिए।

2. नहर प्रणाली क्षेत्र में उन्नत फसल चक्र से कृषक अधिक उपज चारा प्राप्त करते है। अतःग्रामीण क्षेत्रों में डेयरी उद्योग की स्थापना को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जिससे कृषक पशुपालन से भी आय प्राप्त कर सकें।
3. अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश कृषक लघु एवं सीमांत कृषक जो आर्थिक दृष्टि से कमजोर है अतः लघु कृषकों को कृषि से संबंधित संसाधनों की पूर्ति हेतु द्वितीय अनुदान या सहायता प्रदान की जानी चाहिए।
4. कुशल जल प्रबंध कृषि उत्पादन में वृद्धि का आधार है अतः नहरी सिंचाई तंत्र को और सुदृढ़ किया जाना चाहिए।
5. सामाजिक–'आर्थिक प्रभावों के विश्लेषण के लिए एवं कृषि में महिलाओं व युवाओं के लिए अवसरों को बढ़ाने हेतु सामाजिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया जाए।
6. महिलायें घर, कृषि व्यवस्था एवं पशुपालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है अतः क्षेत्र में ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा, प्रशिक्षण एवं स्वास्थ्य सेवाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष –

हाड़ौती प्रदेश की अर्थव्यवस्था पूरी तरह से कृषि व्यवस्था पर निर्भर है। कृषि के लिए सिंचाई अत्यावश्यक थी जिससे चंबल परियोजना की दांयी–बांयी नहर प्रणाली ने पूरा किया। बढ़ती मानवीय आबादी के कारण गहन कृषि व्यवस्था को पूरा करने में नहर प्रणाली का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। नहर प्रणाली ने क्षेत्र की कृषि व्यवस्था को उन्नतता दिलाई वहीं उद्योगों के विकास में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तथा कभी हद तक पेयजल की व्यवस्था को भी इस क्षेत्र में नहर प्रणाली ने संभाला है। यह कह सकते हैं कि हाड़ौती प्रदेश के आर्थिक और सामाजिक विकास में चम्बल नहर प्रणाली की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

संदर्भ –

1. Ajmera, S.K. (1998) – "Cost Sharing Capacity of SSD in Chambal Command Area", Key note papers, National seminar on social-economical aspects of surface drainage and water management, vol.II, RAJAD, Kota (Raj.)
2. Bhargava, D.K. (2014) – "Chambal River Valley Project : A Boon to Power Generation in Rajasthan" key note paper, All India seminar on development and management of multipurpose river valley projects in India, Kota (Raj.)
3. Dadhich, L.K. (2014) – "Environmental Impacts Assessment of Chambal Valley River Basin" key note paper, All India seminar on development and management of multipurpose river valley projects in India, Kota (Raj.)
4. Joshi, P.K. and Agnihotri, A.K. (1984) – "An Assessment of the Adverse Effects of Canal Irrigation in India", Research paper, Indian Journal of Agricultural Economic, Vol. XXXIX, No.3.
5. Annual Report, C.A.D., Kota (Raj.)

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 102-108

मध्यकालीन हिंदी काव्य में राष्ट्रीयता

छविन्दर कुमार
शोधार्थी, पीएच.डी. हिन्दी, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय धर्मशाला।

मध्यकालीन भक्ति साहित्य का मनुष्य के साथ शाश्वत संबंध रहा है। साहित्य मनुष्य की अनुभूति का एक समृद्ध कोश एवं ग्रंथ है जिससे मनुष्य सात्विक विचारों को ग्रहण कर अपने जीवन को सरस बनाकर व्यतीत करता है और वही दूसरी तरफ मनुष्य की अनुभूति को संग्रहित कर उसकी विशिष्टता को समाज के सदृश लाता है। कोई भी मनुष्य कितना भी बड़ा विद्वान क्यों न हो, वह तब तक निरर्थक है जब तक साहित्य उसकी अनुभूति को संग्रहित कर अभिव्यक्त नहीं करेगा। चूंकि मनुष्य और साहित्य एक–दूसरे के पूरक हैं और एक के अभाव में दूसरा अस्तित्व हीन है। सच्च कहें तो जैसे मनुष्य के शरीर में आत्मा का वास है वैसे ही साहित्य रूपी ग्रंथ के शरीर में मनुष्य रूपी आत्मा का वास है।

भारतीय वांग्मय में राष्ट्र शब्द का प्रयोग वैदिक काल से ही होता आया है। यजुर्वेद में राष्ट्र में देहि और अथर्ववेद में (त्वा राष्ट्र भृत्याय) में राष्ट्र शब्द समाज के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। मनुष्य की सहज सामुदायिक भावना ने समूह को जन्म दिया जो कालांतर में राष्ट्र के रूप में विकसित हुआ। राष्ट्र एक समुच्चय है और राष्ट्रीयता एक विशिष्ट भावना है।"[1] जिस जन समुदाय में एकता की एक विशिष्ट लहर हो उसे राष्ट्र कहते हैं। आर्यों में एकता का बाह्य रूप ही नहीं बल्कि आंतरिक रूप भी देखने को मिलता है। परस्पर सहयोग तथा संस्कारित सहानुभूति की भावना से ही राष्ट्रीय भावना का विकास होता है। साहित्य सामुदायिक विकास में सहायक होता है और सामुदायिक भावना राष्ट्रीय चेतना का ही एक महत्वपूर्ण अंग है।

भारतीय मनीषियों का चिंतन मनन सूक्ष्म और विचार उद्धत रहा है उन्होंने "वसुधैव कुटुंबकम्' मंत्र से संपूर्ण ब्रह्मांड को एकजुट करने का प्रयास किया। "संपूर्ण विश्व एक परिवार है" सिद्धांत को लागू करना एक असाधारण व कठिन कार्य था क्योंकि इससे पहले समाज में व्याप्त जातियों, धर्मों व संप्रदायों से ऊपर उठकर नूतन दृष्टिकोण पर कार्य करना था। चुनौतियां अधिक थी फिर भी भारतीय मनीषियों ने भरपूर प्रयास कर यह कार्य किया जो कि एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। यही कारण है कि आज विश्व भारतीय संस्कृति का अनुकरण कर रहा है। हिंदी साहित्य पर यदि ध्यान आकर्षित किया जाए तो आदिकाल से इसका वैसे प्रारंभ माना जाता है जो कि एक हजार ईस्वी के आसपास का समय है लेकिन इससे पूर्व हजारों वर्षों से भारत में साहित्य लिखा जा रहा है।

वेद, उपनिषद, रामायण व महाभारत जैसे असंख्य ग्रंथ है। लेकिन सुविधा की दृष्टि से विद्वानों ने हिंदी साहित्य का सूत्रपात आदिकाल से ही स्वीकार किया है क्योंकि इसमें हिंदी किसी न किसी रूप में हमें देखने

को मिलती हैं। हिंदी साहित्येतिहास के विकासात्मक वर्गीकरण में द्वितीय चरण को मध्यकाल की संज्ञा दी गई है तथा इसे पुनः दो भागों में विभाजित कर पूर्व मध्यकाल एवं उत्तर मध्यकाल नाम दिए गए हैं। पूर्व मध्यकाल को भक्ति काल कहा गया और उत्तर मध्यकाल को रीति काल नाम दिया गया है। भक्ति काल में धार्मिक दृष्टिकोण की प्रबलता ज्यादा दिखाई देती है लेकिन उसे राष्ट्र शून्य भी नहीं कहा जा सकता है। यह समय विदेशी और विजातीय मुस्लिम आक्रांताओं का रहा है।

संतों की सजग चेतना के परिणामस्वरूप प्रबुद्ध लोगों का ध्यान आत्मनिरीक्षण और परिस्थिति परीक्षण की ओर आकृष्ट हुआ और तदनुसार आत्मरक्षार्थ उपाय करना आवश्यक प्रतीत होने लगा। हिंदू जनता मुस्लिम आक्रमणों से भयभीत होने की अपेक्षा अधिक सजग और सचेत हो गयी काशी और मथुरा जैसे धार्मिक स्थलों में बड़े बड़े मंदिरों को ध्वस्त किए जाने पर छोटे छोटे–छोटे मंदिरों की बाढ़ सी आ गई तथा घर–घर में देवी–देवताओं की प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हो गई। यह अपने ढंग की एक सामूहिक जागृति ही थी। इस प्रकार सामूहिक चिंतन और व्यवहार का एक सुयोग मिला। आपसी भेदभाव को कम करने के लिए सुगम मार्ग ढूंढे जाने लगे और परस्पर टकराव धीरे–धीरे समाप्त होने लगे। लोगों में व्यक्तिगत स्वार्थों के स्थान पर लोक चेतना का भाव जागृत हुआ। जिस दृष्टिकोण की प्रबलता है वो परोक्षरूप में ही है। यह समय विभिन्न धार्मिक आंदोलनों का ही माना जाता है। राजनीतिक संघर्षों में इनकी कोई रूचि नहीं थी फिर भी इस काल में संतों ने राष्ट्रीय भावों को कुछ वाणी देने की कोशिश अपनी भक्ति पूर्ण रचनाओं में की है। इनमें रैदास, कबीर, गुरूनानक, दादूदयाल, मलूकदास व पलटुसाहब इत्यादि प्रमुख हैं। इन्होंने धर्म जाति, वर्ग वैमनस्य से ऊपर उठकर भारतीयों में राष्ट्र प्रेम जागृत किया है। भक्ति काल के मूर्धन्य संत कबीर दास का आविर्भाव ऐसे समय में हुआ जब समाज अनेक बुराईयों से ग्रस्त था।

छुआछूत, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता का बोलबाला था और हिंदू–मुस्लिम परस्पर दंगा फसाद में उलझे हुए थे। धार्मिक पाखंड भी चरम सीमा पर था और धर्म के ठेकेदार अपने स्वार्थ की रोटियां धार्मिक कट्टरता एवं उन्माद के चूल्हे पर सेंक रहे थे। कबीर ने इसका खुलकर विरोध किया और सभी क्षेत्रों में फैली हुई सामाजिक बुराईयों को दूर करने का भरपूर प्रयास किया। उन्होंने अपनी बात निर्भयता से कही तथा हिंदू–मुस्लिम को डटकर फटकार लगाई। हिंदू और मुसलमान जो अपने–अपने धर्म को श्रेष्ठ समझकर एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश करने में लगे थे और जिससे कि सांप्रदायिकता उत्पन्न हो रही थी इस वैमनस्य को दूर करने के लिए संत कबीर ने निर्गुण और निराकार ब्रह्म की उपासना पर बल दिया तथा इसके माध्यम से ही हिंदू–मुस्लिम पारस्परिक एकता का प्रतिपादन किया। वस्तुतः कबीर सच्चे समाज सुधारक व राष्ट्र भक्त पहले थे और भक्त बाद में। उनके समय में लोग परस्पर आपस में धर्म व जाति के नाम पर मर कट रहे थे, ईश्वर को राम रहीम, अल्लाह में बांट रहे थे तो ऐसे समय में यह एक सुरक्षा कवच के रूप में दिखाई देते हैं और इस यथार्थ को प्रकट करने के लिए जमकर सभी मजहबों के अनुयायियों, इन धर्म के ठेकेदारों को खरी खोटी सुनाई।

संत कबीर को यदि उस समय का महात्मा गांधी कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। काफी हद तक राष्ट्रपिता गांधी जी भी कबीरदास के यथार्थ दृष्टिकोण से प्रभावित थे। गांधी जी को कबीरदास का अवतार भी कह सकते हैं जिस तरह गांधी जी को चालीस कोटि भारतीय जनता के हृदय का सम्राट कहा जाता है उसी तरह कबीरदास जी भी है इन्होंने भी अपने समय की दलित और पीड़ित जनता के हृदय के हृदय को आवाज

दी है। वैसे ही गांधी जी ने भी जिस प्रकार से हिंदू–मुस्लिम एकता का समर्थन किया और सभी को मिल–जुलकर रहने की सलाह दी। इसे सभी समुदायों के लोग एक–दूसरे के साथ मिल–जुलकर रहने लगे। इस एकता का परिणाम यह हुआ कि सभी मजहबों ने परस्पर मिलकर अंग्रेजों के खिलाफ जंग लड़ी और कामयाब भी हुए। अखंड भारत की एकता रूपी हथियार से लैस होकर ही हमें एक लंबे संघर्ष के बाद स्वाधीनता प्राप्ति हुई।

कबीर दास ने जाति धर्म को राष्ट्र एकता में बाधक माना है। धर्म विशेष पर इनकी कुछ पंक्तियां हैं "हिंदू कहे मोहि राम पियारो, तुर्क कहे रहिमाना, कबीरा लड़ि–लड़ि दो मुवै यह मर्म काहु न जाना।" इन्होंने इन दोनों मजहबों को काफी हद तक एकजूट करने का हरसंभव प्रयास किया और इसमें ये सफल भी रहे हैं। बाह्य आडंबरों, रूढ़ियों इत्यादि के नाम पर उस समय प्रभावशाली लोगों द्वारा समाज को जाति, धर्म इत्यादि कर खंडित किया जा रहा था तो कबीर ने ऐसा करने वालों को बख्शा नहीं। चाहे वह बादशाह हो या कोई और। "कबीर खड़ा बाजार में लिए कुल्हाड़ा हाथ, अब घर जारो तासु के जो चले हमारे साथ।"[2] जाति, धर्म, हिंसा, बलि इत्यादि का समर्थन करने वालों पर सीधे निर्भय होकर प्रहार किया है– जैसे ऊंचे कुल का जनमिया करनी ऊंच न होई, सुबरन कलस सुरा भरा साधू निंदत सोय।। "हिंसा करने वालों पर चाहे हिन्दू हो या मुसलमान जैसे बकरी पाति खात है ताकि काड़ी खाल, जो नर बाकरी खात है तिनको कौन हवाल।[3]" ये उस समय ऐसी बुराईयां थी जिसने हमारे समाज को खंडित कर दिया था और कबीर ने सभी को एकजुट करने के लिए इन बुराईयों की जमकर निंदा की है क्योंकि ये कुरीतियां ही देश की एकता व अखंडता को बांधा पहुंचाती है।

इसी तरह ही अन्य संतों ने भी राष्ट्रीय एकता स्थापित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है और इनकी यह एकता सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की कोटि में आती है, संतों में दादूदयाल, रैदास, नामदेव, गुरू नानक देव, सुंदर दास एवं नामदेव इत्यादि के योगदान को भी भुलाया नहीं जा सकता है। इन महान विभूतियों ने पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष, अराजकता, वर्ण व्यवस्था को त्याग कर जातिगत भेदभाव मिटाने का संदेश दिया। दादू को उनकी दयालुता के कारण दादू दयाल भी कहा जाता है। जन्मभूमि गुजरात में होने के बावजूद कर्मभूमि राजस्थान को बनाया है। दादू दयाल ने अपने ब्रह्म संप्रदाय के आधार पर लोगों को एकजुट करने का यथासंभव प्रयास किया। ये चाहते थे कि इंसान (तू–तू), (मैं और मेरा) से ऊपर उठे और परस्पर सद्भावना के साथ जीवन यापन करे। जैसे इनकी पंक्तियां हैं ––दादू दोनों भाई हाथ पग, दोनों भाई कान, दोनों भाई नैन है, हिंदू–मुसलमान।[4] "रैदास रामानंद के शिष्य हुए और मीराबाई के गुरु हैं इन्होंने हिंदू–मुस्लिम एकता पर बल दिया और धर्म के नाम पर परस्पर वैमनस्य उत्पन्न करने वालों की निंदा की। इनके समय में मुस्लिम शासक राजा कर रहे थे और हिंदू एक पराजित जाति थी। दोनों मजहब एक–दूसरे से नफरत करते थे। एक तरफ मुल्ले अपने मजहब को श्रेष्ठ समझकर सभी को इस्लाम स्वीकार करने का दबाव डाल रहे थे।

इसी परस्पर वैमनस्य व खींचतान से समाज निरंतर पतनोन्मुखी था। इस खिंचतान को जड़ से समाप्त करने के लिए रैदास ने कबीर की तरह दोनों मजहबों के कुकर्मों की खुलकर निंदा की। धर्म के नाम पर लोगों को खंडित करने वालों और रुढ़िवादी, अंधविश्वास, राग द्वेष व नफरत की ज्वाला प्रज्वलित करने वालों को खुलकर फटकार लगाई है और उन्हें चुनौती तक दे डाली। जैसे हिंदुओं में तीर्थाटन, गंगा स्नान व चार धामों का विशेष महत्व है, ये एक रूढ़ि है और कुछ लोग अल्लाह के नाम पर व अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु लोगों को भ्रमित कर समाज को खंडित करते हैं, वह चाहे हिंदू हो या मुसलमान सभी ऐसे करते हैं तो इस तरह की अवधारणा

का इन्होंने खंडन किया है। मन व आचरण शुद्धि पर बल दिया है। मन साफ हो, किसी के प्रति नफरत न हो, छल कपट न हो तो समझ लेना वही सार्थक जीवन है। जैसे इन्होंने कहा है 'मन चंगा तो कठौती में गंगा।' इन्होंने एक आदर्श समाज की परिकल्पना की थी और इनकी इस तरह की विचारधारा से बाबा साहेब आंबेडकर जी और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी भी बहुत प्रभावित हुए। गांधी जी ने जो स्वदेशी अपनाओं पर बल दिया और श्रम की महत्ता को स्वीकार करते हुए भारतीय जनता को जागरूक किया, ये सब संत रविदास (रैदास) के विचारों का ही प्रभाव है चूंकि गांधी जी ने रैदास के श्रम सिद्धांत को गहराई से समझा है। रैदास को संत कहकर कुछ आलोचकों ने उनके क्रांतिकारी विचारों को कुचलने की कोशिश की है जो उनके साथ एक बड़ा अन्याय हुआ है। रविदास (रैदास) दूरदर्शी सोच रखने वाले व्यक्ति थे। क्रांतिकारी वैचारिक अवधारणा, राष्ट्रीय, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना तथा युगबोध की सार्थक अभिव्यक्ति के कारण उनका वैचारिक दृष्टिकोण आज छः सौ वर्षों के पश्चात् भी प्रासंगिक हैं। वैसे ही महाराष्ट्र के संत नामदेव भी इसी संत परंपरा में आते हैं। संत नामदेव के ह्रदय में भी राष्ट्र प्रेम कूट–कूट कर भरा हुआ था और इन्होंने भी अपनी वाणी से लोगों को एकजुट करने का काम किया। हिंदू और मुसलमान दोनों के पाखंडों का पर्दाफाश करते हुए ये नजर आते हैं जैसे इनकी सुप्रसिद्ध पंक्तियां भी हैं "हिंदू पूजै देहरा, मुसलमान मसीद, नाम सेविया जहॅ देहरा न मसीद।"[5]

प्रेम मार्गी सूफी संतों का भी राष्ट्र प्रेम गजब का रहा है। सूफियों ने मुसलमान होते हुए भी भारतीय संस्कृति को अपनाया व उसका यशोगान किया है जो कि स्वयं में एक असाधारण बात है। सूफी काव्य जगत के जीवंत दस्तावेज मलिक मुहम्मद जायसी जी इनमें प्रमुख है जो पद्मावत में हिंदू त्योहारों जैसे होली, दीपावली, बैशाखी, एवं अन्य सभी भारतीय पर्वों का वर्णन करते हुए भारतीय संस्कृति का यशोगान करते दिखाई पड़ते हैं। इतना ही नहीं बल्कि हिंदुओं की पौराणिक कथाओं के संदर्भ देते हुए शिव, राम, कृष्ण, अर्जुन, ब्रह्म व रावण की भी चर्चा करते हैं। भारतीय संस्कृति का मूल भाव परस्पर एकरूपता ही है, यही संदेश भारतीय संस्कृति देती है जिसका जायसी ने अपने काव्य जगत में वर्णन किया है। "सूफियों ने तसव्वुफ की उदयभूमि में भी सभी धर्मों से ऊपर उठकर सादे जीवन और निश्छल ईश्वरीय प्रेम पर जोर दिया है। सच्च पूछिए तो भक्ति साहित्य के लोकप्रिय श्रेष्ठ कवि चार ही है इनमें कबीर, जायसी, सूर और तुलसी दास जी ही प्रमुख है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने जायसी के विषय में कहा है कि ये बड़े भावुक भगवद्भक्त थे और अपने समय में बड़े ही सिद्ध और उच्च कोटि के फकीर माने जाते हैं[6]। इन्होंने पद्मावत महाकाव्य लिखकर जो स्थान पाया है, वह स्थान अन्यत्र को मिलना असम्भव है। "पद्मावत जायसी का ही नहीं बल्कि समूची हिंदी काव्य परंपरा का एक दुर्लभ रत्न है। मुस्लिम होते हुए भी ठेठ अवधी भाषा में इसकी रचना की जो कि इनके सात्विक चिंतन की ही उपज है। पद्मावत महाकाव्य में जो भारतीय संस्कृति का चित्रण इन्होंने किया है यह इनके राष्ट्र प्रेम व चेतना का ही परिणाम है। साहस, त्याग, शौर्य और पराक्रम, संवेदनशीलता, अहिंसा व स्त्री सम्मान इत्यादि भारतीय जीवन दर्शन ही तो है। सूफियों ने तो अपनी रचनाओं के नाम ही स्त्रियों के नाम पर ही रखे हैं और इन्हें ईश्वर या अल्लाह तक कह डाला। सूफियों या प्रेमाख्यान कवियों का मजहब, जाति, संप्रदाय से ऊपर उठकर संपूर्ण मनुष्यता के बारे में चिंतन करना एक राष्ट्रीय चेतना ही तो है क्योंकि जब मनुष्य परस्पर वैमनस्य, जाति–धर्म, संप्रदाय इत्यादि से ऊपर उठ जाता है तो राष्ट्र प्रेम का आविर्भाव होता है। इन सभी सामाजिक व धार्मिक कुरीतियों में पड़े रहते हुए राष्ट्र प्रेम नहीं उपज सकता। अतः इस गहरे मैले कुंए से बाहर निकलकर ही

यह संभव है। अतः सूफी कवियों की जीवन दृष्टि इन सबसे ऊपर उठकर संपूर्ण प्रकृति के हितार्थ चिंतन मनन करने की है जोकि वसुधैव कुटुंबकम् सदृश ही तो है।

उसी प्रकार भक्तिकाल की सगुणधारा के कृष्ण भक्त कवि सूरदास जी है। वे वल्लभाचार्य जी के शिष्य थे तथा अष्टछाप के कवियों में सर्वश्रेष्ठ है। वल्लभाचार्य जी के पुष्टि मार्ग में दीक्षित होने से पूर्व सूर एक संत थे। जनवादी कवि होने के नाते सूर ने जनता का यथार्थ प्रतिनिधित्व करते हुए नायक श्री कृष्ण को जननायक के रूप में प्रस्तुत किया। ब्रज प्रदेश, मथूरा व वृंदावन के लोगों को अपनी धरती से अपार प्रेम है और श्रीकृष्ण वहां के आराध्य देव व राजा है। अपने भक्तों की रक्षा के लिए हर वक्त उनके साथ रहते हैं। दुष्ट कंस एवं दूसरे शत्रुओं का संहार करने वाले श्रीकृष्ण है। सूर ने अपनी भक्ति के माध्यम से परोक्ष रूप से लोक कल्याण पर बल दिया। जातिगत दुष्प्रचार करने वाले व इस तरह परस्पर वैमनस्य भाव उत्पन्न करने वालों से बचने की सलाह दी है। वल्लभाचार्य जी स्वयं जाति धर्म के सख्त खिलाफ थे और इन्होंने अष्टछाप के कवि कृष्णदास जो कि कुनबी शुद्र जाति से संबंधित थे को श्रीनाथ मंदिर में अधिकारी पद पर नियुक्त किया था।

भक्ति काल में राष्ट्रीय चेतना को बल देने वाला सगुण भक्त कवियों में रामभक्ति शाखा के प्रवर्तक व लोकमंगल, लोकमानस, लोकरक्षक, लोकसंग्रह एवं समन्वय के संरक्षक तुलसीदास जी है। इन्होंने अपने काव्य में मध्यकालीन समाज की दुर्दशा का वर्णन करते हुए तत्कालीन समाज को एकता के सूत्र में पिरोने का भरपूर प्रयास किया। अपने काव्य में इन्होंने समस्त मानव जाति की एकरूपता पर बल दिया। तुलसी दास जी ने अपने काव्य में विविध प्रसंगों में राष्ट्रीय भावना को व्यक्त किया है। राम का अपनी जन्मभूमि के प्रति अनन्य अनुराग आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। गोस्वामी तुलसीदास जी हिंदी के उन महान कवियों में अग्रगण्य है जिनकी कविता का मूल प्रयोजन "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय" होता है। वे कविता का उद्देश्य लोकमंगल का विधान करना मानते हैं। तुलसी ने अपने चरितनायक राम को एक आदर्श चरित्र के रूप में प्रस्तुत करते हुए लोक शिक्षा का विधान किया है। उनका संपूर्ण काव्य ही समन्वय की विराट चेष्टा है इसलिए तो हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा भी है कि लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय कर सके।

तुलसी दास महात्मा बुद्ध के पश्चात् भारत के सबसे बड़े लोकनायक थे। गोस्वामी तुलसीदास जी भारतीय जनता के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। उनकी दृष्टि अत्यंत विस्तृत एवं व्यापक थी। इनके काव्य में लोकमंगल का जो भाव विद्यमान है वह उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक दृष्टि से उद्भूत है। इन्होंने माना है कि जिस समाज में महापुरुषों, स्वामी की सेवा में मर मिटने वाले सच्चे साधकों, प्रजा का पुत्रवत पालन करने वाले शासकों के प्रति श्रद्धा और प्रेम का भाव समाप्त हो जाएगा उस समाज का कल्याण कदापि नहीं हो सकता। तुलसी दास जी आदर्श समाज की परिकल्पना करते हैं। जैसे राजा दशरथ जी का आदर्श राज्य है। इनके राज्य में सभी सुखी है। राम आदर्श पुत्र, आदर्श पति, मित्र, भक्त के रूप में है वैसे ही सीता मां एक आदर्श पुत्री, पतिव्रता व बहु है। समाज को खंडित करने वाले लोगों पर इन्होंने भी तीखा प्रहार किया है जैसे कुछ पंक्तियां भी है जो कवितावली से ली गई है। धूत कहो, अवधूत कहौ, रजपूत कहो जुलहा कहौ कोऊ। काहू की बेटी सौं बेटा न ब्याहब काहू की जाति बिगार न सोऊ।"[7] तुलसी दास जी ने जिस युग में काव्य रचना की वह मुगलों का शासनकाल था।

कवितावली की पंक्तियों के माध्यम से इन्होंने तत्कालीन समाज का यथार्थ चित्रण किया है जैसे "खेती

न किसान को, भिखारी को न भीख भलि, बनिक को बनिज, न चाकर को चाकरी, जीविका विहीन लोग सिद्यमान सोच बस, कहें एक एकन सौं कहां जाइ का करी।।"[8] रामचरितमानस के उतरकांड में भी तुलसी दास जी ने तत्कालीन स्थिति का मार्मिक चित्रण किया। जैसे ब्राह्मण वेद बेच रहे हैं, हर तरफ अधर्म का बोलबाला है, और राजा प्रजा का शोषण कर रहा है, वेदों की बात कोई नहीं मानते। जैसे द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन, कोउ नहिं मान निगम अनुसासन "लोगों का आपस में परस्पर वैमनस्य, धर्म के नाम पर आम जनता को भ्रमित करने का काम पंडित कर रहे थे। हिंदू धर्म ही अनेकों संप्रदायों में विभाजित हो गया था। शैव, वैष्णव, शाक्तों इत्यादि का आपस में संघर्ष चल रहा था और वैसे ही इस्लाम धर्म में भी हो रहा था। इस परस्पर वैमनस्य को समाप्त करने के लिए तुलसी दास जी ने प्रयास किया और कुछ हद तक एकजूट करने में वो सफल भी हुए हैं। उन्होंने शैव–वैष्णवों, शाक्तों की आपसी तू–तू, मैं–मैं का अंत करने के लिए राम के मुख से कहलवाया है– शिव द्रोही मम दास कहावा, हो नर मोहि सपनेहु नहीं पावा।"[9] जिससे की शैव–वैष्णव–शाक्त इत्यादि पुनः चिंतन मनन करने पर विवश हुए। तुलसी दास जी ने काव्य में समन्वय सिद्धांत देकर भारतीय समाज को आश्चर्यचकित कर दिया और एक तरह से नूतन जीवन दृष्टि संसार को दी। परंपरागत रूढ़ियों से ऊपर उठकर स्वजन हिताय की बात की। उदाहरणार्थ कोई उच्च और निम्न नहीं है। व्यक्ति कर्मों से ही सब कुछ बनता है जैसे भगवान राम नीच शबरी के घर जाकर उसके जूठे बैर खाते हैं चूंकि यह नीच शबरी के सात्विक कर्मों और सच्ची भक्ति का ही फल है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इन्हें लोकनायक यूं ही नहीं कहा है बल्कि इनके कर्म ही इस तरह के थे। हिंद–मुस्लिम, शैव–वैष्णव, राजा–प्रजा, पिता–पुत्र, पति–पत्नी, लोक और शास्त्र का, गार्हस्थ्य और वैराग्य का, भक्ति और ज्ञान का, पांडित्य और अपांडित्य का, भाषा और संस्कृति का, निर्गुण और सगुण भक्ति का, ब्रज और अवधि का समन्वय। रामचरितमानस शुरू से लेकर आखिर तक समन्वय का ही काव्य है और इन्होंने रामचरितमानस की कथा को इस ढंग से प्रस्तुत किया है कि उस समय के हिंदू जो शैव, वैष्णव और शाक्त संप्रदायों में बंटे हुए थे, एक हो गए। इन्होंने अपने काव्य के माध्यम से यही संदेश समाज को दिया कि लोग परस्पर प्रेम से जीवनयापन करे, कर्तव्यनिष्ठ बने, दुःखी इंसान की आंखों के आंसू पोंछे। दूसरी तरफ जो असुरी शक्तियां हैं उनके विनाश के लिए प्रभु समयानुसार धरा पर अवतरित होते हैं जैसे इन्होंने कहा भी है–"जब जब होइ धर्म की हानि, बढ़हि असुर अधम्म अभिमानी, तब–तब धरि प्रभु विविध सरीरा, हरहिं कृपा निधी सज्जन पीरा।[10]

गोस्वामी तुलसीदास जी की राष्ट्र चेतना उच्च कोटि की है। संपूर्ण समाज को एकजुट करने का इन्होंने जो प्रण किया था उसमें वे अपनी समन्वयवादी अवधारणा से सफल भी रहे हैं यही कारण है कि आज सैंकड़ों वर्ष गुजर जाने पर भी ये प्रासंगिक है और इनका आदर्श समाज और राम राज्य आज के समाज के लिए एक प्रेरणा स्रोत है। आज भारतीय लोग तुलसीदास के आदर्श समाज के लिए तरसते हैं और हमारी व्यवस्थाएं भी राम राज्य की दुहाई देती है, ये तुलसीदास की ही देन है जिन्होंने संपूर्ण समाज को एक राष्ट्र बनाते हुए एकता के सूत्र में पिरोने का असाधारण काम किया। वैसे ही मध्यकाल में यदि हम बात करें सिक्ख धर्म गुरुओं की तो इनमें सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरू नानक देव जी हैं जो एक सच्चे देशभक्त थे और पहले ऐसे संत है जिन्होंने विदेशी आक्रांताओं के विरुद्ध आवाज उठाई – "खुरसान खमसान कीआ हिंदुस्तान डराइया, आपै दोस न देई

करता जपु करि मुगल चढ़ाइया, एती मार पई कुर लाणै तै की दरदू न आइया।"[11] भले ही भगवान को विदेशी आक्रांताओं द्वारा किए गए अत्याचारों का दर्द महसूस हुआ या नहीं, कोई नहीं जानता है, परंतु नानक को अवश्य हुआ है। सिक्खों के पांचवें गुरु अर्जुन देव को राष्ट्र प्रेम के चलते जहांगीर की अमानुषिक यातनाओं का शिकार होना पड़ा और इसी कारण वो दिव्य लोक चले गए। गुरू तेग बहादुर अत्यंत वीर और साहसी थे। हिंदू धर्म एवं राष्ट्रीयता के हितार्थ शत्रु औरंगजेब ने इनकी हत्या करवा दी थी। गुरू गोविंद सिंह ने मुगलों के खिलाफ सैनिक का बाना धारण कर लिया और अनेकों युद्ध लड़े। भारतीयता के हितार्थ ही उन्हें अपने चारों पुत्रों की बलि देनी पड़ी।

"भक्ति काल का जो समय है यह अपने पूर्ववर्ती और परवर्ती साहित्य से निश्चित रूप से उत्कृष्ट है। यह व्यष्टि और समष्टि का एक जीवंत दस्तावेज है।[12] मध्यकाल का भक्ति साहित्य समूचे भारतीय इतिहास में अपने ढंग का अकेला साहित्य है। इसी का नाम भक्ति है और इसमें भक्ति को माध्यम बनाकर संपूर्ण राष्ट्रीय चेतना की बात हर एक संत ने की है और एकता स्थापित करने के लिए अपने अपने समय में बहुमूल्य योगदान दिया और सफल भी हुए। इसलिए तो इस समय को हिंदी साहित्य जगत का स्वर्ण युग भी कहा जाता है।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि मध्यकालीन साहित्य भारतीय धर्म और संस्कृति का स्वर्ण युग रहा है। भारतीय दर्शन, राष्ट्रीय चेतना, संस्कृति, सभ्यता, आचार–विचार सभी कुछ मध्यकालीन साहित्य में देखने को मिलता है। यदि हमें मध्यकालीन भारतीय संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करना हो तो हमें इस युग के काव्य का अध्ययन करना पड़ेगा। इस युग के संतों रूपी कवियों ने जो भी लिखा है वह अपनी आत्मा की प्रेरणा से व राष्ट्र चेतना के प्रयोजन से लिखा है। भक्ति इनका प्रत्यक्ष रुप रहा है लेकिन उस भक्ति के माध्यम से ये संपूर्ण समाज को एकजुट करने के लिए प्रयासरत रहे और सफल भी हुए। इस युग का साहित्य ह्रदय के अंतःकरण से प्रवाहित हुआ है और सीधे दिल पर ही प्रभाव डालता है। स्वांतः सुखाय, जनहित और राष्ट्र हित ही मध्यकालीन काव्य का प्रयोजन रहा है।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. उपाध्याय अयोध्या सिंह हरिऔध, कबीर वचनावली, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ सं. 100
2. बाबू श्यामसुंदर दास, कबीर ग्रंथावली, 14वां संस्करण, पृष्ठ सं. 48
3. रैदास की वाणी, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण।
4. नामदेव गाथा, प्रकाशक–संचालक, शासकीय मुद्रण व लेखन सामग्री।
5. डॉ. के. के. शर्मा, हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय भावना, पृष्ठ सं. 46
6. डॉ. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, पृष्ठ सं. 94
7. वही, पृष्ठ सं. 129
8. वही 140, 141
9. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ सं. 95, 96
10. तिवारी अशोक, भक्ति काव्य, पृष्ठ सं. 18
11. वही, पृष्ठ सं. 21
12. वही, पृष्ठ सं. 28

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 109-114

पंचायती राज व्यवस्था में महिला सहभागिता

डॉ. विभा शर्मा
सहायक आचार्य राजनीति विज्ञान, राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय, राजसमन्द।

सारांश :-

भारतीय इतिहास में पंचायती राज व्यवस्था का अपना महत्व रहा है। इतिहास के पन्नों में राज्य छोटा हो अथवा बड़ा ग्रामीण शासन के लिए अपनी एक व्यवस्था प्रारम्भ से ही रही है। आजाद भारत में ग्राम पंचायत में प्रभुत्वशाली एवं सम्पन्न वर्ग का वर्चस्व स्थापित रहा एवं ग्राम पंचायत के सरपंच पद पर कई वर्षो तक एक ही व्यक्ति एवं परिवार का आधिपत्य रहा। यह क्रम प्रथम बार 73वें संविधान संशोधन के उपरान्त नवीन आरक्षण व्यवस्था के तहत हुए चुनावों से भंग हुआ, जब एक तिहाई सरपंच के पदों को महिलाओं के लिए आरक्षित रखा गया।

यहां एक नई व्यवस्था देखने को मिली कि महिलाएं चाहे घुंघट की ओट से ही सही सामुदायिक व्यवस्था में सम्मिलित होने लगी यद्यपि यह एक शुरूआत भर थी पर इस शुरूआत में भविष्य का वट वृक्ष छिपा था।

परिवारं, ग्रामीण विकासं, मध्यम वर्गं स्थानीय राजनीति, भ्रष्टाचार एवं सामाजिक स्वीकृति के सन्दर्भ में हमने महिला सहभागिता के प्रभाव का अध्ययन किया तो यह स्पष्ट होता है कि महिला सहभागिता से स्थितियों में बदलाव आया है। महिलाएं न केवल पारिवारिक स्तर पर मजबूत हुई है बल्कि प्रतिनिधित्व के अवसर ने उनके सामाजिक सरोकारों को बढाया है। विकास के कई क्षेत्र ऐसे है जिनमें महिलाओं ने सक्रिय सहभागिता के द्वारा न केवल स्वयं को स्थापित किया है अपितु अनुकरणीय नेतृत्व के द्वारा दिशा भी प्रदान की है।

विषय संकेत :- पंचायती राज, ग्रामीण शासन, भारतीय संविधान, सशक्तीकरण, विकेन्द्रीकरण, सामुहिक भागीदारी, तृणमूल स्तर, प्रतिनिधित्व, सामाजिक सरोकार, सहभागिता, सामुदायिक व्यवस्था, ग्रामीण विकास।

विषय परिचय :-

भारतीय इतिहास में पंचायती राज व्यवस्था का अपना महत्व रहा है। इतिहास के पन्नों में राज्य छोटा हो अथवा बडा ग्रामीण शासन के लिए अपनी एक व्यवस्था प्रारम्भ से ही रही है। इसका परिष्कृत स्वरूप हमें चोल साम्राज्य की ग्रामीण शासन व्यवस्था में देखने को मिलता है जहां पर गांव के हर छोटे से बडे कार्य के लिए समितिया हुआ करती थी। समय की गति के साथ इनके स्वरूप में कार्यप्रणाली में अन्तर आता गया।

महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज्य के स्वप्न को साकार करने एवं आत्मनिर्भर गांवों की परिकल्पना को मूर्त रूप देने का लक्ष्य रखा गया इसको ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान में भी ग्रामीण शासन पर जोर दिया गया एवं अनुच्छेद 40 के द्वारा इसे आगे बढाया गया। 1952 में सामुदायिक कार्यक्रम के माध्यम से आगे बढते हुए

2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान एवं आंध्रप्रदेश से पंचायती राज की विधिवत शुरूआत की गई।

भारत में पंचायती राज आगे बढा किन्तु सत्ता का विकेन्द्रीकरण इतना सरल नहीं था जिससे इस व्यवस्था को अपेक्षित गति नहीं मिल सकी। समय समय पर राज्य एवं केन्द्र द्वारा पंचायती राज के सशक्तीकरण हेतु समितियों एवं आयोगों का गठन किया गया, जिसका प्रतिफल 73वें संविधान संशोधन के रूप में सामने आया। ग्रामीण प्रशासन का आज जो स्वरूप हमें दिखाई देता है उसमें 73वें संविधान संशोधन का बडा योगदान है।

आजादी के बाद ग्राम पंचायत में प्रभुत्वशाली एवं सम्पन्न वर्ग का वर्चस्व स्थापित रहा एवं ग्राम पंचायत के सरपंच पद पर कई वर्षो तक एक ही व्यक्ति एवं परिवार का ही आधिपत्य स्थापित रहा। यह क्रम प्रथम बार 73वें संविधान संशोधन के उपरान्त नवीन आरक्षण व्यवस्था के तहत हुए चुनावों से भंग हुआ, जब एक तिहाई सरपंच के पदों को महिलाओं के लिए आरक्षित रखा गया यद्यपि इन आरक्षित स्थानों पर भी प्रभुत्वशाली एवं सम्पन्न वर्ग के परिवार की महिलाएं ही काबिज हुई एवं उपसरपंच के पद पर अब तक सरपंच रहे प्रभावशाली लोग काबिज रहे।

73वें संविधान संशोधन से एक नए दौर का आगाज हुआ जिसमें महिलाएं चाहे घुंघट की ओट से ही सही सामुदायिक व्यवस्था में सम्मिलित होने लगी यद्यपि यह एक शुरूआत भर थी पर इस शुरूआत में भविष्य का वट वृक्ष छिपा था।

उद्देश्य :

रियासती काल हो अथवा ब्रिटिश शासित भारत, हर काल में सत्ता का सुख गिने चुने लोगों में ही निहित था। सम्पन्न वर्ग एवं प्रभुत्वशाली वर्ग राज्य एवं केन्द्र की योजनाओं का लाभ स्वयं एवं परिवारवाद तक ही सीमित रखते आए थे, सम्पन्न अधिक सम्पन्नता की ओर बढ रहे थे वहीं गरीब एवं शोषित वर्ग को योजनाओं का समुचित लाभ नहीं मिल रहा था। शासन में सामुहिक भागीदारी एवं सभी वर्गों के प्रतिनिधित्व की अपेक्षा से आरक्षण के माध्यम से एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित किए गए। इस आरक्षण की बदौलत पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की सहभागिता क्या रही, क्या महिलाएं शासन में सहभागी बन पायी यदि हां तो किस स्तर तक वे अपना वर्चस्व कायम कर पायी ऐसे कई मूलप्रश्न सामने है जिसका परीक्षण एवं अध्ययन करना ही इस लघु शोध पत्र का उद्धेश्य है।

महिला आरक्षण 73वें संविधान संशोधन के अन्तर्गत :

भारतीय संविधान स्त्रियों को प्रत्येक क्षेत्र में सशक्त होने के अवसर प्रदान करता है। पंचायती राज व्यवस्था उन सबमें प्रमुख है। 2 दिसंबर को लोकसभा एवं 23 दिसंबर को राज्यसभा ने 73वें संविधान संशोधन को अधिनियम के रूप में पारित किया। इसके बाद 17 राज्यों के विधान मण्डल की स्वीकृति के पश्चात् 24 अप्रैल 1993 को यह अधिनियम संपूर्ण देश में लागू कर दिया गया।"

अधिनियम में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों के आरक्षण की व्यवस्था की गई साथ ही कुल निर्वाचन वाले स्थान में से एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित रखे जाने का प्रावधान किया गया।

अध्ययन क्षेत्र में महिला सहभागिता की स्थिति :

राजसमन्द जिला नवीन आरक्षण व्यवस्था शुरू होने के ठीक चार वर्ष पूर्व ही उदयपुर जिले से पृथक

होकर अस्तित्व में आया था। अप्रैल 1991 में गठित इस जिले में तत्समय सात पंचायत समितियां थी जिनके अन्तर्गत 203 ग्राम पंचायते थी, जो आज क्रमशः बढ़ते हुए 214 हो गई है। वर्ष 2000 के पंचायत आम चुनाव में 67 ग्राम पंचायतें महिलाओं के लिए आरक्षित की गई जबकि 68 ग्राम पंचायतों में महिलाएं सरपंच पद पर निर्वाचित हुई। 2020 के पंचायत आम चुनाव में यह स्थिति बढकर 104 ग्राम पंचायत हो गई जहां पर महिलाओं के लि[illegible] निर्वाचन हो चुक[illegible]ता है।

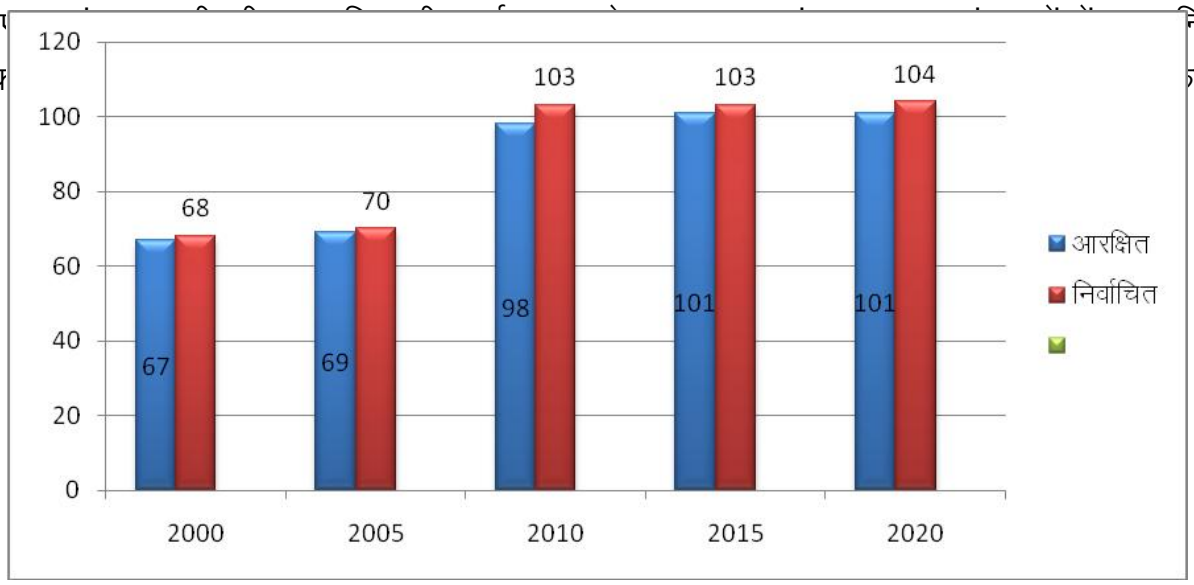

स्त्रोत : राज्य निर्वाचन आयोग

आरेख के विश्लेषण से स्पष्ट है कि वर्ष 2000 से लेकर वर्ष 2020 तक पांच बार पंचायती राज संस्थाओं में आम निर्वाचन हुए है जिसमें प्रत्येक बार आरक्षित स्थान के मुकाबले महिलाओं की सहभागिता अनारक्षित स्थान पर भी देखने को मिली है यद्यपि यह प्रतिशत नगण्य है तथापि ये पंचायती राज व्यवस्था में महिला सहभागिता के मजबूत हो रहे पक्ष को दर्शाते है।

आंकड़ो का एक पक्ष यह भी है कि अधिकांश महिलाएं केवल आरक्षित सीटों से ही निर्वाचन में भाग लेती है। यद्यपि आरक्षित सीटों पर ही निर्वाचन में भाग लेने के कई कारण समाने आए है जैसे कि पुरूषों का विरोध, समाज का विरोध, राजनेताओं का दबाव एवं आर्थिक पराश्रिता। अतः इस ओर भी ध्यान देना होगा जिससे कि महिलाएं स्वतन्त्र रूप से अनारक्षित सीट पर निर्वाचन में प्रतिभागी बन सके।

महिला सहभागिता के प्रभाव :

समाज की व्यवस्था, गतिविधि, क्रियाकलाप कभी भी शून्य में कार्य नहीं करती है, प्रत्येक व्यवस्था, गतिविधि अथवा किसी भी सामूहिक क्रियाकलाप के चारों ओर एक पर्यावरण होता है। राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक गतिविधियां क्रियाकलाप भले ही कुछ समय के लिए हो एवं उसकी परिणामों की प्राप्ति के साथ वे समाप्त हो जाते हो किन्तु जिस पर्यावरण में वे होते है उस पर्यावरण में इन गतिविधियों का प्रभाव चिरकाल तक बना रहता है। इस परिवेशीय प्रभाव के परिणामों से ही समाज प्रगति के पथ पर बढे चला जाता है।

समाज में महिलाओं की स्थिति पुरूष वर्ग के मुकाबले अनेकानेक दृष्टिकोणों से विलग है। महिलाएं न

केवल आज भी परिवार की धुरी है बल्कि समाज का ताना बाना भी इनके ईर्द–गिर्द ही बुना हुआ है। ऐसे में महिलाएं घर की दहलीज से बाहर आकर गांव के विकास की साक्षी बनती है तो उसका प्रभाव न केवल गहरा होगा अपितु कई मायनों में ज्यादा व्यापक भी होगा। महिलाएं यदि पंचायती राज व्यवस्था जो लोकतांन्त्रिक विकेन्द्रीकरण का मूल है उससे जुडती है तो इसका प्रभाव निःसंदेह समाज एवं हर वर्ग पर दिखायी देगा। इन प्रभावों का अध्ययन हम इन बिन्दुओं के द्वारा अच्छे से समझ सकते है।

परिवार के सन्दर्भ में :

हमारे यहां एक कहावत है पढ–लिखकर आगे बढने वाली लडकी एक नहीं दो कुल को तारती है अर्थात बेटी एवं बहु के रूप में दो घरों के कल्याण का माध्यम बनती है। पंचायती राज व्यवस्था मे महिला सहभागिता का ही परिणाम है कि महिलाएं जहां ग्रामीण विकास की साक्षी बन रही है वहीं वे अपने परिवार में भी अन्धविश्वास एवं मिथको से आगे बढकर प्रगतिवादी दृष्टिकोण को अपनाने लगी है। आज महिलाएं परिवार एवं बच्चों के भविष्य को लेकर सचेत है। पंचायती राज व्यवस्था से जुडी महिलाएं बालिका शिक्षा एवं उनके आर्थिक स्वावलम्बन के लिए हमेशा सजग रहकर आगे बढने को प्रोत्साहित करती रहती है। वर्तमान में उच्च शिक्षा की कमी के दंश को जिस तरह उन्होने झेला है वे नहीं चाहती की उनके बच्चे भी उस दंश को झेले। नतीजतन वे परिवार में शिक्षा एवं आर्थिक स्वावलम्बन के महत्व को पहचान कर आगे बढ रही है।

ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में :

विकास नियोजन पर निर्भर करता है, विकास की दिशा एवं गति सही हो इसके लिए भारत सरकार के द्वारा भी स्वतन्त्रता के बाद से ही योजना आयोग का गठन कर भारत के विकास को आयाम दिए गए। भारतीय महिलाओं में जन्मजात एवं संस्कार के रूप में नियोजन की भावना गहरे से समायी हुई है। इसे हम छोटी इकाई के रूप में अध्ययन करने पर पाते हैं कि महिलाएं नियोजित ढंग से कार्य करती है वर्ष पर्यन्त घर के लिए आवश्यक अनाज दालों आदि का उत्पादन के समय कम दरों पर उपलब्ध होने वाले खाद्यान्न को न केवल संग्रहित रखना अपितु मौसम की विपरीत परिस्थितियों में उन्हें सुरक्षित रखते हुए परिवार के भरण पोषण के लिए आवश्यकता के अनुसार काम में लेना। महिलाओं में नियोजन का यही गुण ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में उपयोगी हो सकता है। आवश्यकता बस अवसर प्रदान करने की है। महिलाएं ग्रामीण क्षेत्र में घरेलु कार्यों के उपरान्त जब खेत खलिहान की राह देखती है तो उसे मालुम होता है कि कहां सीसी सडक की आवश्यकता है कहां नाली की एवं कहां स्वच्छता के लिए रखे जाने वाले कचरापात्र की। उसके चारो ओर के क्षेत्र में पेयजल, चिकित्सालय, विद्यालय की स्थिति के बारे में वह संवदेनशील रहती है क्योंकि जीवन में कई बार उसे इनकी आवश्यकताओं से रूबरू होना पडा होता है। ऐसे में महिलाएं ज्यादा अच्छे ढंग से संवदेनशील होकर विकास कार्यो को आवश्यकता एवं क्षेत्र की भौगोलिक स्थितियों के अनुरूप करवा सकती है एवं विकास के लिए नियोजन कर सकती है।

मध्यम वर्ग के सन्दर्भ में :

भारतीय राजनीति में मध्यम वर्ग की अपनी विशेष भूमिका रही है। यह वह वर्ग है जो समाज में अपने अस्तित्व के लिए सदैव ही संघर्षशील रहा है। इस वर्ग में शिक्षक, वकील, इंजीनियर, साहित्यकार, पत्रकार एवं मध्यम वर्ग के व्यवसायी सम्मिलित है। मध्यम वर्ग से पंचायती राज व्यवस्था मे महिला सहभागिता आम जन जीवन

के मध्य संचार, प्रेरणा एवं उत्साह का स्त्रोत बनती है। इस वर्ग से प्रतिनिधित्व करने वाली महिला की पृष्ठभूमि उसके कार्य विस्तार को न केवल बढाती है अपितु निर्वाचन से सामाजिक समरसता को भी बढाया है जो पंचायती राज व्यवस्था के लिए आधारभूत आवश्यक तत्व है। मध्यम वर्ग की महिलाओं ने सहभागिता के द्वारा गामीण विकास को गहरे तक प्रभावित किया है चुकि ये उस वर्ग से आती है जिनके लिए विकास के मायने सीधे सीधे उनके दैनिक जीवन से जुड़े हुए है।

स्थानीय राजनीति के सन्दर्भ में :

धैर्य, विश्वास, सहिष्णुता, लगन, मेहनत, मिलनसारिता, नेतृत्व आदि महिलाओं के सामान्य नैसर्गिक गुण है जो अब तक घर–परिवार की चारदीवारी तक ही सीमित थे किन्तु पंचायती राज व्यवस्था में महिला सहभागिता ने इसे घर की चारदीवारी से गांव की चौपाल का रास्ता दिखाया है, महिलाओं के नैसर्गिक गुणों का लाभ ग्रामीण विकास को इन नए आयामों के माध्यम से प्राप्त हुआ है।

पंचायती राज के माध्यम से आज ग्रामीण अंचल की स्त्रियां सशक्त हुई है। ग्राम स्तर की इन संस्थाओं में राजनीतिक आधार पर निर्वाचन नहीं होता है परन्तु यह भी तथ्य है कि निर्वाचन भले ही राजनीतिक दलों के द्वारा न लड़ा जाए पर निर्वाचित होने वाले प्रतिनिधि किसी न किसी राजनीतिक दल के मानने वाले होते है। ऐसे में इन राजनीतिक दलों की विचारधारा उस ग्रामीण क्षेत्र में जन प्रतिनिधि के माध्यम से परिलक्षित एवं प्रभावित होती दिखाई देती है। राजनीतिक दलों में शुचिता की कमी वर्तमान में एक बड़ा विषय होता जा रहा है। ऐसे में महिलाएं यदि सक्रिय राजनीति में रहकर पंचायती राज व्यवस्था का हिस्सा बनती है तो इसका प्रभाव भी इस व्यवस्था पर पड़ना लाजिमी है। पंचायती राज व्यवस्था में महिला सहभागिता के द्वारा राजनीति का प्रथम सोपान चढती है। महिलाओं के नैसर्गिक गुण उनमें शुचिता को बढ़ाते है एवं अन्ततः यह राजनीतिक गतिविधियों में परिलक्षित होता है। एक बार यदि राजनीति में शुचिता का समावेश हो जाए तो विकास का एक नया ही स्वरूप सामने आता है। महिला सहभागिता वाली ग्राम पंचायतों में विकास न केवल समावेशी हुआ है बल्कि विकास क्षेत्र की आवश्यकता के अनुरूप भी हुआ है एवं इन क्षेत्रों में पेयजल, सडक विद्यालय, चिकित्सालय विकास की प्राथमिक सूची में समाहित हुए है।

भ्रष्टाचार के सन्दर्भ में :

पंचायती राज व्यवस्था में महिला सहभागिता के कारण विकास में एक संवदेनशीलता उत्पन्न होने की पूर्ण सम्भावना बनी रहती है। महिला जानती है कि विकास की कहां कब कितनी सम्भावना एवं कहां कितनी आवश्यकता है। चाहे पेयजल हो या शिक्षा, चिकित्सा या सुरक्षा ये सभी संवेदनशील बिन्दू है इन क्षेत्रों में महिलाएं पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से विकास को स्थापित करना चाहती है। ये आधारभूत तत्व है जिनके द्वारा वह उस क्षेत्र में व्याप्त अभावों को समाप्त करना चाहती है। ऐसा करने में वह न तो स्वयं भ्रष्टाचार का भाग बनना चाहती है एवं न ही किसी अन्य को भ्रष्टाचार करने की स्वीकृति देती है। महिलाओं में संतुष्टि का भाव ऐसा तत्व है जो उसे अन्यों के मुकाबले भ्रष्ट आचरण के लिए प्रोत्साहित नहीं करता है। यह महिला सहभागिता का ही प्रभाव है कि जिन ग्राम पंचायतों में महिलाओं को प्रतिनिधित्व करने का अवसर प्राप्त हुआ उन पंचायतों में अन्य पंचायतों के वनिस्पत भ्रष्टाचार की कम शिकायतें देखने एवं सुनने को मिली।

सामाजिक स्वीकृति के सन्दर्भ में :

किसी भी समाज की श्रेष्ठता या हीनता का आंकलन उस समाज की महिलाओं की स्थिति से होता है। महिलाओं की स्थिति समाज का दर्पण है जो हमें आधी आबादी की हकीकत को बयां करता है। अब तक की व्यवस्था में शासन संचालन से पुरूष वर्ग ही जुडा हुआ था, 73वें संविधान संशोधन के बाद से पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की सहभागिता हुई। ग्रामीण क्षेत्र में पुरूष वर्ग का प्रभुत्व होता था एवं ग्रामीण क्षेत्र में अक्सर दो गुट होते थे जिनमें विकास के कार्यो को लेकर अक्सर खींचतान चलती रहती थी। जिसके परिणामस्वरूप विकास कार्य कहीं न कही बाधित एवं अवरूद्ध होते रहते थे। महिलाओं में एक नैसर्गिक गुण सामाजिक समरसता का भी होता है, यही समरसता उसकी सामाजिक स्वीकृति को बढाती है। जब समाज में स्वीकृति बढती है तो सहिष्णुता भी बढती है एवं यह विकास के लिए आवश्यक तत्व है कि क्षेत्र में कोई भी विकास कार्य हो उसको लेकर स्वीकार्यता बढेगी तो विकास की गुणवत्ता भी निःसंदेह बढेगी। यह महिला सहभागिता का ही प्रभाव है कि जिन ग्राम पंचायतों में महिलाओं द्वारा ग्राम पंचायतों में प्रतिनिधित्व किया गया उन पंचायतों में अन्य पंचायतों के वनिस्पत विकास कार्यो को लेकर कम खींचतान देखने को मिली।

निष्कर्ष : परिवारं, ग्रामीण विकासं, मध्यम वर्गं, स्थानीय राजनीति, भ्रष्टाचार एवं सामाजिक स्वीकृति के सन्दर्भ में हमने महिला सहभागिता के प्रभाव का अध्ययन किया तो यह स्पष्ट होता है कि महिला सहभागिता से स्थितियों में बदलाव आया है। महिलाएं न केवल पारिवारिक स्तर पर मजबूत हुई है बल्कि प्रतिनिधित्व के अवसर ने उनके सामाजिक सरोकारों को बढाया है। विकास के कई क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें महिलाओं ने सक्रिय सहभागिता के द्वारा न केवल स्वयं को स्थापित किया है अपितु अनुकरणीय नेतृत्व के द्वारा दिशा भी प्रदान की है।

कोई भी भू क्षेत्र जहां मानव बसावट मौजूद है जब तक कोई विशेष स्थिति–परिस्थिति नहीं हो वहां लगभग आधी आबादी में महिला एवं आधी आबादी पुरूष वर्ग की होती है। जब प्रकृति द्वारा ही सामाजिक धरातल पर महिलाओं पुरूषों के बराबर सहभागिता का वजूद मिला हुआ है तो हमें इसे अन्य धरातलों पर भी सहर्ष स्वीकारना होगा फिर चाहे वह पंचायती राज व्यवस्था हो अथवा विधानमण्डल। महिलाओं को भी अब इस ओर सचेत होकर सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विकास के साथ साथ ग्रामीण विकास को भी अपना समय एवं नेतृत्व देकर व्यवस्थाओं को मजबूत बनाना होगा। विकास की नैया को महिला सहभागिता एवं सक्रियता को साकार रूप देकर ही खेया जा सकता है अन्यथा विकास रूपी नैया गोल–गोल घुमकर हमें विकास का भ्रम मात्र दे सकती है।

सन्दर्भ ग्रंथ :

1. भारत प्रकाशन विभाग, (2002) सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली।
2. सेठ, शमता (2002) राजस्थान में पंचायती राज संस्थाओं का एक व्यावहारिक अध्ययन, प्रकाशक हिमांशु पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
3. जोशी प्रो. आर.पी., भारद्वाज डॉ. अरूणा (2009) भारत में ग्रामीण एवं शहरी स्थानीय शासन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
4. बाबेल डॉ. बसंती लाल, (2011) पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास योजनाएं, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

Websites :

1 www.panchayat.gov.in

3 www.sec.rajasthan.gov.in

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 9-10
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 115-118

लीलाधर जगूडी की कविता में मानव जीवन और प्रकृति

डॉ. बेबी सुमंगला पी.वी.
सहायक प्रोफेसर ऑफ हिन्दी, महात्मा गांधी गवर्नमेंट ऑर्टस कालेज, माहि।

साहित्य में, खासकर काव्य में प्रकृति का एक महत्वपूर्ण स्थान है। हर एक युग के काव्य में प्रकृति की उपस्थिति किसी न किसी प्रकार हुई है। प्रकृति की एक अनुपम कृति है मानवसृष्टि। मानव का शरीर पृथ्वी, जल, वायु अग्नि, आकाश इन पाँच तत्त्वों से बनाया गया है। आज के मानव स्वार्थ के कारण, अधिक लाभ उठाने केलिए प्राकृतिक संपदाओं का दोहन कर रहा है। इसलिए ही प्राकृतिक संपदा खाली होते जा रहे हैं। काव्य में प्रकृति चित्रण का नवीन पद्धति का आरंभ छायावादी युग में हुआ।

समकालीन कविता में प्रकृति एक अनिवार्य उपस्थिति बन गयी है। समकालीन कवि की चिन्तन पद्धति में प्रकृति की उपस्थिति मानवीय चेतना और मानवीय मूल्य निर्धारण आदि के संदर्भ में हुई।

लीलाधर जगूडी समकालीन हिन्दी के प्रमुख हस्ताक्षरों में से एक है।

भूमण्डलीकरण से उत्पन्न वातावरण पूरे देश को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है। इससे मुक्त होना बहुत मुश्किल है। आजकल मानवीय संबंध तथा संवेदनायें बहुत जल्दी ही नाश की ओर बढ रही है। नवीन समय और नयी सभ्यता ने मनुष्य को संवेदनहीन बना दिया है। मानव और मानवता को बचाने का प्रयास लीलाधर जगूडी अपनी कविता के माध्यम से करते हैं। मानव को भावनाओं और संवेदनाओं से आपूर्ण रहने के उद्देश्य से लीलाधर जगूडी ने लिखा है -

"मनुष्य को कविता तक पहुँचना है
और उसके बाद वहाँ तक-भी
जहाँ तक कविता पहुँचना चाहती है मनुष्य को।" *(1)*

समकालीन कविता के केन्द्र में मानव जीवन है। इनमें लोकमंगल की भावना देखने को मिलती है।

लीलाधर जगूडी की कविता में प्रकृति-वर्णन के माध्यम से समाज तथा व्यवस्था की विसंगतियों का चित्रण मिलता है। वे प्रकृति के सुन्दर चित्र प्रस्तुत करने के स्थान पर प्रकृति को मानविक जीवन से जोडकर लिखते हैं-

"जितनी मात्रा में मनुष्य मरता है
उतनी मात्रा में आत्मा भी मरती है
जितनी मात्रा में जीवन मरता है
उतनी मात्रा में प्रकृति भी मरती है
अपने विरोध के विरोध में।" *(2)*

मानव जीवन और प्रकृति से चोली-दामन का रिश्ता है। लीलाधर जगूडी मानव जीवन पर असंतुलित पर्यावरण के दुष्परिणामों की ओर हमारे ध्यान दिलाने का प्रयास करते हैं। स्वार्थता के कारण अधिक लाभ उठाने केलिए हम प्रकृति को लूटते हैं तो उसका घातक परिणाम हमें भोगना पडता है।

विनम्रता, नैतिकता, संवेदना आदि शब्दों से आधुनिक मानव बहुत दूर है। आजकल इन शब्दों के अर्थ का महत्व कम होते जा रहे हैं। भारतीय संस्कृति में पेडों की भूमिका एक संस्कृति वाहक तत्त्व के रूप में होती है। आज हमारी संस्कृति को भी कुरूप बनाया जा रहा है। परंपराओं के समान वृक्ष भी निर्ममतापूर्वक कटते हैं। लीलाधर जगूडी सांस्कृतिक विकृतिकरण को चित्रित करते हुए कहते हैं-

"उसने चाहा तो था कि कोई बढिया-सा सपना देखें
पर देखता क्या है कि बच्चे तमाम प्रौढ हो चुके हैं
पेड तमाम काटे जा चुके हैं
चिडियाँ तमाम मारी जा चुकी हैं। *(3)*

आज प्रौद्यागिकी की और तकनीकी के हाथों में आधुनिक मनुष्य पडा है परिणामस्वरूप वह प्रकृति से दूर होता जा रहा है और क्रूरता तथा विकृति के समीप पहुँचता रहा है।

हमारे स्वस्थ पर्यावरण को औद्योगीकरण ने बरबाद किया है। औद्योगिक सभ्यता के कारण हमारी हरी-भरी प्रकृति नष्ट हो रही है। औद्योगीकरण का लक्ष्य ज्यादा से ज्यादा लाभ उठाना है। इसके कारण हमारे देश की प्रकृति-संपदा लूटी जाती हैं। ऐसे माहौल में वे प्रकृति के महत्व के बारे में गीत गाते हैं।

"तुम्हें जानना है कि गेहूँ न गोदाम में पैदा होता है
न कारखाने में
गेहूँ
लोहा, प्लास्टिक और कागज़ की लुगदी से नहीं बन सकता।" *(4)*

आधुनिक मानव प्रकृति की ओर कोई ध्यान नहीं देता। लीलाधर जगूडी आधुनिक मानव को समझाने चाहते हैं कि मानव की मूलभूत ज़रूरतें प्रकृति के द्वारा ही पूर्ण होता हैं अन्न की उपज मिट्टी से ही संभव हैं। औद्योगिक सभ्यता के दौरान आज बडी मात्रा में कारखानों की बहुलता हुई है। इससे पूरा वातावरण प्रदूषित हो रहा है। प्रौद्योगिकी के विकास से प्रकृति असंतुलित हो गयी है। औद्यागिक विकास के कारण प्रकृति जल प्रदुषण और वायु प्रदूषण के शिकार बनी है। प्रदूषण और प्रकृति असन्तुलन के कारण आधुनिक मानव को प्राकृतिक प्रकोपों का सामना करना पडता है।

आजकल हमारी संस्कृति, सभ्यता, भाषा आदि सब बाज़ारू संस्कृति में परवर्तित हो रही है। इस संस्कृति से हम में अमानवीयता जन्मती है। बाज़ारू शक्तियां सब कुछ अख्तियार कर रही है। उपभोक्तावर्ग इस विकृत संस्कृति या शक्ति के प्रति आकृष्ट होकर स्वत्वहीन बनता जा रहा है। लीलधर जगूडी 'अनुभव के आकाश में चान्द' में उपभोक्तवादी वर्चस्व के प्रति व्यंग्य करते हैं। वे लिखते हैं-

"फैला है गंगा का कछार
गंगा घुस जाती है पोलिथीन पाउच में
पहुँच जाती है फाइव स्टार
पहुँच जाती है समुद्र पार।" *(5)*

भारतीय संस्कृति में नदी का महत्वपूर्ण स्थान है। नदी को माँ के समान माना जाता है। गंगा के साथ भारत के लोगों की परंपरा का अटूट संबन्ध है। गंगा उनकेलिए विरासत का चिह्न है, पितृतर्पण का उदक है, सर्वस्व है। आजकल गंगा नदी के जल को पोलिथीन 'कवर' में भरकर देश में ही नहीं विदेशों में भी निर्यात करता है। इससे संस्कृति का नाश होता है।

उपभोक्तावाद के कारण प्रकृति नाश की ओर बढ रही है। मानव जीवन पर प्रकृति के अभाव का दुष्परिणाम होता है। प्रकृति के आज की दशा देखकर नई पीढी के प्रति अपनी आशंका लीलाधर जगूडी व्यक्त करता है। आगामी पीढी से लीलाधर जगूडी कहते हैं-

"मेरे बच्चे, तुम्हें बहुत खेल खेलने पड सकते है.
नाचना भी पड सकता है बहुत
इसलिए जान लो कि घने जंगल और घास के मैदान
पार्सल से नहीं मँगाए जा सकते।" *(6)*

प्रकृति के आज की दशा के कारण समाज में व्याप्त उपभोक्तवादी संस्कृति ही है। इससे

मानवों का नाश होता है। कवि समाज को समझाते हैं कि मानवजीवन नाश की कगारे पर है। आगामी पीढी को इस संस्कृति का दुष्परिणाम ज़रूर भोगना पडेगा। आर्थिक लाभ केलिए प्रकृति को लूटना अनुचित ही है। आज का मानव यही करता है। इस अनुचित प्रवृत्ति का दुष्परिणाम किसी न किसी दिन मानव को भोगना पडेगा।

आधुनिक मानव प्रकृति की ओर कोई ध्यान नहीं देता। हर युग की कविता में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है। लीलाधर जगूडी प्रकृति-सौन्दर्य के पक्षधर हैं। प्रकृति-सौन्दर्य के बारे में कवि लिखते हैं-

"हर ऋतु में सबसे ज्यादा नयी कोई लगती है तो पृथ्वी
एक पत्ता, एक फूल, एक फल, एक अन्न की बाली
बासी झोंका, ताज़ा झोंका, सब कुछ पृथ्वी है।" *(7)*

पृथ्वी के कण-कण में ईश्वर का सौन्दर्य भरा हुआ है। वे अपनी रचना द्वारा सुन्दर, स्वस्थ एवं संतुलित जीवन की कामना को सिद्ध करते हैं।

असल नें प्रकृति हमारी सहयात्री है। उसे कब्जे में लाना उचित नहीं है। आज मनुष्य और प्रकृति के बीच पहले जो संबंध है वह कम हो रहा है। इसलिए पारिस्थितिक संकट का सामना हमें ज़रूर करना पडेगा। लीलाधर जगूडी की तरह के प्रतिबद्ध कवि इसके खिलाफ आवाज़ उठाती रहती है। उन्होंने अपने सभी काव्य-संग्रहों के माध्यम से आधुनिक सभ्यता से उत्पन्न प्राकृतिक पर्यावरण पर आए संकट को व्यक्त करते हैं। लीलाधर जगूडी का लक्ष्य प्रकृति और जीवन का अन्तर्सम्बंध दिखाना है। साथ ही साथ वे असंतुलित पर्यावरण के घातक परिणामों से हमें परिचित-भी कराता है।

संदर्भग्रन्थ :

1. लीलाधर जगूडी - भय भी शक्ति देता हैं। पृ - 70
2. लीलाधर जगूडी - भय भी शक्ति देता हैं। पृ - 103
3. लीलाधर जगूडी - इस यात्रा में पृ - 37
4. लीलाधर जगूडी - अनुभव के आकाश में चान्द पृ - 47
5. लीलाधर जगूडी - अनुभव के आकाश में चान्द पृ - 48
6. लीलाधर जगूडी - अनुभव के आकाश में चान्द पृ - 50
7. लीलाधर जगूडी - अनुभव के आकाशें में चान्द पृ - 116

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 9-10
पृष्ठ : 119-125

वर्तमान परिवेश में मंत्र योग का महत्त्व

विकास कुमार कासनिया, शोधार्थी
डॉ. रामदेवा राम आलडिया, शोध निर्देशक
योग विभाग, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

प्रस्तावना और परिचय :-

हमारा मन दौड़ता भागता रहता है वायु जैसी तेज गति है, बंदरों के जैसे उछल कूद करता रहता है। अनर्गल व्यर्थ के विचार हमारे मन में आते–जाते रहते हैं, जिनका कोई उद्देश्य भी नहीं होता। ये मन को तो अशांत करते ही है हमारी विचार शक्ति को भी खर्च कर देते हैं। जिसे सही दिशा में लगना चाहिए था लेकिन उसका पतन होता रहता है। ये विचार व्यक्ति को या तो भूतकाल से ही जोड़े रखते हैं, या भविष्य की कल्पनाओं में, इस दिशाहीन प्रवाह को रोकने के लिए योग का सहारा लिया जाता है।

योग दर्शन के अनुसार हमें मनुष्य जन्म इसलिए मिला है कि भिन्न–भिन्न पदार्थों पर बिखरी हुई मन की शक्तियों को समेट कर ईश्वर की ओर लगाए यह हमारा परम आवश्यक कर्तव्य है। अपने को मन के बुरे विचारों से तथा अनेक निरर्थक संकल्पों से मुक्त करे। विचारों अथवा संकल्पनाओ का नियंत्रण कर लेने से मन नष्ट हो जाता है। संकल्पना का उन्मूलन ही मुक्ति है (मुक्ति का आशय यहां मन की मुक्ति से है) कल्पना के अभाव में मन नष्ट हो जाता है। संसार भ्रांति की अनुभूति कल्पना के कारण ही होती है। जब कल्पना को पूर्णतया रोक दिया जाता है तो यह लुप्त हो जाती है और कल्पना को समाप्त करने के लिए वर्तमान में ध्यान लगाना पड़ता है।

विभिन्न योग पद्धतियों से इसका निराकरण किया जाता है। योग की छः शाखा मंत्र योग, राजयोग, ज्ञान योग, हठयोग, भक्ति योग का उद्देश्य भी यही है। इनमें मंत्रयोग को सर्वप्रथम माना गया है। मंत्र योग द्वारा इस मन के भटकाव को रोका जा सकता है। और मन को एकाग्र कर ध्यान की अनुकूल स्थिति में लाया जा सकता है। क्योंकि मंत्रो का दोहराव मन को पूरी तरह से व्यस्त रखता है।

मनोविज्ञान के अनुसार मन को गतिहीन करना संभव नहीं है, परंतु हम उसको एक तरफ से रोक कर दूसरी और अवश्य लगा सकते हैं। क्योंकि शुरू में मन कुछ ना कुछ करता ही रहना चाहता है, इसलिए उसे कुछ देते ही रहना चाहिए। मन को स्थिर करने के लिए युक्ति के आधार पर कोई न कोई आधार या अवलंबन लिया जाता है। क्योंकि हमारा मन हर समय विविधता चाहता है उसे निरसता पसन्द नहीं है न ही नीरस अभ्यास पसंद आता है। जिसमें मंत्र एक प्रमुख साधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। मंत्र का अर्थ है मन को एक तंत्र में लाना। मंत्र "मन "और "त्र" से मिलकर बना है मन का अर्थ है सोच विचार या मनन करना। त्र का अर्थ

है मुक्त करने वाला या बचाने वाला सब प्रकार की नकारात्मक ऊर्जा से, भय से स्वामी विष्णु देवानंद कहते हैं मंत्र एक ध्वनि संरचना में समाहित एक रहस्मय ऊर्जा है यह मन को स्थिर करता है और ध्यान की शांति की ओर ले जाता है।

2. **मंत्र योग के अंग** – मंत्र के 16 अंग 1. भक्ति 2. शुद्धि 3. आसन 4. पंचांग 5. आचार 6. धारणा 7. शरीर व यंत्र सेवन 8. प्राण क्रिया 9. मुद्रा 10. तर्पण 11. हवन 12. बलि 13. देव पूजन 14. जप 15. ध्यान व 16. समाधि है।

   हम आगे जप योग के अभ्यास का वर्णन करेंगे –

3. **मंत्र योग के प्रकार :–**

   साधारणतः शास्त्रों में 14 प्रकार के मंत्रजप का वर्णन मिलता है। जो इस प्रकार है–

1. **नित्यजप**– नियमित रूप से किए जाने वाले।
2. **नैमित्तिक जप**– किसी के निमित्त किया जाता हो।
3. **काम्य जप**– किसी कामना की सिद्धि के लिए किया जाता है।
4. **निषिद्ध जप**– किसी को हानि पहुँचाने की दृष्टि से किया गया जप ऐसे जप निष्फल होते है।
5. **पाप निवृति जप**– इसे प्रायश्चित जप भी कहते हैं इस जन्म या पूर्व जन्म में किए गए बुरे कार्य से मुक्ति हेतु किए जाने वाले जप।
6. **चल जप**– यह जप कभी भी किया जा सकता है। इसमें कोई नियम बंधन नहीं होता चलते– फिरते, खाते –पीते, सोते हुऐ कोई आसन में बैठना आवश्यक नही है।
7. **अचल जप**– इस प्रकार का मंत्रजप आसनबद्ध होकर स्थिरतापूर्वक किया जाता है, अचल जप में अंग प्रत्यंग नहीं हिलते और भीतर मंत्रजप चलता है।
8. **मानस जप**– केवल मानसिक रूप से बिना कोई अंग–प्रत्यंग के हिले – डुले सूक्ष्मतापूर्वक जो जप किया जाता है। उसे मानसिक जप कहते है।
9. **वाचिक जप**– मंत्रोचार द्वारा जोर– जोर से बोलकर जो जप किये जाते है, वाचिक जप कहलाता है।
10. **अखण्ड जप**– ऐसा जप जिसमें देश काल का पवित्र अपवित्र का भी विचार नहीं होता और मंत्र जप बिना खण्डित हुए लगातार चलते रहे, इस प्रकार का जप अखण्ड जप कहा जाता है।
11. **अजपा जप**– बिना प्रयास कियें श्वास–प्रश्वास के साथ चलते रहने वाले जप को अजपा जप कहा जाता है। जैसे श्वास–प्रश्वास में विराम नही होता है। उसी तरह यह जप भी बिना विराम चलता रहता। जब तक श्वास देह मे श्वास रहती है तब तक।
12. **उपांशु जप**– इस जप में मंत्रोच्चारण अस्पष्ट होता है पास बैठे व्यक्ति को भी कुछ समझ न आए इसमें दोनों होंठ तो हिलतें है, पर शब्दों का उच्चारण स्पष्ट रूप से सुनाई नहीं देता।
13. **परिक्रमा जप**– किसी धार्मिक स्थल की परिक्रमा करते–करते मंत्र जप किया जाता है जैसे वृंदावन में गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा
14. **भ्रमर जप**– इस प्रकार का मंत्र जप भौरे के गुंजन के समान गुंजन करते हुए किया जाता है।

   इन सभी मंत्र जप में तीन प्रकार के जप को श्रेष्ठ माना जाता है। वाचिक जप, उपांशु जप तथा मानसिक

जप।

मानसिक जप चलते–फिरते भी किया जा सकते हैं इनमें से किसी भी विधि का अनुसरण किया जा सकता है। हम यहां मन को स्थिर करने की अजपा जप की एक विधि का वर्णन करते हैं, जो सरल है और कभी भी की जा सकती है।

सोहम साधना विधि – यह श्वांसो पर की जाने वाली क्रिया है, सोहम मंत्र साधना में श्वास अन्दर भरते हुए 'सो' तथा बाहर छोड़ते हुए 'हम' का मन ही मन आती जाती श्वांस पर अजपा जप किया जाता है। इसे उच्चारण द्वारा बोलना नही होता केवल मंत्र की ध्वनि को कल्पना से सुनना भर होता है क्योंकि श्वांस लेते समय 'सो' ध्वनि का और छोड़ते समय 'हम' इस प्राकृतिक ध्वनि के प्रवाह को सूक्ष्म श्रवण शक्ति के सहारे अंतः भूमिका में अनुभव करना होता है।

यह क्रिया विधि कुछ इस तरह है कि वायु जब किसी पाइप या किसी छोटे छिद्र से होकर वेग पूर्वक निकलती है, तो घर्षण के कारण ध्वनि प्रवाह उत्पन्न होता है, बांसुरी से स्वर लहरी निकलने का यही आधार है।

इसे अजपा जप कहते हैं अजपा अर्थात वह जप जो बिना प्रयत्न के अनायास ही होता है, इस मंत्र जप को सोते–जागते, उठते–बैठते, खाते–पीते, कभी भी किया जा सकता है। इस विधि से चित्त के विचारों का विक्षेप होता है मन के विचारों का संतुलन और आध्यात्मिक लाभ भी प्राप्त होते हैं अध्यात्म में इसका अर्थ 'वह हूं' मतलब मैं ईश्वर स्वरूप हूं, ईश्वर सदृश्य हूं।

4. मंत्र योग के लाभ –

इस विधि से शारीरिक व मानसिक आध्यात्मिक तीनों उपलब्धियां हासिल होती है। ध्यान का लाभ अनायास ही हो जाता है, क्योंकि सांसों पर ध्यान लगाने के कारण मन एकाग्र हो जाता है, इस विधि से श्वांसो का संतुलन होते हुए श्वांस और गहरी होती है, जिससे प्राणों का प्रवाह स्थूल शरीर में बढ़ता है प्राण शक्ति की वृद्धि होती है। श्वांस लंबी, दीर्घ होने के कारण प्रति मिनट श्वांसो की संख्या घटती है, यह घटी हुई श्वांसो की मात्रा आयु की भी वृद्धि करती है।

इस प्रकार मंत्र जप योग एक आध्यात्मिक व्यायाम है, एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। जिसका हमारे मानसिक और बौद्धिक क्षेत्र पर सुनिश्चित प्रभाव पड़ता है। इससे कई प्रकार की सिद्धियां मिलती है तो साधक का मनोबल भी दृढ़ होता है। विचारों में विवेकशीलता आती है, बुद्धि निर्मल होती है मंत्र जप से जो शक्ति उत्पन्न होती है, यह शक्ति सिद्धि का दूसरा नाम है योग दर्शन में कहा गया है, कि जब साधक धीरे–धीरे इतना ऊंचा उठ जाता है कि वह इसी साधना से समाधि अवस्था तक पहुंच जाता है, परंतु मंत्र जप साधना में निम्न तत्वों का सहयोग होना आवश्यक है।

5. मंत्र योग के आवश्यक तत्व :–

1. **अटूट श्रद्धा** – जहा श्रद्धा नहीं वहा संदेह उत्पन्न होता है। अतः श्रद्धा के बिना सफलता की आशा करना व्यर्थ है।
2. **भावना शक्ति** – जैसी साधक की भावना होती है वैसी सफलता उसे प्राप्त होती है।
3. **तपस्चर्या** – बिना परिश्रम से (तप) के बिना सफलता नहीं मिलती।
4. **एकाग्रता** – चित्त का शांत होना आवश्यक है मन को सब और से हटाकर चित को एकाग्र किया

जाना चाहिए।

5. **प्राणायाम** – इसमें वायु तत्व की साधना द्वारा प्राणों के अभ्यास से मन स्थिर किया जाता है।
6. **ध्यान** – ध्यान पूर्वक विचार करने से ही हम किसी वस्तु के मूल स्वरूप और उसकी वास्तविकता को जान सकते हैं।
7. **अर्थ चिंतन** – मंत्र के अर्थ का मनन करते रहे।
8. **स्थान का चुनाव** – प्राकृतिक शांत वातावरण होना आवश्यक है जहां शोर, प्रदूषण न हो जहां किसी का आना जाना न हो उस स्थान को सुनिश्चित कर लेने के बाद उस स्थान पर नियम पूर्वक मंत्र ध्यान साधना की जा सकती है। और जब भी हमारा अंतःकरण सांसारिक कष्टों से उद्वीगन हो जाए, तो उस स्थान पर जाकर कुछ समय इन मंत्रो का जाप करने से मस्तिष्क में परिवर्तन होते हैं। मस्तिष्क शांत चित्त होता है व आनंद की अनुभूति होती है।
9. **समय** – ब्रह्म मुहूर्त का समय श्रेष्ठ है।
10. **आसन** – बैठकर किए जाने वाले जप में आसन होना आवश्यक है यह किसी ऊन या कुश का बना हो सकता है।
11. **दिशा** – जप में पूर्व की ओर मुख करना चाहिए।
12. **उपवास** – अधिक भोजन से आलस्य बढ़ता है जो अभ्यास मार्ग में बाधक है।
13. **संयम** – इंद्रियों का निग्रह ब्रह्मचर्य में रहना।
14. मौन आवश्यक हो उतना ही बोलना।
15. **आहार संयम** – भोजन शुद्ध और सात्विक होना चाहिए क्यों कि मन पर भोजन का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है।
16. **अभ्यास** – मन को अभ्यास में बार–बार लगाए रखने पर इसका अभ्यास बन जाता है उसको खाली न रहने दें।
17. **माला** – सजगता बनाए रखने के लिए माला का प्रयोग भी किया जाता है।

मंत्र जप योग व्यक्ति की तामसिक वृतियो से मुक्त करके व्यक्तित्व का रूपांतरण करता है।

6. **मंत्र का महत्व** – हमारे अनियंत्रित विचार क्रोध, शोक, ईर्ष्या, चिंता के मार्ग पर भटकते रहते हैं। जिससे भयंकर मानसिक विक्षोभ उत्पन्न होता है फलतः जीवन का सारा आनंद नष्ट हो जाता है। मंत्र मन के विचारों को मंत्र पर टिका कर मन को एकाग्र करते हुए मन की शक्ति को एक दिशा में ही मोड़कर स्थिर रखने में सहायता करता है। जिससे विचारों को पकड़कर एक दिशा से हटाकर दूसरी और नियोजित करने की क्षमता उत्पन्न होती हैं। आधे अधूरे मन से उपेक्षा और अन्यमनस्कता के साथ किए गए कार्य प्रायः अस्त व्यस्त ही रहते हैं, उनकी प्रतिक्रिया असफलता के रूप में ही सामने आती है यदि तन्मयता से कार्य किए जाए तो सफलता अवश्य अर्जित होती है। मंत्र जप योग से यह संभव है।

मंत्र योग मनुष्य को शाश्वत शांति प्रदान कर सकता है। इस से केवल्य, मोक्ष, परम सुख की प्राप्ति हो सकती है। इसके निरंतर अभ्यास से साधक समाधि का अनुभव करने लगता है। जिसे महाभाव समाधी कहते है मंत्र योग के इस ध्यान को स्थूल ध्यान कहते है।

मंत्र आत्मा और भगवान के बीच का सेतु है यह दोनों को जोड़ने का काम करता है। योग का मुख्य लक्ष्य भी यही है। मंत्रो का उपयोग जप द्वारा किया जाता है, इसलिए इसे जप योग कहते हैं।

आज तक विभिन्न शोध किए गए हैं जिनमें यह जाना गया है कि किस प्रकार मंत्र जप शारीरिक, मानसिक विकृतियों, को शांत करता है, एवं ईश्वर प्राप्ति के लिए भी सहायक है।

वर्तमान काल (कलयुग) मंत्र योग का ही हो सकता है, क्योंकि इस युग में मनुष्य से मनुष्य के बीच प्रतिस्पर्धाएं और आवश्यकताऐं भी बढ़ चुकी है। व्यक्ति को अपने लिए भी समय नहीं है कालांतर में तो प्राचीन ऋषि, योगी, मनुष्य अपने मन को स्थिर करने के लिए जंगलों में निवास करते थे, और योग अध्यात्म की विभिन्न क्रियाओं, हठ योग आदि द्वारा अपने चंचल मन को शांत और स्थिर करने का प्रयास करते थे।

लेकिन आज के युग में यह कदापि संभव नहीं है। व्यक्ति सांसारिक कार्य में इतना उलझा हुआ है कि, उसे इन लंबी क्रियाओं, और एकांत स्थान में जाने का वह सोच भी नहीं सकता। और न ही आज के व्यक्ति का शरीर बल पहले जैसा रहा है कि वह हठ योग का आश्रय ले सके।

मंत्र जप योग वह सुलभ, सरल और जांचा परखा मार्ग है, जिस को व्यक्ति कहीं भी रहते हुए अपना सकता है। यह सरल व सहज है। किन्ही भी परिस्थितियों में इसका अभ्यास किया जा सकता है। ये मंत्र चलते–फिरते उठते–बैठते किसी भी कार्य में संलग्न हो तो भी किए जा सकते हैं। इनका उचित फल मिलता है और साधक की धारणा बनी रहती है जिससे साधक का चित्त शांत निर्मल रहता है।

जप करने का मंत्र संक्षिप्त और सार युक्त होना चाहिए जिस मंत्र विशेष में हमारा मन लगे हमारी श्रद्धा, रुचि हो उसी में अपने मन को लगा कर मंत्रजप करना चाहिए। जैसे ओंकार, गायत्री मंत्र, राम राम, हरे कृष्ण, ओम नमः शिवाय, ओम नमो भगवते वासुदेवाय, और अपने अपने धर्म मत अनुसार किसी भी मंत्र को चुन सकते हैं।

भारतीय परंपरा में ऊँ का बहुत बड़ा स्थान है। योग शास्त्रों में बताया गया है कि ऊँ नाम ईश्वर का नाम है। उसका प्रतीक है, ध्यान से पहले ऊँ का उच्चारण किया जाता है बार–बार इस मंत्र को दोहराने से यह अंतःकरण के सभी सांसारिक विचारों को भगा देता है और चित्त को इधर–उधर भटकने से रोक देता है, और इस प्रणव मंत्र का मस्तिष्क पर अद्‌भुत प्रभाव पड़ता है। योग दर्शन में उक्त श्लोक को इस प्रकार से बताया गया है :–

ऊँ कारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यानन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चौव घ्काराय नमो नमः।।

अर्थ है कि– उस ईश्वर को योगी जन ऊँकार के रुप मे ध्यान करते हैं, जो सभी मनोकामनाएं और मोक्ष को देने वाले हैं, उन्हें नमस्कार है (ऊँ परब्रह्म का अभिवाच्य शब्द है)

भारतीय परंपरा में ही नहीं वरन समस्त विश्व के विभिन्न साधना पद्धतियों में किसी न किसी रूप में मंत्र जप विधि का सहारा लिया जाता है, इनके प्रकार कई हो सकते हैं किंतु सभी का ध्येय समान होता है। और भी कई सारे मंत्र है जिनका अभ्यास किया जा सकता है। किसी योग्य व्यक्ति से गुरु रूप से मंत्र दीक्षा ले ली जाए तो बहुत ही अच्छा है। गुरु से प्राप्त किया हुआ मंत्र व्यक्ति पर अद्‌भुत प्रभाव डालता है, क्योंकि गुरू द्वारा वह जांचा परखा होता है, मंत्र की उचित तकनीक की उसे जानकारी होती हैं। यदि कोई गुरु नहीं मिले तो अपनी

इच्छा अनुसार पसंद का कोई भी मंत्र चुन सकते हैं, और उसका श्रद्धाभाव सहित जप करें तो इससे आत्म शुद्धि होती हैं।

मोक्ष प्राप्ति के लिए जब निष्काम भाव से जप करना होता है, तो उसमें किसी तरह के नियमों की बाधा नहीं रहती, लेकिन जब किसी कामना विशेष के लिए जप किया जाता है तभी विधि व नियमों का पालन करना पड़ता है। मनुष्य गायत्री मंत्र का हर समय यहां तक की लेटते, बैठते, चलते मानसिक जप कर सकता है। इसके जप में किसी नियम का बंधन नहीं है, जिसके न पालन करने से कोई पाप हो जाए।

इन सभी मंत्रो का लिखित जप का प्रयोग भी किया जा सकता है, लिखित जप चित् को एकाग्र करने में सहायता करता है। और धीरे–धीरे साधक को ध्यान की ओर अग्रसर करता है। लिखित जप करने से चित्त एकाग्र होता है, और हृदय पवित्रता से भर जाता है, और मंत्र लिखने के अभ्यास से एक आसन में बैठने का अभ्यास भी होता है। इंद्रियां वश में हो जाती है शीघ्र ही मानसिक शक्ति प्राप्त होती है मंत्र शक्ति के द्वारा हम ईश्वर के समीप भी होते हैं, इनके लाभ का अनुभव हम अभ्यास द्वारा ही कर सकते हैं।

7. उदेश्य :–

योग के अनुसार मन को अशुद्धियों से बचाना एवं बिखराव से रोकना ही किसी भी योग विधि का उद्देश्य होता है मनुष्य की इच्छाओं की दौड़ लगी ही रहती है, मन सदैव नाना प्रकार की वस्तुओं में रमा ही रहता है, और इन सांसारिक भोग विलास की वस्तुओं की इच्छाओं की प्रवृति तथा अहंकार की प्रवृत्ति मनुष्य का स्वभाव है। उसको इन्हीं प्राकृतिक गुणों से मुक्त कराकर यथार्थ का ज्ञान करना ही जप योग का उद्देश्य है। मानसिक शारीरिक व आध्यात्मिक परिवर्तन भी मंत्र योग द्वारा होता है।

जिस प्रकार संसार की कोई वस्तु का नाम मन में उस वस्तु के प्रति चेतना उत्पन्न करता है, उसी प्रकार ईश्वर का नाम शुद्ध मन से ईश्वर चेतना उत्पन्न करता हैं, और ईश्वर प्राप्ति का कारण बन जाता है। कलयुग में तो ईश्वर के नाम की और अधिक आवश्यकता है। क्योंकि 'कलयुग केवल नाम अधारा सुमिर–सुमिर नर उतरहिं पारा' इस कली काल में तो ईश्वर के नाम का ही सहारा है मंत्र जप के अतिरिक्त आनंद व शांति देने वाला कोई और अधिक सुगम और सरल मार्ग नही है।

'उल्टा नाम जपा जग जाना,
बाल्मीकि भये ब्रह्म समाना'।।

ऋषि वाल्मीकि तो उल्टा नाम जप कर भी ब्रह्मा हो गए थे वाल्मीकि ने राम के स्थान पर मरा मरा मंत्र जप किया था।

राम–नाम–मनि–दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
'तुलसी' भीतर बाहिरौ, जौ चाहसि उजियार।।

तुलसीदास जी कहते हैं कि यदि तू भीतर और बाहर दोनों ही ओर उजाला (आत्मप्रकाश) चाहता है, तो जीभ रूपी देहरी पर राम नाम रूपी मणि का दीपक रख।

गीता जी के अनुसार –

ऊँ इत्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरं ममं अनुस्मरण।
यः प्रयाति त्यजं देहं स याति परमां गतिम्।

जो साधक योग में सलंग्न ऊँ इस एक अक्षर ब्रह्म शब्द मंत्र जप का उच्चारण करता हुआ और मेरा स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उसे परम गति की प्राप्ति होती हैं।

8. निष्कर्ष :-

मंत्र योग के अनुसार जो मन को बंधन से मुक्त कर दे वही मंत्र है। वर्तमान परिवेश में व्यक्ति ने तुलनात्मक प्रतिस्पर्धाओं (देखा देखी) में महत्वाकांक्षाएं इतनी बढ़ा ली है मन के इस भंवर में पड़कर अपने 'स्व' को भूल कर इस सहज जीवन को कठिन बना लिया है। इसलिए हमेशा मन अशांत और विचलित रहता है। इस अशांति के कारण ही वह समय से पहले ही मानसिक और अन्य कई बीमारियों से ग्रसित होता जा रहा है। मन की इस प्रवृति को शान्त करके ही इस भंवर से निकल सकता है। मंत्र–जप योग इस परिस्थिति से निकालने में सहायक साधन के रूप प्रयुक्त होता है। मंत्र–जप योग मानसिक स्थलीकरण करके मानसिक तनाव को कम करता है, जिससे मानवीय चेतना की अति सक्रियता कम होती है। फलस्वरुप तनाव समाप्त होता है। जिसका शारीरिक स्तर पर भी गहरा फायदा मिलता है। अतः अपने जीवन को शांत और योगमय बनाने के लिए मंत्र जप योग का अभ्यास करना चाहिए। मंत्र योग के निरंतर जप से आत्मा का परमात्मा से मिलन होता है, जो योग की सर्वोच्च आवश्यकता, आध्यात्मिक उपलब्धि और अंतिम लक्ष्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. स्वामी, शिवानन्द, (1986) जप योग, पृष्ठ – 58, प्रकाशन दिव्य जीवन संघ।
2. गौतम, डॉ. चमन लाल, (1977), मंत्र योग, प्रकाशक–संस्कृति संस्थान, बरेली, यू.पी।
3. अज्ञात, (2004), योग विज्ञान, पृष्ठ –17, 65 प्रकाशन पीतांबरा संस्कृत परिषद, दतिया।
4. आचार्य, श्रीराम शर्मा, (2010), ब्रह्मावर्चस्व की पचांग्नि विद्या, पृष्ठ –138, 111 प्रकाशन – युगनिर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा।
5. प्रभुपाद, ए.सी. भक्ति वेदान्त स्वामी, श्रीमद्भगवत गीता यथारूप, पृष्ठ 281, प्रकाशन–भक्ति वेदांत बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धाम जूहू, मुंबई।
6. रामचरितमानस, दोहा–21 श्री बालकांड, गीता प्रेस गोरखपुर।
7. योग सूत्र–1.27
8. योग सूत्र –1.28

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

January

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

February

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
				1	2	3
4	5	6	7	8	9	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29		

March

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
					1	2
3	4	5	6	7	8	9
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

April

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
31	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30				

May

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	1

June

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
30						1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 7.523

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

HOD Hindi, Tantia University, Sriganganagar, Raj.

M. : 8708822674, 9466532152

Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Email : grsbohal@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, राजस्थान से प्रसारित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 4.553

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal

Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :

Dr. Rekha Soni, Vice Principal, Education, Tantia University, Sriganganagar, Raj.

M. 9828531975

Website : www.ginajournal.com

Email : grngobwn@gmail.com

July

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
30	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

August

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
				1	2	3
4	5	6	7	8	9	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

September

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30					

October

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
29	30	1	2	3	4	5
6	7	8	9	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30	31		

November

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
					1	2
3	4	5	6	7	8	9
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

December

Su	Mo	Tu	We	Th	Fr	Sa
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

Holidays 2024 Calendar

Jan 13	Lohri	Mar 24	Holi	Apr 17	Ram Navmi	Aug 19	Raksha Bandhan	Oct 17	Valmiki Jayanti
Jan 14	Makar Sakranti	Mar 25	Dhulendi	Apr 21	Mahavir Jayanti	Aug 26	Krishna Janmashtam	Nov. 01	Deepawali
Jan 26	Republic Day	Mar 29	Good Friday	May 23	Budh Purnima	Sept. 07	Ganesh Chaturthi	Nov. 02	Goverdhan Pooja
Feb 14	Basant Panchmi	Apr 11	Id-Ul-Fitar	June 17	Id-Ul-Zuha	Sep 17	Id-E-Milad	Nov. 03	Bhaiya Dooj
Feb 24	Ravidas Jayantu	Apr 13	Baisakhi	July 17	Moharram	Sep 17	Anant Chaturdashi	Nov. 07	Chhath Puja
Mar 08	Maha Shivratri	Apr 14	Ambedkar Jayanti	Aug 15	Independ. Day	Oct. 02	Gandhi Jayanti	Nov. 15	Guru Nanak Birthday
						Oct 12	Dushehara	Dec. 25	X Mas Day

MBP-BWN

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना देवी शोध संस्थान के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, भिवानी से छपवाकर सम्पादकीय कार्यालय 6-एच 30, जवाहर नगर, श्रीगंगानगर, राजस्थान-335001 से वितरित की।

ISSN 2321:8037